हिन्दुस्थान में मदरसे

सांस्कृतिक गौरव संस्थान
Sanskritik Gaurav Sansthan

लेखक : देवेन्द्र मित्तल

सहयोग राशि 120/–

प्रकाशक :
सांस्कृतिक गौरव संस्थान
डाकपेटी सं 5016, सेक्टर 5, रामकृष्णपुरम्,
नई दिल्ली 110022
दूरभाष : 26195368, 26181315

लेखक :
देवेन्द्र मित्तल

सहयोग राशि :
120/–

मुद्रक :
एक्सेलप्रिंट
सी–36, फ्लेटेड फैक्ट्री कॉम्प्लेक्स
झण्डेवालान, नई दिल्ली–110055

विषय सूची

	पृष्ठ
प्रस्तावना	I-II
प्राक्कथन	III-IV
अध्याय 1	
कुरआन और इस्लाम	1–9
अध्याय 2	
पैगम्बर मोहम्मद	10–19
अध्याय 3	
जिहाद	20–43
अध्याय 4	
इस्लाम के मदरसे	44–78
अध्याय 5	
मध्य एशियाई तेल–मदरसों का अपूर्व विस्तार	79–90
अध्याय 6	
तबलीगी ज़मात–जिहादी कार्य प्रणाली	91–100
अध्याय 7	
मुसलमानों की बढ़ती जनसंख्या व पिछड़ापन	101–112
अध्याय–8	
जिहादी संगठन तथा बुद्धिजीवियों के विचार	113–138
अध्याय 9	
मुस्लिम शासन काल में मदरसों की भूमिका	139–166
अध्याय 10	
शाह वलीउल्लाह का भारत के इस्लामीकरण में विशेष योगदान	167–176
अध्याय 11	
संविधान सभा में चेतावनी	177–182
अध्याय 12	
मदरसों की कुछ अन्य जानकारी	183–192
अध्याय 13	
मदरसों में प्रस्तावित सरकारी सुधार–संभावनाएं	193–204
यहूदी के साथ मदीना की संधि 623 ईं	205–206
अल–हुदयबिया की संधि 628 ई.	207–208

प्रस्तावना

मदरसे इस्लामी शिक्षा के केन्द्र होते हैं। इस शिक्षा प्रणाली की शुरुआत स्वयं पैगम्बर मोहम्मद ने की थी। वे स्वयं मदीना स्थित मस्जिद में कुरआन आधारित शिक्षा देते थे। पैगम्बर के निधन के पश्चात् खलीफाओं ने मदरसा प्रणाली को आगे बढ़ाया तथा मदरसे मस्जिद से अलग स्थानों पर स्थापित किए जाने लगे।

हिन्दुस्थान में मदरसों की शुरुआत इस्लामी शासन स्थापित होने के साथ–साथ हुई। जहाँ–जहाँ मुस्लिम शासन बढ़ा वहीं मदरसे स्थापित होते गए। हिन्दुस्थान पर राज्य करने वाले अधिकांश मुस्लिम शासक अनपढ़ थे तथा उन्हें इस्लाम मज़हब का विशेष ज्ञान न होता था। इसी कारण मदरसों में पढ़े उलेमाओं का शासक पर निरतंर दबदबा बना रहता था। मुक्ष्यतया मदरसों में पढ़े इस्लामी विद्वानों को सरकारी नौकरियों में ऊँचे पदों पर नियुक्त किया जाता था। ये अधिकांश विदेशी मुसलमान ही होते थे। छोटे वर्ग के हिन्दुस्थानी मुसलमानों को नौकरियों में नियुक्त नहीं किया जाता था। उलेमा, जो मज़हब के ज्ञाता माने जाते थे, सुल्तानों को मज़हब के अनुसार शरिया कानून आधारित शासन करने पर विवश करते थे। किसी भी शासक को उलेमानों के खिलाफ चलने की हिम्मत न होती थी। केवल अकबर अकेला ऐसा बादशाह हुआ जिसने उलेमा वर्ग द्वारा बताए रास्ते पर चलने से इंकार किया। इसी कारण इस्लामी विद्वान आज भी मोहम्मद–बिन–कासिम, महमूद गज़नी, मोहम्मद गौरी, बाबर, औरंगज़ेब या टीपू सुल्तान पर जो कट्टर मुस्लिम शासक रहे, नाज़ करते है लेकिन सम्राट अकबर पर नहीं।

शासकों पर उलेमा सर्वदा कड़ी नज़र रखते थे और जब–जब शासन में विकृतियाँ आईं मदरसों में पढ़े इन्हीं उलेमाओं ने सभी प्रकार के जिहादी तरीके अपनाए और स्थिति को संभाला। मुख्यतया ऐसा दो बार देखने को मिला। पहला तो जब अकबर ने शरिया कानून आधारित शासन न किया तथा उलेमाओं की न चली तो अकबर के निधन के तुरंत बाद मौलाना शेख अहमद सरहिन्दी ने कमांड संभाली और अपनी पूरी ताकत लगाकर जहाँगीर को विवश किया कि वह अकबर (अपने पिता) के रास्ते पर न चले तथा केवल शरिया कानून आधारित शासन करे। मौलाना सरहिन्दी के प्रयत्नों के फलस्वरूप जहाँगीर ने वायदा किया तथा मौलाना की राय मान ली। दूसरा अवसर औरंगज़ेब के मरने के बाद आया जब अगले 50 वर्षों में 11 मुगल शासक दिल्ली की गद्दी पर बैठे तथा मुगल शासन डगमगाने लगा।

तुरंत 18वीं शताब्दी के विख्यात, मुस्लिम जगत के जाने–माने उलेमा शाह वलीउल्लाह ने जो हिन्दुस्थान में जन्मे थे, अफगानिस्तान के बादशाह अहमद शाह अब्दाली को निरंतर पत्र लिखकर हिन्दुस्थान पर आक्रमण करवाया ताकि मुस्लिम शासन पुनः मज़बूत हों तथा दूसरी ताकतों (मथुरा के जाट, पंजाब के सिख व महाराष्ट्र के मराठाओं) को कुचला जा सके।

शाह वलीउल्लाह दिल्ली के प्रसिद्ध मदरसे रहीमिया में हदीस की शिक्षा देते थे जिसे उनके उत्तराधिकारियों ने चालू रखा जिससे वह देश का प्रसिद्ध मदरसा बना रहा। 19वीं शताब्दी में इसी मदरसे में पढ़े विशिष्ट इस्लामी ज्ञानी सईद अहमद ने सन् 1826 ई. में 2400 कि.मी. का दुर्गम रास्ता पार करके अपने अनेक साथियों (मौलानाओ व मौलवियों) को साथ लेकर उस काल के हिन्दुस्थान के उत्तर–पश्चिमी भाग (अब पाकिसतान में) जाकर सिख ताकतों के साथ तलवारों द्वारा जिहाद किया। शाह वलीउल्लाह द्वारा स्थापित मदरसे से निकले मौलाना नानौतवी ने 19वीं शताब्दी में देवबंद में मदरसा स्थापित किया, जो आज एक विश्व विख्यात मदरसा है। पाकिस्तान के लगभग 60 प्रतिशत मदरसे इसी देवबंद प्रणाली पर आधारित हैं। समस्त पाकिसतानी तालिबान इन्हीं मदरसों से पढ़े इस्लामी ज्ञानी है जिन्होंने पहले अफगानिस्तान में घुसकर रूस की सेनाओं से टक्कर ली और अब पाकिस्तान में शरिया कानून लगाने के लिए पाकिस्तानी फौज से टक्कर ले रहे है तथा जिहाद कर रहे हैं। समस्त विश्व इनके कार्यकलाप को देख रहा है। इन सबका विस्तृत विवरण इस पुस्तक में पाठकगण पढ़ेंगे।

इस ज्ञानवर्धक पुस्तक में जिन महानुभावों की रचनाओं से और विचार–विमर्श के द्वारा मार्गदर्शन हुआ है तथा उनमें से कहीं–कहीं कुछ अंश लिए गए हैं वे हैं–आदरणीय वयोवृद्ध विद्वान् श्री पुरुषोत्तम योग जी (लखनऊ), नदवातुल मदरसा लखनऊ के रेक्टर मौलाना अबुल हसन अली नदवी (अली मियां), इस्लामी विद्वान् स्व. अनवर शेख (इंग्लैंड), इब्नवराक, स्व. विलियम म्यूर, आदरणीय श्री कृष्णवल्लभ पालीवाल आदि।

मैं स्व. श्री जी.पी. श्रीवास्तव जी का विशेष नामोल्लेख करना अपना पवित्र कर्तवय समझता हूँ जिन्होंने मुझे इस्लाम को जानने के लिए प्रेरित किया।

–देवेन्द्र मित्तल

तिथि : गुरु पूर्णिमा, आषाढ़ 2066 वि.

दिनांक : 7 जुलाई 2009

प्राक्कथन

शब्दकोशीय अर्थ में मदरसा शब्द अरबी भाषा का शब्द है जिससे यह आभास होता है कि अमुक स्थान शिक्षा का एक केन्द्र है यानि वह एक पाठशाला/स्कूल है। हिन्दुस्थान का सामान्यजन तो यही समझता है कि साधरणतया मदरसे शिक्षा के केन्द्र हैं जहाँ मुसलमानों के बालकों और किशोरों आदि को इस्लाम और कुरआन की शिक्षा दी जाती है। अरबी भाषा के अनुसार मदरसे में पढ़ने वालों को तालिब–ए–इल्म यानि विद्यार्थी कहा जाता है। यहीं से मदरसो ंकी सच्चाई सामने आने लगती है।

प्रस्तुत पुस्तक में विद्वान लेखक श्री देवेन्द्र कुमार मित्तल ने मदरसों की शिक्षा प्रणाली और मदरसों के संबंध में विश्व के अनेक विद्वानों के विचारों के आलोक में बड़ी तार्किकता और सतर्कता से मदरसों के भीतर उपजने वाले इन तालिब–ए–इल्म यानि तालीबान की सच्चाई का इस्लाम के प्रति अन्जान और अंधेरे में रहने वाले हिन्दुस्थानियों के समक्ष खुलासा करने का सफल प्रयत्न किया है।

11 सितम्बर 2001 को अमेरिका (न्यूयार्क) में ट्विन टॉवर पर आक्रमण के पश्चात् पाकिस्तान के तत्कालीन राष्ट्रपति जनरल परवेज़ मुर्शरफ ने अपने टीवी प्रसारण में पाकिस्तानी जनता को संबोधित करते हुए मदरसों के पंजीकरण की बात कही जिससे सरकार उन पर नियंत्रण कर सके। इस प्रयास का मौलानाओं ने घोर विरोध किया और तर्क दिया कि मदरसे सैंकड़ों वर्षों से चलाए जा रहे हैं और सरकारों द्वारा इन पर कभी नियंत्रण नहीं किया गया। विगत कुछ वर्षों से यूरोप और अमेरिका में भी इन मदरसों पर अंगुलियाँ उठाई जाने लगीं। सांस्कृतिक गौरव संस्थान ने जो भारत के संविधान के अनुच्छेद 51क के लिए काम कर रहा है मदरसों में दी जाने वाली शिक्षा पर शोध करना/कराना प्रारंभ किया, क्योंकि इसका संबंध भारत की एकता, अखण्डता और संप्रभुता से है।

पुसतक के विभिन्न अध्यायों में 'इस्लाम के मदरसे', 'मध्य एशियाई तेल–मदरसों का अपूर्व विस्तार', 'तबलीगी जमात–जिहादी कार्य प्रणाली', 'जिहादी संगठन तथा बुद्धिजीवियों के विचार', 'मुस्लिम शासनकाल में मदरसों की भूमिका', 'शाह वलीउल्लाह का भारत के इस्लामीकरण में विशेष योगदान', 'संविधान सभा में चेतावनी जो नकार दी गई और घातक परिणाम स्पष्ट है', मदरसों की कुछ अन्य जानकारियाँ', 'मदरसों में प्रस्तावित सरकारी सुधार : संभावनाएं' आदि में मदरसों की असलियत का पूरी तरह खुलासा किया है।

श्री देवेन्द्र कुमार मित्तल भारत सरकार में आकाशवाणी महानिदेशालय के निदेशक (इंजीनियरी) थे। सेवा निवृत्ति के पश्चात् उन्होंने हिन्दुस्थान में इस्लाम के अनुयायियों द्वारा यहाँ के हिन्दू निवासियों पर सैंकड़ों वर्षों तक किए गए लोमहर्षक अत्याचारों के इतिहास को गहराई से जाना ओर जान कर उसके कारणों की खोज का गंभीर प्रयत्न आरंभ किया। उस गंभीर अध्ययन, मनन और चिंतन के फलस्वरूप यह विलक्षण पुस्तक समाज के उन वर्गों के समक्ष आई है जो सामान्यतः मदरसों के संबंध में आँख मूँदे रहते हैं।

इस पुस्तक के सृजन में श्री मित्तल के प्रयासों की सराहना दो शब्दों में व्यक्त नहीं की जा सकती किन्तु इस कार्य में संस्थान के उपमहामंत्री श्री महेन्द्र कुमार अग्रवाल, श्रीमती वंदना चटर्जी आदि का सहयोग विशेष रूप से उल्लेखनीय रहा है जिनके प्रति संस्थान और श्री मित्तल समान रूप से आभार प्रकट करते हैं। पुस्तक में जिन लेखकों के लेखन से सहायता ली गई है, जिनका उल्लेख पुस्तक में यथा स्थान किया गया है, उनके प्रति भी हम संस्थान की ओर से आभार व्यक्त करते है। संस्थान के न्यासी मण्डल और संस्थान की प्रबंध समिति के सदस्यों के प्रति हम कृतज्ञ हैं जिन्होंने इस पुस्तक के प्रकाशन की स्वीकृति प्रदान की।

–डॉ. महेश चन्द्र

तिथि : गुरु पूर्णिमा आषाढ़ 2066 वि. महामंत्री

दिनांक : 7 जुलाई 2009

अध्याय-१

''मदरसे'' इस्लाम के अनुयायियों को मज़हबी तालीम देने के केन्द्र बिन्दु हैं। इन शिक्षा केन्द्रों में इस्लाम से संबंधित सभी विषयों की तालीम दी जाती है। ऐतिहासिक दृष्टि से भी मदरसे 'मुस्लिम सभ्यता' के केन्द्र बिन्दु रहे हैं तथा इन्हीं के द्वारा इस्लाम का प्रचार व प्रसार एक पीढ़ी से अगली पीढ़ी तक चलाया जाता रहा है। ''उलेमा'' इस्लामी तालीम के विशिष्ट विद्वान् होते हैं और इन्हीं के द्वारा इस्लाम मज़हब की पद्धति निरंतर पीढ़ी–दर–पीढ़ी चलाई गई है। इसी कारण उलेमाओं का मुस्लिम समाज पर आधिपत्य बरकरार रहा है। प्रारंभिक काल में मदरसों में पढ़ाई कुरआन आधारित रहती थी। ''मदरसा' प्रणाली की शुरुआत स्वयं पैगम्बर ने की। पैगम्बर मदीना मस्जिद में अपने अनुयायियों को कुरआन आधारित तालीम देते रहे। यही पद्धति पैगम्बर के बाद 'खलिफाओं' ने अपनाई। जैसे–जैसे इस्लाम का तेज़ी से विस्तार अरब क्षेत्रों से बाहर बढ़ा, राजकाज तथा प्रशासन चलाने के लिए विद्वानों की आश्यकता स्पष्ट दिखने लगी। फलस्वरूप 'मदरसे' मस्जिदों से अलग स्थानों पर स्थापित करना आवश्यक समझा गया। अलग–अलग स्थानों पर मदरसे स्थापित किए जाने लगे।

देश के प्रत्येक नगर, कस्बे व गाँव जहाँ मुसलमान रहते हैं, ये मदरसे स्थापित हो गए हैं। अनेक स्थानों पर मदरसे मस्जिदों से ही चलाए जाते हैं। मदरसों में क्या तालीम दी जाती है, जानने के लिए इस्लाम मज़हब की पूर्ण जानकारी आवश्यक है। इस मज़हब की पवित्र पुस्तक है 'कुरआन', जिसे मुसलमान अल्लाह द्वारा भेजा हुआ शब्द मानते हैं। कुरआन में कुल 114 अध्याय (सुरा) हैं तथा 6347 आयतें (वर्सेज़) हैं। कुरआन पैगम्बर मोहम्मद को अवतरित हुई। साथ–साथ पैगम्बर मोहम्मद की जीवनी, उनका प्रत्येक कार्य मुस्लिम जगत का प्रेरणा–स्रोत है।

''हदीस'' पैगम्बर मोहम्मद की मृत्यु के पश्चात् (खलीफाओं द्वारा) निरंतर एक शताब्दी तक किए गए प्रयत्नों के फलस्वरूप पैगम्बर द्वारा कहा या अपने जीवनकाल में अपनाए तौर–तरीकों तथा विभिन्न मुद्दों पर दी गई अपनी राय एवं फैसले की विस्तृत जानकारी है। 'हदीस' आमबोलचाल की भाषा में कुरआन का व्यावहारिक विश्लेषण है तथा इसका महत्त्व कुरआन के बराबर है। मदरसों की पढ़ाई में कुरआन के साथ–साथ हदीस पढ़ाने में विशेष रुचि ली जाती है।

कुरआन तथा इस्लाम

'इस्लाम' मज़हब है और इस मज़हब में एक ही अल्लाह तथा कुरआन को अल्लाह का शब्द मानना अनिवार्य है। मुसलमान वह है जो इस मज़हब को दिल से स्वीकार करता है। सैयद अथर हुसैन द्वारा लिखित पुस्तक मुस्लिम पर्सनल लॉ – एन एक्सपोज़िशन'' पृष्ठ 19 के अनुसार ''कुरआन अल्लाह की अनोखी देन है। यह तो मानवता की उन्नति के लिए सोची समझी रणनीति के अंतर्गत; जिसमें जीवन के मज़हबी, भौतिक, आध्यात्मिक तथा अन्य सभी पहलुओं की संपूर्ण आचार–संहिता है; एक जीवन प्रणाली है। इसके अतिरिक्त यह अपने अनुयायियों में किसी प्रकार का भेदभाव चाहे वह विभिन्न देशों या रंग के हों, नहीं करती। इस्लाम ऐसा अनोखा मज़हब है जिसमें गहराई से वर्णित राजनीति, युद्ध, अर्थ और न्यायिक नियम शामिल हैं।'' मज़हबी मुसलमान हर समय इन नियमों का पालन करने के लिए प्रयत्नशील रहता है। इसी कारण इस्लाम का मुसलमानों के राजनीतिक जीवन पर सीधा प्रभाव सर्वदा स्पष्ट दिखता है।

कुरआन स्वयं कहती है कि इसको अवतरित करने वाला स्वयं अल्लाह है – यानि कुरआन में अल्लाह की वाणी है। कुरआन में स्वयं पैगम्बर मुहम्मद कभी नहीं बोलते।

''यह किताब यही है (जिसका वादा किया गया था), जिसमें कोई संदेह नहीं, मार्गदर्शन है, डर रखने वालों के लिए'' (कु. 2 : 2)

''जिन लोगों को ज्ञान प्राप्त हुआ है वह स्वयं देखते हैं कि जो कुछ तुम्हारे रब की ओर से तुम्हारी ओर अवतरित हुआ है वही सत्य है, और वह उसका मार्ग दिखाता है जो प्रभुत्वशाली, प्रशंसा का अधिकारी है'' (कु. 34 : 6)

याद रखना चाहिए कि पैगम्बर मुहम्मद के जीवन काल में ऐसी कई समस्याएं आईं जब उन्हें तत्काल कुरआन के आदेश अवतरित होने की प्रतीक्षा करनी पड़ी। अनुयायियों का दृढ़ विष्वास है कि कुरआन अल्लाह द्वारा ही भेजी गई है।

कुरआन अपने बारे में स्वयं क्या कहती है

अल्लाह के नाम से जो बड़ा कृपाशील, अत्यंत दयावान है– आलिफ. लाम. रा।

यह एक किताब है जिसे हमने तुम्हारी ओर अवतरित की है, ताकि तुम मनुष्यों को अँधेरों से निकालकर प्रकाश की ओर ले आओ, उनके रब की अनुमति से प्रभुत्वशाली, प्रशंस्य सत्ता, उस अल्लाह के मार्ग की ओर जिसका वह सब है जो कुछ आकाशों में है और जो कुछ धरती में है। इनकार करने वालों के लिए तो एक कठोर यातना के कारण बड़ी तबाही है। (कु. 14 : 1 : 2)

आलिफ.लाम.रा.। यह एक किताब है जिसकी आयतें पक्की हैं फिर सविस्तार बयान हुई हैं; उसकी ओर से जो अत्यंत तत्त्वदर्शी, पूरी खबर रखने वाला है।

(कु.11 : 1)

वास्तव में यह कुरआन वह मार्ग दिखाता है जो सबसे सीधा है और उन मोमिनों को, जो अच्छे कर्म करते हैं, शुभ सूचना देता है कि उनके लिए बड़ा बदला है। (कु. 17 : 9)

उसका अवतरण सारे संसार के रब की ओर से है। फिर क्या तुम उस वाणी के प्रति उपेक्षा दर्शाते हो? और तुम इसको अपनी वृत्ति बना रहे हो कि झुठलाते हो? (कु. 56:80–82)

कुरआन पैगम्बर मुहम्मद को अवतरित हुई : लिखे जाने के बाद यह मुसलमानों की मज़हबी किताब बनी तथा अल्लाह द्वारा भेजी होने के कारण इस्लामिक कानून का एक प्रामाणिक स्रोत बना।

इस्लामिक परम्परा ऐसी बनी कि पैगम्बर मुहम्मद के एक–एक बयान तथा उनका कार्यकलाप कई पीढ़ियों तक तो ज़बानी और बाद में लिखित रूप में अनुयायियों को मिले। इस्लाम में यह हदीस या सुन्ना नाम से प्रसिद्ध है। हर मुसलमान इसके बताए मार्ग पर चलने को बाध्य है। इनको तथा अवतरित कुरआन को मिलाकर तथा इसमें अनेक मिसाल (समानता, तुल्यता) एवं विद्वानों की राय को जोड़कर मुसलमानों का कानून ''शरिया'' बना। स्पष्ट है कि शरिया का बुनियादी आधार कुरआन है और उसका स्वयं अल्लाह के पाक पैगम्बर द्वारा किया विश्लेषण शरीया का मुख्य आधार है। मुसलमानों के अनुसार अल्लाह का यह कानून समस्त मानवता के लिए है।

कुरआन अनुयायियों को सतर्क करती है कि विश्वासियों को तो सफलता मिलेगी तथा गैर–विश्वासियों को नरक में जाना होगा।

हम कुरआन में से जो उतारते हैं वह मोमिनों के लिए शिफ़ा (आरोग्य) और दयालुता है किन्तु ज़ालिमों के लिए तो वह बस घाटे में ही अभिवृद्धि करता है। (कु. 17:82)

अल्लाह कहता है कि – ''.... आज मैंने तुम्हारे लिए तुम्हारे धर्म को पूर्ण कर दिया और तुम पर अपनी नेमत पूरी कर दी और मैंने तुम्हारे लिए धर्म के रूप में इस्लाम (अर्थात् अल्लाह का आज्ञा पालन, जिसमें पूरा जीवन अल्लाह की इच्छा के अनुसार व्यतीत करना होता है) को पसंद किया – तो जो कुछ भूख से विवश हो जाए, परन्तु गुनाह की ओर उसका झुकाव न हो, तो निश्चय ही अल्लाह अत्यंत क्षमाशील, दयावान है।'' (कु. 5.3)

इस घोषणा के बाद विचारकों के जो कुछ भी आपसी विवाद थे, वे समाप्त हो गए। कुरआन 1400 वर्ष पूर्व एक ऐसे मनुष्य की ज़बान से अनुयायियों के लिए बुलाई गई जो स्वयं अनपढ़ था। **यह मार्गदर्शन जिसे इस्लाम कहा जाता है अल्लाह का मानवता को वरदान है।** कुरआन कहती है – ''वही है जिसने उम्मियों

(अर्थात् उनके बीच जिनके पास कोई आसमानी किताब न थी और उनमें से अधिकांश बेपढ़े–लिखे थे) में से ही एक रसूल उठाया जो उन्हें उसकी आयतें पढ़कर सुनाता है, उन्हें निखारता है और उन्हें किताब और हिकमत (तत्वदर्शिता) की शिक्षा देता है, यद्यपि इससे पहले तो वे खुली हुई गुमराही में पड़े हुए थे। (कु.62–2)

मुस्लिम आलिमों का मानना है कि कुरआन के प्रत्येक शब्द को शुद्धता के साथ बिना किसी मिलावट के सुरक्षित रखा गया है, और इसमें (कुरआन) सत्य वर्णित होने से कोई भी बदलाव संभव नहीं।

इस्लाम में अनुयायियों द्वारा किया गया प्रत्येक कर्म मज़हबी मापदण्ड, अच्छे इरादे, पवित्र भावना और शुद्ध तरीके से किया जाता है। ए.ए.बिरोही अपने लेख ''द कुरआन एण्ड इट्स इम्पैक्ट ऑन ह्यूमन हिस्ट्री'' के अनुसार ''कुरआन में अनेक संदर्भ हैं जिसमें ऐसे समाज को विकसित करना है जो न्यायसंगत हो, न्याय पर आाधारित हो। कुरआन इस बात की सच्ची गवाही है और सबको यह विश्वास करना चाहिए कि अल्लाह का वास्तव में अस्तित्व है और मोहम्मद उसका पैगम्बर है। कुरआन आशाओं की ऐसी किरण भी है जिसमें पर्वरदिगार की झाँकी प्रस्तुत होती है जो त्रुटियों को क्षमा प्रदान करने वाला तथा सुरक्षा देने वाला है।''

''कुरआन का पूरा महत्व समझने के लिए तीन आवश्यकताओं पर गौर करना चाहिए।

1. इसका सैद्धांतिक आधार
2. इसमें वर्णित सामग्री ''जो कुछ वर्णित है''
3. इसका रुहानी जादू या इसकी जादूई शक्ति

''कुरआन तो वास्तव में मानवता द्वारा समस्त सोच तथा विचारों की तस्वीर है तथा इसी के द्वारा अनुयायियों में शांति तथा सुख का अनुभव होता है।''

इस्लाम

इस्लाम एक संपूर्ण जीवन–व्यवस्था है जो मनुष्य के सर्वांगीण जीवन का परिचालन करती है। इस्लाम मनुष्य के जीवन काल में उसकी सामाजिक, भौतिक, नैतिक, आर्थिक, राजनीतिक, कानूनी, सांस्कृतिक, राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय समस्याओं में मार्गदर्शन करता है। ... इस कारण इसको बार–बार दोहराने में कोई हानि नहीं है कि **वह एक संपूर्णतया संगठित जीवन प्रणाली है।** .... मज़हबी और मज़हब के अलावा दूसरे विषयों से संबंधित भी। वह एक प्रकार के विश्वासों का संग्रह भी है और इबादत की एक विशेष पद्धति भी। यह कानून का एक संपूर्ण तंत्र भी है, एक संस्कृति भी और व्यवसाय का एक तरीका भी। यह एक विशेष प्रकार का समाज भी है और परिवार को चलाने का एक दर्शन भी। इसके उत्तराधिकार और तलाक के

विषय में अपने नियम हैं। यह एक आध्यात्मिक और भौतिक संपूर्णता है, इहलौकिक भी और पारलौकिक भी। (जी.एच. जॉन्सन : मिलिटेंट इस्लाम पेज–17)।

इस्लाम एक सुधार आन्दोलन है

उपर्युक्त विशेषताओं के साथ–साथ इस्लाम की एक विशेषता उसका यह विश्वास है कि मुसलमान का स्वयं निष्ठापूर्वक मज़हब पालन करने मात्र से ही उसके मज़हबी दायित्व की पूर्ति नहीं हो जाती। उसके पैगम्बर और अनुयायियों को दूसरे सभी धर्मों, संस्कृतियों और मानवकृत संविधानों को मिटाकर इस अल्लाह प्रदत्त मज़हब, संस्कृति और इस्लामी शासन (शरियत) की स्थापना का कार्य अल्लाह द्वारा सौंपा गया है। इसको अंजाम देकर ही वह सही अर्थों में मुसलमान समझा जा सकता है। इसलिए इस्लाम विश्व में चलाए गए आज तक के सभी सुधार आन्दोलनों में सबसे बड़ा और लंबा सुधार आन्दोलन है। यह किसी एक जाति, समुदाय, देश अथवा काल तक सीमित नहीं है। इसका जन्म तो पूरी मानवता में कयामत तक चलने का दावा लेकर हुआ है। यह अपने को अल्लाह से जिब्राइल फरिश्ते द्वारा सीधे–सीधे पैगम्बर मोहम्मद पर अवतरित होने की घोषणा करता है। अल्लाहकृत होने के कारण इसमें किसी दोष की कल्पना ही नहीं की जा सकती। उनका यह मानना है कि यह अपने में संपूर्ण है और इसलिए इसमें किसी सुधार अथवा फेरबदल की भी गुंजाइश नहीं है। इसका ध्येय तो सभी दूसरे मत–मतान्तरों को जिन्हें यह झूठा करार देता है और दूसरी संस्कृतियों (हिन्दू, बौद्ध, ईसाई, तथा सभी पुरातन और आगे आने वाली नईं संस्कृतियों) को जिन्हें वह अंधकार/अज्ञान की उपज मानता है जड़ मूल से नष्ट कर इस्लाम मत, इस्लामी संस्कृति और इस्लामी राज्य स्थापित करने की ज़िम्मेदारी है। **एम.आर.ए.बेग अपनी पुस्तक ''मुस्लिम डायलमा इन इंडिया''** में इसकी पुष्टि करते हुए लिखते हैं कि इस्लाम का जन्म ही सब दूसरे धर्मों/पंथों को समाप्त करना है।

यद्यपि इस्लाम जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अपने विशिष्ट प्रकार के सुधार लाना चाहता है परन्तु इसके आन्दोलन का सर्वप्रथम और सबसे महत्वपूर्ण अंग है पृथ्वी में प्रचलित अल्लाह के अतिरिक्त सभी प्रकार की मूर्तियां और बहुदेवता पूजा को समूल नष्ट कर देना और इनके स्थान पर इस्लामी मत, इस्लामी संस्कृति और शरीयत शासन की स्थापना करना।

<u>इस्लाम में मजहब और राजनीति का अद्‌भुत सम्मिश्रण</u> :

इतने व्यापक बदलाव केवल प्रवचन और उपदेश से संभव नहीं है। इसलिए इन बदलावों को लाने के लिए इस्लाम का राज्यसत्ता पर अधिकार करना आवश्यक और अनिवार्य है। उसके लिए मुसलमानों को प्रवचनों, लेखों, पुस्तकों, भाषणों द्वारा प्रचार, लोभ, धमकी इत्यादि अनेक साधन और यदि इन सबसे ध्येय प्राप्ति की संभावना न हो और परिस्थितियां अनुकूल हों तो सशस्त्र जिहाद (तलवार से युद्ध)

की आज्ञा देता है। इस कारण इस्लाम में मज़हब और राजनीति इस प्रकार गूंथ दिए गए हैं कि एक को दूसरे से पृथक करना असंभव है।

इस्लाम के प्रख्यात मज़हबी विद्वान स्वीकार करते हैं कि इस्लाम का सत्ता पर अधिकार करने का ध्येय सत्ता सुख भोगना अथवा वैयक्तिक स्वार्थवश नहीं है। उसका ध्येय है राज्य शक्ति का उपयोग इस्लाम की स्थापना और उसकी उन्नति के लिए करना। यह कहने में कोई अतिशयोक्ति नहीं है कि इस्लाम में शासन और शासक मज़हब का ऐसा गुलाम है जो अपनी गुलामी में गर्व और धर्मनिष्ठा का अनुभव करता है।

<u>सुधार आन्दोलन का अर्थ है कुप्रथाओं का उन्मूलन</u> :

सुधार आन्दोलन का अर्थ ही यह है कि उन प्रथाओं, दर्शनों और विचारों के प्रति लोगों के मन में घृणा उत्पन्न करें जिनके विरुद्ध वह आन्दोलन कर रहा है। जैसे भी हो लोगों को उन कुप्रथाओं, दर्शनों और विचारों से मुक्त कर दें। भारत में इस्लाम का यह पक्ष बहुत महत्वपूर्ण स्थान रखता है। इस्लाम के आन्दोलन का केन्द्र बिन्दु है मूर्ति और देवतापूजा का उन्मूलन और मानवकृत संविधान के स्थान पर अल्लाह द्वारा अवतरित शरियत शासन की स्थापना, जबकि भारत में रहने वाले बहुसंख्यक हिन्दू तो मूर्ति और बहुदेवता पूजक हैं और यहां एक जनतांत्रिक संविधान के अनुसार राज्य व्यवस्था चलती है। हिन्दू अल्लाह को एक मात्र उपास्य नहीं मानते हैं। हिन्दुओं का यह विश्वास है कि सत्य तक (सुप्रीम पावर तक) पहुँचने के अनेक रास्ते हैं कोई किसी भी रास्ते से वहाँ तक पहुँच सकता है, इसलिए केवल एक ही रास्ते को ठीक कहना, यह ठीक नहीं है। उनकी यह सहिष्णुता इस्लाम के विरुद्ध है, इसी कारण हिन्दू अल्लाह और उसके रसूल दोनों के घोर शत्रु बन जाते हैं।

निम्नलिखित कुरान की आयतों को देखें जिससे इस्लाम अल्लाह के अलावा किसी और को पूजने की इजाज़त ही नहीं देता।

1. और (वे मूर्तियां) जिन्हें वह अल्लाह के बदले पुकारते हैं वे किसी चीज़ को भी पैदा नहीं करते बल्कि वह स्वयं पैदा किए जाते हैं। (कुरआन : 16: 20)
2. (कहा जाएगा) निश्चय ही तुम और वह जिसे तुम अल्लाह के बदले में पूजते हो, जहन्नुम (दोज़ख) का ईंधन है। तुम अवश्य उसमें झोंके जाओगे। (कुरान : 21:98)
3. यदि यह पूज्य होते, तो उसमें न उतरते और यह सब उसमें सदैव रहेंगे भी। (कुरआन : 21:99)
4. वहाँ उनके भाग्य में कलपना और रोना ही बदा है। वहाँ उन्हें कान पड़ी आवाज़ भी सुनाई नहीं देगी। (21:100)
5. धिक्कार है तुम पर, और उन पर भी जिनको तुम अल्लाह के स्थान पर पूजते

हो। क्या तुम्हें बिल्कुल भी बुद्धि नहीं है ? (कुरान : 21: 67)

मूर्ति और देवता पूजा करना इतना बड़ा पाप है कि इसको अल्लाह भी क्षमा नहीं करता

1. निःसंदेह इसको अल्लाह क्षमा नहीं करता कि किसी को उसका सहभागी ठहराया जाए और इसके सिवा जो कुछ (पाप) है उसे जिसके लिए चाहेगा क्षमा कर देगा। और जो कोई अल्लाह का सहभागी ठहराए उसने बहुत बड़ा गुनाह किया (कुरान : 4 : 48)

गैर–मुस्लिम पिता, भ्राता इत्यादि को भी मित्र बनाने से निषेध किया गया है :–

1. हे 'ईमान' लाने वालों ! अपने बाप और अपने भाइयों को अपना मित्र न बनाओ यदि वे ईमान की अपेक्षा 'कुफ़्र' को पसंद करे। और तुममें से जो कोई उनसे मित्रता का नाता जोड़ेगा तो ऐसे ही लोग दुष्कर्म करने के दोषी होंगे। (कुरान : 9 : 23)
2. कह दो : ''यदि तुम्हारे बाप, तुम्हारे बेटे और तुम्हारे भाई और तुम्हारी पत्नियां और तुम्हारे घर के लोग और माल, जो तुमने कमाए हैं और कारोबार जिसके सस्ते पड़ जाने का तुम्हें भय है और घर जिन्हें तुम पसंद करते हो, तुम्हें अल्लाह और उसके 'रसूल' और उसके मार्ग में '**जिहाद**' करने से अधिक प्रिय हैं, तो प्रतीक्षा करो, यहाँ तक कि अल्लाह अपना फैसला तुम्हारे सामने ले आए। और अल्लाह उन लोगों को मार्ग नहीं दिखाता जो अवज्ञाकारी हैं। (कुरान : 9: 24)

इस्लाम के विश्वविख्यात विद्वान् मिस्र निवासी शहीद सैयद कुत्ब फरमाते हैं कि मुसलमान के नातेदार उसके बाप, मां, भाई, बीवी अथवा उसके कबीले के लोग नहीं हैं जब तक कि उनकी प्राथमिक रिश्तेदारी अल्लाह से न हो। उसी के मार्फत रिश्तेदारी के संबंध बनते हैं। (जॉन.एल.एसपासिटो : रिसर्जेन्ट इस्लाम, पृ. 79)

पैगम्बर मोहम्मद की एक हदीस से इस्लाम के इस दृष्टिकोण के महत्व का पता चलता है : ''मैं (मोहम्मद) ने (अल्लाह से) अनुमति मांगी कि मैं अपनी माता के लिए (जो मृत्यु के समय मुसलमान नहीं थी) अल्लाह से माफी माँगू। परन्तु अल्लाह से यह अनुमति नहीं मिली। (सही मुस्लिम : 2129)

प्रत्येक मुसलमान को कुरआन व हदीस में लिखित प्रत्येक शब्द को कानून मानकर उसका अनुसरण करना अनिवार्य है। पाठक भलीभाँति समझ सकते हैं कि मुसलमानों का हिन्दुओं से मेल संभव नहीं। स्वयं सोचिए कि हिन्दुओं के चाहने पर भी क्या हिन्दुस्थान के मुसलमान धर्मनिरपेक्ष हो सकते हैं?

सुधार की प्रेरणा शक्ति घृणा–

जिन कुरीतियों/कुप्रथाओं/दर्शनों आदि के विरुद्ध किसी सुधार आन्दोलन का दावा जैसा कि इस्लाम का दावा है, खड़ा होता है तो उस सुधार की प्रेरणा शक्ति उन कुप्रथाओं/कुरीतियों, दर्शनों, विचारों के विरुद्ध घृणा ही होती है। कुरान गैर मुसलमानों (काफिरों) और मुसलमानों के बीच कभी भी अंत न होने वाली घृणा और शत्रुता की घोषणा करता है जब तक कि इस प्रकार के लोग मुसलमान न हो जाएं:

1. ..... और हमारे और तुम्हारे बीच सदा के लिए शत्रुता और विद्वेष उभर आया है जब तक कि तुम अकेले अल्लाह पर ईमान न लाओ ..... (कुरान : 60:4)
2. ..... फिर हमने उनके बीच 'कयामत' तक के दिन के लिए वैमनस्य और द्वेष की आग भड़का दी,और अल्लाह जल्द उन्हें बता देगा, जो कुछ वह बनाते रहे थे (कुरान : 5:14)।
3. लखनऊ के विख्यात मदरसे नदवतुल उलेमा के रेक्टर और मुख्य उलेमा सैयद अबुल हसन अली नदवी (अली मियां) ठीक ही कहते हैं कि मुसलमान को इस्लाम से केवल प्रेम करना ही पर्याप्त नहीं है उसे गैर इस्लाम से घृणा करना भी उतना ही आवश्यक है। (कैलेमिटी ऑफ लिंग्युस्टिक एण्ड कल्चरल शाविनिज़्म, पृ. 10)
4. हे ईमान लाने वालों ! ईमानवालों से हटकर इन्कार करने वालों को अपना मित्र न बनाओ। क्या तुम चाहते हो कि अल्लाह का स्पष्ट तर्क अपने विरुद्ध जुटाओ? (कु. 4:144)
5. हे ईमानलाने वालों ! अपनों को छोड़कर दूसरों को अपना अंतरंग मित्र न बनाओ, वे तुम्हें नुकसान पहुँचाने में कोई कमी नहीं करते। जितनी भी तुम कठिनाई में पड़ो, वही उनको प्रिय है। उनका द्वेष तो उनके मुँह से व्यक्त हो चुका है। और जो कुछ उनके सीने छिपाए हुए हैं, वह तो इससे भी बढ़कर है। यदि तुम बुद्धि से काम लो तो हमने तुम्हारे लिए निशानियां खोल कर बयान कर दी हैं। (कुरआन 3: 118)

उपर्युक्त कारणों से मुसलमान और गैर–मुसलमानों के बीच और विशेष रूप से मुसलमानों और मूर्तिपूजकों (हिन्दुओं) के बीच वैमनस्य की जड़ों का खुलासा हो जाता है। इन मान्यताओं के रहते इनमें बन्धुत्व अथवा मित्रता की भावना का संचार होना जैसा कि देश के संविधान के अनुच्छेद 51क (ख) में आशा व्यक्त की गई है, असंभव है। कुरान स्पष्ट रूप से मुसलमानों और गैर–मुसलमानों के बीच एक ऐसी खाई खोद देती है जो शांति काल अथवा सामाजिक संबंधों में लांघी नहीं जा सकती। मदरसों में यह शिक्षा मुस्लिम बच्चों को निरंतर बाल्यकाल से दी जाती है।

उन पर शैतान ने पूरी तरह अपना प्रभाव जमा लिया है। अतः उसने अल्लाह

की याद को उनसे भुला दिया। वे शैतान की पार्टी वाले हैं। सावधान रहो शैतान की पार्टी वाले ही घाटे में रहने वाले हैं। (कुरआन 58:19)

..... वे (मुसलमान) अल्लाह की पार्टी के लोग हैं। सुन लो अल्लाह की पार्टी वाले ही सफलता पाने वाले हैं। (कुरान : 58:22)

स्पष्ट है कि इस्लाम की मज़हबी मान्यताओं के अनुसार मुसलमानों और गैर–मुसलमानों में पारस्परिक संबंध वही होंगे जो अल्लाह और शैतान के बीच हैं। निरंतर शत्रुता और संघर्ष जिसमें विजय सदैव अल्लाह की पार्टी की ही होगी।

◆◆◆

अध्याय–२

पैगम्बर मोहम्मद (सल्लः)

पैगम्बर मोहम्मद का जन्म मक्का में 570 ईसवी में हुआ। जब वह लगभग 40 वर्ष के थे तब उन्हें अल्लाह द्वारा अवतरित कुरान की आयतें मिलीं।

इस्लाम के विद्वानों ने पैगम्बर मोहम्मद के जीवनकाल को तीन खण्डों में बाँटा हुआ है। पहला जन्म से पैगम्बर बन जाने तक (570–610 ई.)। जब वह कुरैशी कबीले के पुराने रीति–रिवाज़ों एवं मान्यताओं को मानते थे। दूसरा पैगम्बर होने के बाद का **मक्काई** जीवन काल (610 से 622 ई.) तथा तीसरा मक्का से हिजरत के बाद **मदीनाई** जीवनकाल (622–632ई.) ।

''मक्काई जीवन में पैगम्बर मोहम्मद अपने समय की बुराइयों से दूर एक पवित्र व्यक्ति थे। उन्होंने विनाश और कयामत (न्याय का दिन) को निकट भविष्य में देखा और 'मरणोपरांत जीवन' को लक्ष्य बना कर उन्होंने अपने मक्कावासियों से विश्व के स्वामी (अल्लाह) को पूजने तथा हिंसा तथा अन्याय और सांसारिक विषय–वासनाओं को त्यागने पर बल दिया।'' ''प्रारंभिक काल में अनुयायियों को कठोरता अपनाने और शक्ति प्रयोग की अनुमति नहीं दी गई थी।''

कुरान दो खण्डों में अवतरित हुई। पहला खण्ड मक्का में 610 ईसवी से 622 ईसवी तक तथा दूसरा खण्ड मदीना में 622 ई. से 632 ई. तक अवतरित हुआ। कुरान में 114 अध्याय हैं। इनमें से 92 अध्याय मक्का में अवतरित हुए और 22 अध्याय मदीना में।

1. पैगम्बर मोहम्मद अपने जीवनकाल में स्वयं मदीने की मस्जिद में बैठाकर अनुयायियों को कुरान की शिक्षा देते थे जिसे मदरसा प्रणाली की शुरुआत मानना चाहिए। परंतु बाद में पैगम्बर के उत्तराधिकारी ने जो खलीफा नाम से प्रसिद्ध हुए, पैगम्बर मोहम्मद के जीवन पर आधारित 'हदीस' तैयार की। इसी प्रकार कुरान व हदीस इस्लाम के प्रमुख ग्रंथ हैं तथा इस्लाम के शुरू के काल में अनेक विद्वान अपने घरों में या मस्जिदों में इस्लामी तालीम देते रहे।
2. इब्न वरक अपनी पुस्तक ''व्हाई आई एम नॉट ए मुस्लिम'' में लिखते हैं कि मक्काई (मक्का के) जीवन काल में पैगम्बर मुहम्मद धर्म प्रेरित, निष्ठावान् सत्यान्वेषी थे, परन्तु बाद के मदीनाई (मदीना) जीवन काल (622ई–632 ई.)

में वह अपने स्वाभाविक रूप में प्रकट हुए, जहाँ उनमें राजसत्ता और सांसारिक आकांक्षाओं की प्रमुखता हो जाती है।

3. इसी प्रकार विख्यात मौलाना मौदूदी अपने कुरान भाष्य (खण्ड 1, पृ. 151) में लिखते हैं कि ''पहले जब वे (मुसलमान) कमज़ोर और बिखरे हुए थे तो उन्हें अन्यायपूर्वक दबाने वाले अपने मक्का में रहते समय विरोधियों के प्रति शांति, धैर्य व उपदेश देकर रहने को कहा गया। परन्तु मदीना पहुँचने पर (हिजरत के बाद) एक छोटा नगर–राज्य स्थापित हो जाने के बाद उन्हें सबसे पहली बार म्यान से अपनी तलवार निकालने के आदेश मिल गए। ये दोनों कार्यविधियाँ जो पैगम्बर ने अपनाईं थीं, आज भी मुसलमानों द्वारा आवश्यकतानुसार अपनाई जाती हैं।

4. प्रो. एम.आर.ए.बेग भी अपनी पुस्तक 'मुस्लिम डिलेमा इन इंडिया', पृ. 12 में लिखते हैं :– ''जब मुसलमान कम संख्या में थे तब कुरान उन्हें आक्रामक न होने की तालीम देती है, लेकिन बाद में वे (मदीना काल) सुदृढ़ और अलग प्रदेश के स्वामी हो जाते हैं, तो हम (कुरान में) युद्ध करने के आदेशों के संदर्भ पाते हैं''

5. मक्का तथा मदीना में अवतरित हुई कुरान की आयतों को पढ़ने से स्वयं स्पष्ट हो जाता है कि मक्का की आयतों में शांति, सह–अस्तित्व तथा मोहम्मद साहब को पैगम्बर स्थापित करने की प्रमुखता मिलती है जबकि मदीनाई आयतों में शक्ति बढ़ने के साथ यह भावना धीरे–धीरे कठोरता, अधिनायकता, सशस्त्र युद्ध और अंत में स्थायी संघर्ष में बदलती दिखाई देती है। इस प्रकार क्रमिक विकास गैर–मुसलमानों से स्थायी जिहाद में बदल जाता है। पाठकों को बताना उचित होगा कि 5 अगस्त 610 ई. को इस्लाम की स्थापना के बाद से जैसे–जैसे इस्लाम के अनुयायियों की संख्या और शक्ति बल बढ़ता गया, जिहाद का स्वरूप भी मक्का में शांतिपूर्ण से मदीना में धीरे–धीरे सशस्त्र संघर्ष में बदलता चला गया। यह समझ लें कि मक्का में अवतरित आयतों में भी ''अल्लाह के मार्ग में जिहाद का उल्लेख मिलता है। मगर यहाँ का जिहाद गैर–मुसलमानों को समझा–बुझाकर प्रेम, सहयोग, पारस्परिक बातचीत और इस्लाम कबूल करने की दावत देकर अल्लाह के मार्ग में जिहाद का आदेश है। यहाँ यह बताना भी आवश्यक है 610–622 ई. मक्का काल के 12 वर्षों में कुरान के कुल 114 अध्यायों में से 92 यानी 80 प्रतिशत अवतरित हो चुके थे; परन्तु इस लंबे काल तथा 80 प्रतिशत अवतरित कुरान ने अरब के केवल सौ से डेढ़ सौ लोगों को प्रभावित किया जो मुसलमान बन गए परन्तु अगले दस वर्षों (622 से 632 ई) में जो कुरान पैगम्बर के मदीना रहते अवतरित हुई उसने सारे अरब देश को अपनी ओर आकर्षित कर डाला तथा 1 जनवरी 630 ई. को जब पैगम्बर

मोहम्मद ने स्वयं मक्का पर 10 हज़ार मुसलमानों की फौज लेकर आक्रमण किया तो मक्का के लोग (उस काल में) इतनी बड़ी फौज के डर से मुसलमान हो गए। मदीना में अवतरित आयतों को पढ़कर तथा तलवार से जिहाद तथा लूट के माल ने (माल–ए–गनिमत), जिसमें काफिरों की औरतों तथा गुलाम बनाने को बच्चे मिलते थे, मुसलमानों द्वारा काफिरों को मारने के आदेशों के कारण समझ आ जाते हैं।

अपने जीवन काल में पैगम्बर द्वारा किए गए अथवा वर्णित कर्म की इस्लामी न्याय संहिता में अहम् भूमिका है। हम वर्णन कर चुके हैं कि कुरआन तो एक जादू समान है, दोनों अपनी पारदर्शी, बाहरी विशेषताओं तथा कुरआन वर्णित अदृश्य मायने में भी। अनुयायियों का मानना है कि अल्लाह द्वारा अवतरित पुस्तक कुरआन की तफसीर (व्याख्या) भावना समझने के लिए भी अल्लाह द्वारा भेजे गए पवित्र पैगम्बर की सहायता के बिना संभव न था। स्पष्ट है कि न केवल कुरआन बल्कि पैगम्बर द्वारा कुरआन पर दी गई तफसीर भी बराबर महत्व रखती है। यह समझ लेना नितांत आवश्यक है कि मुसलमान अपने मज़हब में न सिर्फ अल्लाह को माने

''ला इलाह इल अल्लाह''

साथ–साथ यह भी उतना ही आवश्यक है कि पैगम्बर मोहम्मद को अल्लाह का पैगम्बर माने ''मोहम्मद उर–रसूल–अल्लाह'' जिसको कुरआन अवतरित की गई।

कुरआन तो स्वयं पैगम्बर मोहम्मद का दायित्व स्पष्ट करती है।

''ऐ हमारे रब ! उन्हीं में से एक ऐसा रसूल उठा जो उन्हें तेरी आयतें सुनाए और उनको किताब और तत्वदर्शिता की शिक्षा दे और उन (की आत्मा) को विकसित करे। निःसंदेह तू प्रभुत्वशाली, तत्वदर्शी है। (कु. 2.129)

कुरआन की शिक्षा अपने अनुयायियों को देने का सबसे सरल, परन्तु सबसे प्रभावशाली उपाय था कि स्वयं पैगम्बर अपने नित्य जीवन को एक आदर्श पुरुष के रूप में जिसमें वह सारे गुण हों जो कुरआन चाहती है, स्वयं प्रस्तुत करे ताकि दूसरे सभी अनुयायी उन्हीं गुणों को अपनाकर अनुसरण करें। केवल ऐसी विधि अपनाने से कोई भी शिक्षक प्रभावशाली होकर अपनी पक्की छाप छोड़ सकता है। स्वयं पैगम्बर मोहम्मद का जीवन तथा कार्यशैली, इसीलिए बेमिसाल है। परन्तु ऐसे आदर्श पुरुष का जीवन काल भी सीमित था। इसलिए यह आवश्यकता हो गई कि पैगम्बर के मुख से निकला प्रत्येक शब्द, उनका प्रत्येक कार्य, यहाँ तक कि उनकी चाल–ढाल और उसके अनोखे अन्दाज़ को भविष्य में आने वाले अनुयायियों के लिए बिना बदलाव लिख कर सुरक्षित रखें।

पैगम्बर का व्यक्तित्व संसार के लिए इतना विशाल आदर्श और मानवता के लिए बरकत वाला था कि उनकी जीवन शैली राह दिखाने वाले सितारे की तरह

है और पैगम्बर की जीवन–प्रणाली को अपनाना और दी गई शिक्षा पर अमल करना भाग्यशाली अनुयायियों के लिए ही संभव है। यह तो वास्तव में बहिश्त में पहुँचने की कुँजी है। इसी कारण पैगम्बर मोहम्मद की जीवनी जानना व समझना आवश्यक है।

आइशा ने जो पैगम्बर मोहम्मद की तीसरी पत्नी थी तथा कम आयु होने के कारण लगभग 40–50 वर्ष बाद तक जीवित रही – जिन्हें हजरत अईशा कहा जाने लगा, टिप्पणी की थी कि पैगम्बर स्वयं चलती–फिरती कुरआन थे। उनकी कही व करी प्रत्येक मिसाल जिन्हें हदीस या सुन्ना के नाम से जाना जाता है एक मार्गदर्शन का काम करती है।

हदीस तो कुरआन का स्वयं पैगम्बर द्वारा किया गया विश्लेषण है जो कुरआन के साथ सर्वदा के लिए जुड़ा है। मुस्लिम लेखकों का मत है कि कुरआन में तो मुख्यतः सूत्र ही हैं जिनका तत्त्व ज्ञान साधारण मुसलमानों की समझ में आना कठिन हो सकता है। इसके विपरित हदीस चलती–फिरती तथा साधारण भाषा में लिखित तथा कुरआन का स्वयं पैगम्बर द्वारा समझाया हुआ भाष्य है। यह समझाना आवश्यक है कि अल्लाह तो अदृश्य है तथा इसके पैगम्बर मोहम्मद एक ऐतिहासिक पुरुष हैं। इसी कारण हदीस की सर्वश्रेष्ठ मान्यता है जो समस्त मुस्लिम जगत में कुरआन के साथ–साथ पूजी जाती है। अल्लाह के साथ–साथ पैगम्बर का विश्वासी और आज्ञाकारी होना भी नितांत आवश्यक है। सत्य तो यह है जिसका कुरआन स्वयं समर्थन करती है कि पैगम्बर का आज्ञाकारी होना या अल्लाह का आज्ञाकारी होना बराबर ही है।

जिसने रसूल की आज्ञा का पालन किया, उसने अल्लाह की आज्ञा का पालन किया और जिसने मुँह मोड़ा तो हमने तुम्हें ऐसे लोगों पर कोई रखवाला बनाकर तो नहीं भेजा है। (कु. 4:80)

हे ईमान लाने वालों ! अल्लाह का आज्ञापालन करो और रसूल का आज्ञापालन करो और अपने कर्मों को विनष्ट न करो। (कु. 47:33)

मोमिन तो बस वही लोग हैं जो अल्लाह और उसके रसूल पर ईमान लाए, फिर उन्होंने कोई सन्देह नहीं किया और अपने मालों और अपनी जानों से अल्लाह के मार्ग में जिहाद किया। वही लोग सच्चे हैं। (कु. 49:15)

पैगम्बर मोहम्मद की एक हदीस (सही मुस्लिम–31) में पैगम्बर मोहम्मद फरमाते हैं ''मुझे लोगों से उस समय तक युद्ध करने का आदेश हुआ है जब तक कि वे सत्यापित न करें कि अल्लाह के अलावा कोई दूसरा पूजनीय नहीं है और वह पूर्ण विश्वास करे कि मैं अल्लाह का संदेशवाहक हूँ और उस सब में विश्वास करे जो मेरे द्वारा लाया गया है।

कुरान के अनुसार – ''कहो हे ! मोहम्मद मानव समुदाय से यदि तुम अल्लाह को प्यार करते हो तो मेरा अनुसरण करो। अल्लाह तुम्हें प्रेम करेगा और तुम्हारे पापों को क्षमा कर देगा। अल्लाह क्षमा करने वाला और दयावान है। (कुरान 3 : 31)

पैगम्बर मोहम्मद की एक दूसरी हदीस के अनुसार उन्होंने कहा कि, ''किसी मनुष्य का विश्वास दृढ़ नहीं होता जब तक कि मैं उसको उसके परिवार, धन, दौलत और समस्त मानवता से अधिक प्रिय न लगूं (सही मुस्लिम : 70)

एक और हदीस के अनुसार, ''तुममें से कोई भी मुसलमान नहीं है जब तक उसको अपने बच्चों, पिता और समस्त मानवता से मैं अधिक प्रिय न हूँ। (सही मुस्लिम : 71)

मज़हबी मुसलमान पैगम्बर के लिए अपना जीवन, परिवार और समस्त मानवता की बलि चढ़ाने के लिए सदैव तत्पर रहता है। पैगम्बर का व्यक्तित्व इतना महान् है कि मनुष्य तो क्या देवदूत और अल्लाह भी उनकी मंगलकामना करते हैं ''लो देखो ! अल्लाह और उसके देवदूत भी पैगम्बर की मंगलकामना करते हैं। हे ! मुसलमानों तुम भी उनकी मंगलकामना किया करो और उनके सम्मान के अनुकूल उनको सलाम किया करो। (कुरान : 33:56)

मज़हबी मुसलमान के मन में पैगम्बर मोहम्मद के लिए इतनी श्रद्धा आदर और विश्वास है कि कहा जाता है कि अल्लाह का अपमान तो एक बार सहन भी किया जा सकता है परन्तु पैगम्बर मोहम्मद का नहीं।

न किसी ईमानवाले पुरुष और न किसी ईमानवाली स्त्री को यह अधिकार है कि जब अल्लाह और उसका रसूल किसी मामले का फैसला कर दें, तो फिर उन्हें अपने मामले में कोई अधिकार शेष रहे। जो कोई अल्लाह और उसके रसूल की अवज्ञा करे तो वह खुली गुमराही में पड़ गया। (कु. 33:36)

ऊपर वर्णित कुरान की आयतों से स्पष्ट है कि पैगम्बर पर विश्वास करना तो अल्लाह पर विश्वास करना है। इसके अतिरिक्त हदीस में वर्णित टिप्पणियां, किया गया विश्लेषण तथा दिए गए फैसले हरेक मुसलमान मानने को बाध्य है। इस कारण हदीस न केवल कुरआन का पूरक है बल्कि वास्तव में इस्लामी कानून शरीया का प्रमुख स्रोत भी है। इसी पर संसार भर में इस्लाम का समस्त ढाँचा भी बना है। कुरआन व हदीस ने मुसलमानों में अपनी समस्याओं से निपटने के लिए एक निराला रुख पैदा किया। पैगम्बर मोहम्मद ने अपने अनुयायियों का जीवन, मस्तिष्क, दृष्टिकोण उनकी कार्यप्रणाली, रीति–रिवाज़, कानून, युद्ध करने की प्रणाली या कहिए कि उनके जीवन की समस्त कार्यशैली बदल डाली।

इन सब विशेषताओं के समावेश ने इस्लाम में एक ऐसा रुख बनाया जिसमें न केवल अपना कानून तथा नियम बनाए बल्कि ऐसे प्रेरणात्मक, उत्प्रेरक और कठोर

पालन करने व करवाने की शक्ति दी। पैगम्बर की जीवनी ने उनके साथियों और अनुयायियों में अपने पैगम्बर के पद्चिह्नों पर चलने का रास्ता तथा अपने जीवन को इस्लाम के झण्डे को सदा लहराते रखने के लिए अपना जीवन समर्पित करने का जज़्बा पैदा किया। यह पद्धति आज तक नियमित रूप से कायम है।

एक उदाहरण देकर कुरान में वर्णित तथा हदीस में वर्णित विवरण पढ़कर पाठक स्वयं निष्कर्ष निकाल सकते हैं ''और हम ज़बूर में याददिहानी के पश्चात् लिख चुके हैं कि ''धरती के वारिस मेरे अच्छे बन्दे होंगे।'' कु. 21:105

इसी विषय पर हदीस 4363 ''सही मुस्लिम'' खण्ड–तीन पृ. 1161 कहती है।

अबु हुरेरा के अनुसार – हम मस्जिद में बैठे थे जब अल्लाह के पैगम्बर (हज़रत मोहम्मद सल्ल0) आए और बोले, हम यहूदियों के पास चलते हैं। हम उनके पास गए। अल्लाह के पैगम्बर (हज़रत मोहम्मद सल्ल0) खड़े होकर यहूदियों से बोले : तुम सब इस्लाम स्वीकार कर लो और सुरक्षित बने रहो। उन्होंने अल्लाह के पैगम्बर (हज़रत मोहम्मद सल्ल0) की बात बार–बार कहने पर भी न मानी। अल्लाह के पैगम्बर ने दोहराया कि सारी पृथ्वी अल्लाह और उसके पैगम्बर की है, और मेरी इच्छा है कि तुम्हें इस भूमि से निकाल दिया जाए। तुम में से जिनके पास जयदाद हो उसे बेच दो, नहीं तो पता होना चाहिए भूमि अल्लाह और उसके पैगम्बर की है (और उन्हें सब कुछ छोड़ कर जाना पड़ेगा)। (हदीस 4364)

इब्न उमर ने बताया कि *बानू नादिर* व *बानू कुरैज़ा* जो यहूदियों का वर्ग था अल्लाह के पैगम्बर (हज़रत मोहम्मद सल्ल0) से लड़ा जिसने बानू नादिर वर्ग को देश निकाला दे दिया, परन्तु कुरैज़ा वर्ग को रहने की अनुमति दी, परन्तु जब वे भी लड़ने को आ गए, परिणामस्वरूप उनके आदमियों को कत्ल कर दिया गया और उनकी औरतों, बच्चों और माल–ए–गनीमत को मुसलमानों में बाँट दिया गया, केवल उनको छोड़कर जो अल्लाह के पैगम्बर (हज़रत मोहम्मद सल्ल0) से मिल गए और उन्हें हिफाजत दे दी गई (उन्होंने इस्लाम स्वीकार कर लिया)। अल्लाह के पैगम्बर (हज़रत मोहम्मद सल्ल0) ने मदीने के सारे यहूदियों को मदीने से बाहर निकाल दिया।

पैगम्बर (हज़रत मोहम्मद सल्ल0) का व्यक्तित्व एक प्रशंसक के अनुसार ''पैगम्बर (हज़रत मोहम्मद सल्ल0) सबसे सुंदर, सबसे बहादुर, चेहरे से चमक टपकती हुई तथा उदार व्यक्ति थे। ऐसा प्रतीत होता था कि उनके चेहरे से सूर्य की किरणें निकलती हों।''

उनका जीवन तो एक दम सादा था। वे अपने सभी काम स्वयं करते थे। यदि दान देना होता था तो स्वयं अपने हाथों से देते थे। अपनी स्त्रियों के काम में भी सहायता करते थे, अपने कपड़े ठीक–ठाक करते थे, सिलाई का बेहद शौक था। वे अपनी बकरियों की स्वयं सेवा करते थे, यहाँ तक अपनी चप्पल भी स्वयं सिल

कर ठीक करते थे। उनका नित्य का पहनावा साधारण था, ऊँची सलवार और ढीले वस्त्र मामूली सफेद सूती होते थे। विशेष अवसरों तथा त्यौहारों पर वे बढ़िया लाल लिनन के वस्त्र पहनते थे, वे अपनी अंगुलियों से खाते थे और भोजन समाप्ति पर अंगुलियां चाटते थे, तत्पश्चात् साफ करते थे।

उनके पास कोई भी व्यक्ति आकर मिल सकता था, परन्तु पैगम्बर (हज़रत मोहम्मद सल्ल0) को आदर सहित दबे शब्दों में संबोधित करना आवश्यक था। पैगम्बर के मुख से निकला एक–एक शब्द नियम की तरह था – कानून ही था। यद्यपि उन्हें किसी को ''न'' (मना) कहना पसंद नहीं था, उनकी विशेषता यह भी थी कि प्रत्येक मिलने वाला व्यक्ति अपने को ही विशेष महमान समझता था।

गैर–मुसलमानों से व्यवहार

उपरिवर्णित तथ्य के साथ–साथ पैगम्बर (हज़रत मोहम्मद सल्ल0) का बर्ताव अपने शत्रुओं के प्रति अति बे–रहम था। विलियम म्यूर पृ0 513 पर लिखते हैं कि बदर की लड़ाई (624 ई.) बीतने के बाद मैदान में मक्का के अरबी लोगों (तब तक गैर मुसलमान थे) की लाशों को देखकर बेहद खुश हुए तथा अपार सुख का अनुभव किया। बहुत से बंदियों को जिन पर कोई आरोप भी नहीं था, अपने सामने कत्ल करवाया। पाठकों को बताना आवश्यक है कि पैगम्बर (हज़रत मोहम्मद सल्ल0) के 300 अनुयायियों ने मक्का निवासियों के एक काफिले को जो व्यापार का सामान ऊँटों पर लादे मदीने के रास्ते वापिस मक्का जा रहे थे, मदीने के निकट उस काफिले को रोककर मुस्लिम अनुयायियों ने जिहाद किया और क्योंकि स्वयं पैगम्बर (हज़रत मोहम्मद सल्ल0) इसमें शामिल थे, उन्हीं की जीत हुई। पैगम्बर (हज़रत मोहम्मद सल्ल0) की इस युद्ध में क्या भूमिका रही, इस विषय में विद्वानों का मत है कि पैगम्बर अपने अनुयायियों को फरिश्तों से आने वाली मदद का आश्वासन तथा मरने वालों के लिए जन्नत का नज़ारा दर्शाते रहे। कहते हैं कि पैगम्बर (हज़रत मोहम्मद सल्ल0) के ज़न्नत मिलने के शब्द एक 16 वर्षीय ओमीर नामक बालक ने सुने तो – खजूर की टोकरी जिसमें से लेकर वह खजूर खा रहा था, फेंक कर चिल्लाया – ''यह है–(खजूर) जो मुझे जन्नत पहुँचने से रोक रही है'' उसने खजूर की टोकरी फैंक दी और युद्ध में कूद पड़ा तथा मन माफिक मारे जाने पर जन्नत में पहुँच गया। एक प्रसिद्ध हदीस इसी का वर्णन करती है। (सही मुस्लिम 4678) इस युद्ध में 50 को बंदी बनाया गया तथा बहुत–सा लूट का माल माल–ए–गनिमत हाथ लगा। इसमें 115 ऊँट, 14 घोड़े, अनेक प्रकार की व्यापार सामग्री हाथ आए। मदीने की फौज ने बंदियों को हथकड़ियां पहनाकर पेश किया, परन्तु पैगम्बर ने उदारता दिखाई।

बदर के युद्ध की मुस्लिम इतिहास में सर्वाधिक मान्यता है। इस युद्ध ने तो वास्तव में प्रारंभिक काल के मुसलमानों की किस्मत को चार–चाँद लगा दिए।

मुस्लिम सेना के सभी 300 योद्धाओं जिन्होंने इस मज़हबी युद्ध में हिस्सा लिया था, के नाम खलीफा उमर के रजिस्टर में सबसे ऊपर अंकित कर अमर कर दिए गए। स्वयं पैगम्बर (हज़रत मोहम्मद सल्ल.) के लिए बदर युद्ध में जीत ने जादुई काम किया। इस सफलता ने इस्लाम की बढ़ोतरी के द्वार खोल डाले। ये नए–नए तर्क देने में सफल होते गए। उन्हें यह जताने का भी अवसर मिला कि इतनी बड़ी मक्का की सेना से टकराने में उन्हें अल्लाह द्वारा भेजे गए फरिश्तों की सहायता मिली।

कुरआन कहती है कि, याद करो जब तुम अपने रब से फरियाद कर रहे थे, तो उसने तुम्हारी पुकार सुन ली। (उसने कहा :) ''मैं एक हज़ार फरिश्तों से तुम्हारी मदद करूँगा जो तुम्हारे साथी होंगे।'' (कु. 8:9)

अल्लाह ने यह केवल इसलिए किया कि यह एक शुभ सूचना हो ताकि इससे तुम्हारे हृदय संतुष्ट हो जाएं। सहायता अल्लाह के यहाँ से ही होती है। निःसंदेह अल्लाह अत्यंत प्रभुत्वशाली तथा तत्त्वदर्शी है। (कु. 8:10)

याद करो जबकि वह अपनी ओर से चैन प्रदान कर तुम्हें ऊँघ से ढक रहा था और वह आकाश से तुम पर पानी बरसा था, ताकि उसके द्वारा तुम्हें अच्छी तरह पाक करे और शैतान की गंदगी तुमसे दूर करे और तुम्हारे दिलों को मज़बूत करे और उसके द्वारा तुम्हारे कदमों को जमा दे। (कु. 8:11)

तुमने उन्हें कत्ल नहीं किया बल्कि अल्लाह ने ही उन्हें कत्ल किया और जब तुमने (उनकी ओर मिट्टी और कंकड़) फेंका, तो तुमने नहीं फेंका बल्कि अल्लाह ने फेंका (कि अल्लाह अपनी गुण–गरिमा दिखाए) और ताकि अपनी ओर से ईमान वालों के गुण प्रकट करे। निःसंदेह अल्लाह सुनता, जानता है। (कु. 8:17)

वास्तव में बदर की जीत ने पैगम्बर के हौंसले बुलंद कर दिए और सिलसिलेवार एक के बाद एक, ऐसे कार्य किए जिससे इस्लामिक कार्यप्रणाली की रूपरेखा स्पष्ट दिखने लगी।

पैगम्बर (हज़रत मोहम्मद सल्ल0) ने अपने गुप्तचरों का तंत्र मदीना में इतना सक्रिय कर रखा था कि घरों में होने वाली बातें भी पैगम्बर (हज़रत मोहम्मद सल्ल0) को बता दी जाती थीं और उन्हीं सूचना के आधार पर कदम उठाए जाते थे, जो कभी बहुत ही क्रूर भी होते थे। बदर की विजय ने पैगम्बर (हज़रत मोहम्मद सल्ल0) की शक्ति को अत्यधिक बढ़ा दिया और इससे इस्लाम के बढ़ने का द्वार खुल गया।

मदीना में खून–खराबे का दौर प्रारंभ हुआ। पहला खून एक महिला का बहा, वह थी अश्मा (पुत्री मेरवान) जो आउस कबीले की थी और जिसने इस्लाम स्वीकार न किया था। अश्मा एक कवयित्री थी और इस्लाम से घृणा का इज़हार करती थी। बदर की लड़ाई के तुरंत बाद उसने अपनी कविता में एक अजनबी (पैगम्बर हज़रत मोहम्मद सल्ल0) पर विश्वास करके मदीने की शांति भंग करवा दी, को दर्शाया था।

यह कविता तुरंत सारे मदीना में फैल गई। फलस्वरूप कविता की बात मुसलमानों के कानों में भी पहुँची जिससे वे उत्तेजित हो गए। 'ओमीर' नाम के अँधे व्यक्ति ने जो स्वयं आउस कबीले का था, अश्मा को मारने की कसम खाई और रात के अँधेरे में उसके घर जाकर सोती अश्मा के दूध पीते बच्चे को उसके पास से हटाकर अपनी तलवार अश्मा के दिल में इतनी ज़ोर से घुसाई कि पार होकर सोने वाले तख्त में जा घुसी। **प्रातः काल मस्जिद में नमाज़ के समय पैगम्बर (हज़रत मोहम्मद सल्ल0) जिसको इस साजिश का पूरा ज्ञान था – ओमीर से पूछा : क्या तुमने मेरबान की बेटी को मार डाला? उत्तर मिला : हां, परन्तु बताओ कि बात बढ़ने का खतरा तो नहीं है। पैगम्बर ने कहा कि कुछ भेड़ बकरियां आपस में ज़रूर सर पीटेंगीं। परिणाम यह निकला कि आउस कबीले के लोग अत्यंत भयभीत हो गए और डर कर उन सबने सच्चा मज़हब इस्लाम कबूल कर लिया। लेखक स्प्रेन्जर का मानना है कि गरीब और लाचार कबीले के पास कोई और विकल्प भी तो न था।** (पाठक को जान लेना चाहिए कि इस्लाम में भय का उपयोग पैगम्बर (हज़रत मोहम्मद सल्ल0) के काल से प्रचलित रहा है–लेखक)।

मदीने में दूसरा खून पैगम्बर (हज़रत मोहम्मद सल्ल0) की स्वीकृति से फरवरी 624 ई. में हुआ। अपराधी था एक बूढ़ा यहूदी (उम्र 100 वर्ष), नाम था अबू अफाक जिसका अपराध अश्मा जैसा ही था। उसने भी मुसलमानों के खिलाफ कविताएं लिखीं थी जिससे वे नाखुश हुए। ''मुझे इस खरपतवार (अबु अफाक) से कौन मुक्ति दिलाएगा ? पैगम्बर ने कहा। '' पैगम्बर (हज़रत मोहम्मद सल्ल0) के आदेश का पालन हुआ और चंद दिनों में मौका ढूँढ कर अबू अफाक को मौत के घाट उतार दिया गया। इस प्रकार मदीने में इस्लाम की तलवार से एक के बाद एक यहूदी कबीलों का सफाया होना प्रारंभ हो गया। सभी को एक ही विकल्प दिया गया – इस्लाम स्वीकार करो अन्यथा तलवार की भेंट।

मदीने में तीसरा खून जुलाई 624 ई. में काब–इब्न–अल–अशरफ का हुआ, जो एक यहूदी 'बेनी–अन–नादिर' समुदाय का था। इसका कसूर था कि उसने पैगम्बर मोहम्मद को किसी प्रकार अपमानित किया था। इसका वर्णन सही मुस्लिम, खण्ड–3 हदीस संख्या 4436, पृ. 1193, पर निम्नलिखित है :–

ज़बीर के अनुसार पैगम्बर मोहम्मद (हजरत मोहम्मद सल्ल.) ने कहा ''काब–बिन–अशरफ का कत्ल कौन करेगा ? उसने अल्लाह के सर्वशक्तिमान पैगम्बर की तौहीन की है। सुनते ही मोहम्मद बिन मसलामा ने कहा ''अल्लाह के पैगम्बर, क्या आप चाहते हैं कि मैं उसका कत्ल कर दूँ? पैगम्बर ने उत्तर दिया ''हां'' मुहम्मद–बिन–मसलामा ने निवेदन किया कि मुझे आवश्यकतानुसार काब से बात करने की इजाज़त दे दी जाए। पैगम्बर मोहम्मद ने स्वीकृति दे दी। मोहम्मद

बिन असलम, काब के घर गया। घर पहुँच कर उसने पैगम्बर की बुराई काब से की, जिससे उसका विश्वास जीता और फिर बातचीत के दौरान उसे बाहर आने का निमंत्रण दिया तथा उसका धोखे से अपने साथियों के साथ मिलकर वध कर दिया।

''सर विलियम म्यूर अपनी पुस्तक ''दि लाइफ ऑफ मोहम्मद'' पृ. 248 पर लिखते हैं कि ''काब के कत्ल से स्पष्ट हो जाता है कि पैगम्बर की शिक्षा किस प्रकार क्रूर धर्मान्धता की ओर ले जा रही थी।''

काब की हत्या के अगले दिन पैगम्बर मोहम्मद (हजरत मोहम्मद सल्ल.) ने अपने अनुयायियों को सामूहिक इजाज़त दी कि यहूदियों को जहाँ भी मिलें कत्ल कर दो। (पृ. 249–वही) ''यह भी स्पष्ट होता है कि इस्लाम में धोखा देकर कत्ल करने की इजाज़त है''–लेखक

पाठकों को जानना आवश्यक है कि मदीना पहुँचने के तुरंत बाद (622 ई.), पैगम्बर (हज़रत मोहम्मद सल्ल0) ने मदीना स्थित यहूदियों से एक लिखित संधि की थी जो ''***मदीना की संधि***' नाम से इस्लामिक जगत में प्रसिद्ध है। इस संधि के अनुसार बाकी शर्तों के अतिरिक्त, दोनों कौमें अपना मज़हब चलाने में स्वतंत्र होंगी, का प्रावधान था। संधि की विस्तृत जानकारी पुस्तक के अंत में वर्णित है।

इस संधि के बारे में यह जानना आवश्यक है कि 1400 वर्ष बाद भी यह संधि दूसरे देशों के संबंध में मुसलमानों की राजनीति का आधार बनी है। इसी प्रकार पैगम्बर (हज़रत मोहम्मद सल्ल0) ने एक दूसरी संधि 628 ई. में मक्का के अरबी लोगों (जो मुसलमान नहीं बने थे) से की थी। इस संधि को 'अल–हुदबिया' की जो मक्का के निकट स्थान है, संधि के नाम से जाना जाता है। इस संधि का इतना महत्व है कि 12 जनवरी 2002 के अपने टी.वी. प्रसारण में पाकिस्तान के राष्ट्रपति जनरल परवेज़ मुशर्रफ ने पाकिस्तान सरकार द्वारा अमेरिका को अफगान युद्ध में अपनी धरती इस्तेमाल करने की स्वीकृति देने के फलस्वरूप वहाँ के मुल्लाओं द्वारा घोर आपत्ति उठाने तथा प्रदर्शन करने पर उन्हीं को शांत करने के लिए इसी 'अलहुदबिया संधि' का हवाला दिया था। इस संधि के अनुसार मक्का निवासियों से आने वाले 10 वर्ष तक मेलमिलाप और सहअस्तित्व का समझौता था। संधि होने से मक्का निवासी तो चैन की नींद सो गए परन्तु पैगम्बर मोहम्मद ने 1 जनवरी 630 को 10 हजार फौज लेकर मक्का पर चढ़ाई कर दी जिसके लिए मक्का निवासी तैयार नहीं थे। सब मक्का निवासियों को इस्लाम स्वीकार करना पड़ा। उसी दिन मक्का स्थित काबा की कुल 360 मूर्तियां ध्वस्त कर दी गईं। राष्ट्रपति मुशर्रफ को इस संधि को याद दिलाने की ज़रूरत इस कारण हुई कि उन्हें मजबूरन अमेरिका को यह सुविधा देनी पड़ी जो भविष्य में कभी भी तोड़ी जा सकती है (जैसा कि स्वयं पैगम्बर ने किया) इससे सब मौलाना तथा उलेमा शांत हो गए।

◆◆◆

अध्याय–३

जिहाद

''जिहाद'' शब्द ***जिहादा*** से लिया गया है, जिसका अर्थ है ''उसने संघर्ष किया''। इस प्रकार शाब्दिक अर्थ है ''संघर्ष'' या प्रयास, किन्तु मज़हबी कानून के अनुसार इसका अर्थ है, पूरी ताकत लगाकर ''अल्लाह के मार्ग में अपनी ताकत का उपयोग''।

''जिहाद'' शब्द को प्रायः किताल (युद्ध) के पर्याय के रूप में प्रयोग किया जाता है परन्तु कुरान स्वयं अपनाए तरीकों में फर्क बताती है, तथा उन अपनाए गए तरीकों के फल भी अलग–अलग हैं।

कुरान के अनुसार :–

''ईमानवालों में से जो बिना कारण के बैठे रहते हैं और जो अल्लाह के मार्ग में अपने धन और प्राणों के साथ जी–तोड़ कोशिश करते हैं; दोनों समान नहीं हो सकते। अल्लाह ने बैठे रहने वालों की अपेक्षा अपने धन और प्राणों से जी–तोड़ कोशिश करने वालों का दर्जा बड़ा रखा है। यद्यपि प्रत्येक के लिए अल्लाह ने अच्छे बदले का वचन दिया है। परन्तु अल्लाह ने बैठे रहने वालों की अपेक्षा जी–तोड़ कोशिश करने वालों का बड़ा बदला रखा है। (कुरान 4 : 95)

ईमाम इब्न रूशद का मानना है कि जिहाद एक संपूर्ण संघर्ष है। प्रत्येक मुसलमान के लिए यह अनिवार्य है कि वह अपनी पूर्ण शक्ति, चाहे वह बौद्धिक अथवा शारीरिक रूप में हो, या अल्लाह प्रदत्त भाषण, नैतिक शक्ति, तथा कठिनाइयों का सामना करने की शक्ति, साथ–साथ उसकी अपनी सांसारिक दौलत हो, उसका भरपूर उपयोग करे।

ईमाम रूशद का यह भी मानना है कि आस्थावान मुसलमान इस संघर्ष को चार तरीकों से अंजाम दे सकता है। ;पद्ध मन से, ;पपद्ध ज़बान की बोली से ;पपपद्ध अपने हाथों से ;पअद्ध अन्यथा तलवार से ...। बुराई के चाहे उसके अंदर हो अथवा बाहरी दुनिया में हो, खिलाफ घृणा होनी चाहिए और उसके विरुद्ध लड़ने की तीव्र इच्छा शक्ति भी होनी चाहिए। उसके बाद आती है अभिव्यक्ति की, ज़बान से तर्क करने की ताकत जो मज़बूत और सब तरह के शोषण मुक्त सामाजिक व्यवस्था की

स्थापना में अहम भूमिका निभाती है। ऐसी ताकत की ज़िम्मेदारियां इस मायने में है कि जो महान आदर्श और भावना दिमाग और मन में उठे, उसे मीठे शब्दों में लपेट कर वाक् कला के द्वारा उसकी महत्ता को दूसरे के मस्तिष्क में स्थापित करे। वाद–विवाद की उपयोगिता की इस देन का इस्तेमाल केवल आदमी के जीवन में अपनाया जा सकता है। कुरआन स्वयं अभिव्यक्ति की तर्क शक्ति का अल्लाह के पथ पर आमंत्रित करने के लिए उपयोग करने का रास्ता बताती है।

कुरान के अनुसार

''अपने रब के मार्ग की ओर तत्वदर्शिता और सद्–उपदेश के साथ बुलाओ और उनसे ऐसे ढंग से वाद–विवाद करो जो उत्तम हो। तुम्हारा रब उसे भलीभाँति जानता है जो उसके मार्ग से भटक गया और वह उन्हें भी भलीभाँति जानता है जो मार्ग पर हैं।'' कु. 16 : 125

अब्दुला यूसुफ अली ने कुरान के इस आयत पर अपनी टिप्पणी में कहा है–इस अद्भुत परिच्छेद के अंदर मदरसों में मज़हबी तालीम देने के सिद्धांत दिए गए हैं जो सार्वकालिक हैं ... ''हमें सबको अल्लाह की राह पर चलने के लिए आमंत्रित करना चाहिए, और उसकी सार्वभौमिक इच्छा की व्याख्या करनी चाहिए; हमें ऐसा बुद्धिमत्तापूर्वक तथा सावधानी से करना चाहिए ताकि लोगों को उनके अपनाए मार्ग पर चलते हुए अपने ज्ञान और अनुभव के आधार पर उदाहरणार्थ, चाहे वह छोटा (संकीर्ण) हो, चाहे बड़ा, देकर मनवाना हमारा उद्देश्य होना चाहिए।'' यह सावधानी बरतनी चाहिए कि हमारा तर्क हठधर्मी तथा केवल अपनी ही श्रेष्ठता आधारित न हो और न किसी आक्रामक भाषा का प्रयोग होना चाहिए किन्तु सौम्य, लिहाज़वान एवं ऐसा चिकना–चुपड़ा तर्क हो जो सुनने वाले का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करे। हमारा तर्क कटुतापूर्ण न होकर अति सभ्य और शालीनता का नमूना पेश करता हुआ होना चाहिए जिससे सुनने वाला स्वयं अपने से कहे, ''यह आदमी केवल तर्क ही नहीं दे रहा, न वह मुझको उत्तेजित कर रहा, अपितु वह ईमानदारी से अपने अंदर छिपे ईमान की व्याख्या कर रहा है, और उसका उद्देश्य मानव प्रेम और ईश्वर प्रेम लगता है।'' (जिहाद इन इस्लाम, अब्दुल हमीद सद्दीकी, पृ. 7)

इस्लाम में जिहाद के अंतर्गत ऐसी श्रेष्ठ मनोवृत्ति निहित है। यह भौतिक साधनों की प्राप्ति के लिए आक्रमण करना, या कबीले या वंश की बहादुरी का प्रदर्शन नहीं है। वरन् यह मानव जाति के हित के लिए एक पुनीत कर्म प्रत्येक मुस्लिम को दिया गया है ताकि दुनिया में इस्लाम स्थापित हो जिससे शांति और न्याय बना रहे। **यही युद्ध, जिसका उद्देश्य महान् लक्ष्य को प्राप्त करना है (विश्व का**

इस्लामिकरण–लेखक) और जिसे ''अल्लाह की राह के लिए युद्ध करना है, केवल वही सच्चा जिहाद है।

अपने निराले अंदाज़ में पैगम्बर मोहम्मद ने स्पष्ट किया था कि ''जिहाद'' केवल तलवार का उपयोग ही नहीं है, किन्तु जब मुस्लिम अपनी ज़बान का उपयोग भी आततायियों के अत्याचार के विरुद्ध करता है तो वह दरअसल जिहाद कर रहा है। पैगम्बर ने एक बार यह भी कहा था – ''मेरे अनुयायियों में से कोई भी यदि कोई नफरत की बात देखता है और यदि उसमें पर्याप्त सामर्थ्य हो तो उसे चाहिए कि वह उसे बदलने की कोशिश करे, किन्तु यदि उसमें आवश्यक ताकत न हो तो ऐसी स्थिति में उसे अपनी ज़बान का प्रयोग करना चाहिए, यदि वह भी संभव न हो तो उसे चाहिए कि वह अपने तहेदिल से नफरत करे, यद्यपि यह ईमान की सबसे कमज़ोर स्थिति है।

क्योंकि जिहाद एक समग्र संघर्ष है जो अनेक उपायों से किया जाता है, इसलिए इन विभिन्न जिम्मेदारियों को ठीक से समझने के लिए अलग–अलग अपनाए तरीकों को समझना भी ज़रूरी है।

अनेक उलेमाओं ने जिहाद को इस्लाम का अनिवार्य अंग कहा है। प्रत्येक मुसलमान को उसमें भाग लेना भी अनिवार्य है – इस्लाम का सैनिक बन कर, धन देकर, लेखों द्वारा अथवा मुसलमानों में उग्रता से प्रचार करके (बात्यौर : द जिम्मी, पृ. 44)। कुरान मुसलमानों को (काफिरों से युद्ध करने के लिए प्रोत्साहित करती है। (कु. 2:190) कुरान उन्हें विश्वास दिलाती है कि इस ध्येय की पूर्ति के लिए मरना वास्तविक मृत्यु नहीं है। (3:169) वह उन्हें यह भी बताती है कि अल्लाह के बताए मार्ग में मरने वालों को भुलाया नहीं जाएगा (47:4)। बहुत सी आयतें मुसलमानों को इस मज़हबी युद्ध में खुले हाथ से खर्च करने को प्रोत्साहित करती हैं और इस पर बल देती हैं कि जिन्हें अल्लाह में विश्वास है उन्हें उसके लिए युद्ध करना चाहिए।

मौलाना मौदूदी के विचार से मुस्लिम समुदाय वजूद (अस्तित्व) में आते ही अपने जीवन उद्देश्य के लिए जिहाद शुरू कर देता है। इसके वजूद में आने का तकाज़ा यही है कि वह गैर–इस्लामी निज़ाम की हुक्मरानी को (गैर–इस्लामी राज्य प्रणाली को) मिटाने की कोशिश करे और इसके स्थान पर तमद्दुन व इज्तिमा (सामाजिक व सामूहिक जीवन) के उस मौ–तदिल व जाबता (संहिता) की हकूमत कायम करे जिसे कुरान एक जामा (संपूर्ण) शब्द 'कलिमतुल्लाह' से प्रकट करता है .... यह मज़हबी तबलीग करने वाले वाइज़ीन (मिशनरीज़) की जमायत नहीं है बल्कि खुदाई फौजदारों की जमायत है ... कुरान के अनुसार – जंग करो उनसे यहाँ तक कि मूर्तिपूजा बाकी न रहे और इताअत (मान्यता) सिर्फ खुदा के लिए हो जाए।'' (मौलाना मौदूदी : जिहाद फीसबिल्लाह, पृ. 22–24 भाषण 1939 पुनः प्रकाशित फरवरी 1968 व जनवरी 1978 मरकजी मकतबा जमाअते इस्लामी हिंद दिल्ली–6)

जिहाद के बहुत से रूप हो सकते हैं, लेखों द्वारा, उपदेशों द्वारा समाज में आक्रामकता के विकास द्वारा, सुरक्षा द्वारा, सशस्त्र क्रांति द्वारा, सैनिक आक्रमण अथवा विद्रोह द्वारा, पड़ौसी की मदद के द्वारा, आत्मरक्षा की तैयारी द्वारा अथवा गुरिल्ला युद्ध द्वारा (बात्यौर : द जिम्मी, पृ. 46)।

कुफ्र के विरुद्ध निरंतर युद्ध : जिहाद

जिहाद का एकमात्र उद्देश्य है, विश्व का इस्लामीकरण। जिहाद के लिए अनेक प्रकार के उपाय कुरआन और हदीस में दिए गए हैं। इन सभी प्रयासों द्वारा किसी गैर–मुस्लिम समाज अथवा देश में इस्लामी मज़हबी और इस्लामी कानून की स्थापना कर उसे इस्लामी देश बनाने के लिए ही जिहाद शब्द का उपयोग किया गया है।

''जिहाद वास्तव में एक अंतर्राष्ट्रीय धारणा है जो संसार के समस्त मनुष्य जगत को दो विरोधी गुटों में बाँटता है।

अ दारुल–हरब (युद्ध स्थल), जहाँ इस्लाम का शासन नहीं है

ब दारुल–इस्लाम, (इस्लामी देश) जहाँ इस्लामी शासन है

जिहाद इन दोनों पारस्परिक विरोधी दलों में निरंतर युद्ध की स्थिति है। इसका अंत तभी होगा जब काफिरों (गैर–इस्लामी) पर मुसलमानों को पूर्ण प्रभुत्व प्राप्त हो जाए और सारे विश्व में दूसरे सारे मतों को समाप्त कर इस्लाम का वर्चस्व स्थापित हो जाए।'' (***प्रो. डेनियल पाइप्स : इन द पाथ ऑफ गॉड, पृ. 46***)

''क्योंकि जिहाद स्थायी युद्ध की स्थिति है, उसमें निष्ठापूर्वक शांति होने की संभावना नहीं है। किन्तु राजनीति के अनुसार स्थायी संधियां की जा सकती हैं। यह संधिकाल अधिक से अधिक दस वर्ष का हो सकता है। इस संधि को मुस्लिम पक्ष शत्रु को चेतावनी देकर कभी भी तोड़ सकते हैं। परन्तु यदि चेतावनी बिना दिए भी काफिरों पर आक्रमण कर दिया जाए तो किसी प्रकार उसके लिए मुसलमानों को दण्डित नहीं किया जा सकता।'' (***बात्यौर : द जिम्मी, पृ. 44***)

पाठकों को बताना आवश्यक है कि सन् 628 में पैगम्बर मोहम्मद ने उस समय के गैर–मुसलमान मक्का निवासियों से दस वर्ष की अनाक्रमण संधि की थी। यह संधि मक्का के निकट अल–हुदबइया स्थान पर हुई, जिस पर दोनों पक्षों ने हस्ताक्षर किए। केवल दो वर्ष बाद ही बिना मक्का निवासियों को चेतावनी दिए पैगम्बर मोहम्मद ने दस हज़ार सुसज्जित सेना लेकर मक्का पर चुपचाप चढ़ाई की। मक्का निवासियों ने इस्लाम स्वीकार कर लिया। स्मरण होगा कि 13 वर्ष तक पैगम्बर द्वारा शांतिपूर्ण प्रचार से (610 से 622 ई. तक) इसी मक्का में केवल 100–150 व्यक्तियों को ही मुसलमान बना पाए थे। बल प्रयोग, भय अथवा आतंक द्वारा किसी धार्मिक/सामाजिक सुधार के तत्काल कार्यान्वयन का इससे बेहतर उदाहरण विश्व

इतिहास में कदाचित नहीं मिलेगा।

मुस्लिम उलेमाओं द्वारा जिहाद को इस्लाम का अनिवार्य अंग बताया गया है। प्रत्येक मुसलमान को उसमें भाग लेना अनिवार्य है –

1. इस्लाम का सैनिक बनकर, 2. धन देकर, 3. लेखों द्वारा, 4. मुसलमानों में उग्रता के प्रचार द्वारा (बात्यौर : दि जिम्मी, पृ. 44)।

कुरआन मुसलमानों को काफिरों से युद्ध करने के लिए प्रोत्साहित करती है। वह उन्हें विश्वास दिलाती है कि इस ध्येय के लिए मरना वास्तविक मृत्यु नहीं है।

तुम उन लोगों को जो अल्लाह के मार्ग में मारे गए हैं, मुर्दा नहीं समझो बल्कि वे अपने रब के पास जीवित हैं, रोज़ी पा रहे हैं। (कुरआन : 3:169)

कुरआन मुसलमानों को बताती है कि अल्लाह की राह में मरने वालों को भुलाया नहीं जाएगा। बहुत सी कुरआन की आयतें मुसलमानों को मज़हबी युद्ध में खुले हाथ खर्च करने को प्रोत्साहित करती हैं।

टामस पैट्रिक हुग्स अपनी सर्वमान्य 'डिक्शनरी ऑफ इस्लाम' में जिहाद का अर्थ इस प्रकार बताते हैं : प्रयास अथवा संघर्ष। उन लोगों के विरुद्ध जो पैगम्बर मोहम्मद के मिशन में विश्वास नहीं करते। यह मुसलमानों पर कुरआन और हदीस द्वारा एक अनिवार्य मज़हबी कर्तव्य निर्धारित किया गया है, जिसका ध्येय इस्लाम की उन्नति करना और मुसलमानों को बुरे कार्यों से बचाना है।

..... जब किसी गैर–मुस्लिम देश पर कोई मुस्लिम शासक विजय प्राप्त कर लेता है तो वहाँ के निवासियों को तीन विकल्प दिए जाते हैं :–

1. इस्लाम स्वीकार करना। इससे पराजित देश के नागरिक स्वतः मुस्लिम राष्ट्र के नागरिक बन जाते हैं
2. जज़िया नामक अपमानजनक कर देकर जिम्मी (दूसरे दर्जे का नागरिक) हो जाना। इससे उनको जीवन सुरक्षा मिल जाती है। परन्तु यह छूट अरब देश के मूर्तिपूजकों के लिए नहीं है।
3. उन लोगों का तलवार द्वारा वध जो इस्लाम मज़हब स्वीकार नहीं करते और जज़िया भी नहीं देना चाहते।

कुरआन में वर्णित निम्नलिखित आयतों को देखें।

फिर जब पवित्र महीने बीत जाएं तो मुशरिकों को जहाँ कहीं पाओ, कत्ल करो और उन्हें पकड़ो और उन्हें घेरो और हर घात की जगह उनकी ताक में बैठो। यदि वह 'तौबा' कर लें और 'नमाज' कायम करें और 'ज़कात' दें, तो उनका मार्ग छोड़ दो। निःसंदेह अल्लाह बड़ा क्षमाशील और दया करने वाला है। (कुरआन 9:5)

किताब वाले जो न अल्लाह पर 'ईमान' लाते हैं और न 'अंतिम दिन' पर और

न उसे 'हराम' करते हैं जिसे अल्लाह और उसके 'रसूल' ने हराम ठहराया है और न सच्चे 'दीन' (इस्लाम) को अपना दीन बनाते हैं, उनसे लड़ो यहाँ तक कि वे अप्रतिष्ठित होकर अपने हाथ से जज़िया देने लगें। (कुरआन 9:29)

अब जब कुफ्र करने वालों से तुम्हारी मुठभेड़ हो तो गर्दनें मारना यहाँ तक कि जब तुम उन्हें कुचल चुको तो बन्धनों में पकड़ो, फिर बाद में या तो एहसान कर देना है या फिरौती लेना है यहाँ तक युद्ध में अपने हथियार डाल दें। (कुरआन 47:4)

कुरआन की अनेक आयतें मुसलमानों को इस मज़हबी युद्ध में भाग लेने के लिए प्रोत्साहन देती हैं :

'निकल पड़ो चाहे हथियार हल्के हो या बोझल, और अपनी मालों और जानों के साथ अल्लाह के मार्ग में जिहाद करो। यह तुम्हारे लिए अच्छा है यदि तुम जानो।' (कुरआन 9:41)

साथ–साथ कुरआन जिहाद से जी चुराने वालों की भर्त्सना करती है :

'तुमसे (युद्ध में न जाने की) इजाजत केवल वही लोग चाहते हैं जो अल्लाह और अंतिम दिन पर ईमान नहीं रखते .....' (कुरआन 9:45)

यदि तुम न निकलोगे तो अल्लाह तुम्हें दुःख देने वाली यातना देगा ....' (कुरआन 9:39)

..... और निःसंदेह जहन्नुम इन काफिरों को घेरे हुए है। (कुरआन 9:49)

साथ–साथ कुरआन जिहादी युद्ध में मृत्यु प्राप्त हो जाने के भय को अवास्तविक बताती है। मृत्यूपरांत जन्नत के सुखभोग की ओर आकर्षित करती है।

हदीस 4678 सही मुस्लिम – जबीर ने बताया कि एक साथी ने अल्लाह के पैगम्बर से पूछा, यदि मैं मारा गया तो कहाँ जाऊँगा ? पैगम्बर ने उत्तर दिया – ''जन्नत में'', यह सुन कर ही उस व्यक्ति ने खजूर की टोकरी (जो हाथ में लिया था) फैंक दी, लड़ने चला गया और मरने तक लड़ता रहा।

हदीस 4681 सही मुस्लिम – अल्लाह के पैगम्बर ने बताया कि जन्नत के द्वार का रास्ता तलवारों के साए में है। एक व्यक्ति बोला – अबू मूसा क्या तुमने पैगम्बर को यह कहते सुना ? उसने उत्तर दिया ''हां'' तत्पश्चात उसने अपने मित्रों से अलविदा की। अपनी तलवार की मयान तोड़ कर फेंक दी – तथा नंगी तलवार लेकर दुश्मनों से मारे जाने तक लड़ता रहा।

'और जो लोग अल्लाह के मार्ग में मारे गए उन्हें मरा हुआ न समझो। बल्कि वे अपने रब के पास जीवित हैं (जन्नत में) रोज़ी पा रहे हैं। (कुरआन 3:169)

यह कैसी रोज़ी है, कुरआन उसका भी विस्तृत ब्यौरा देती है।

जन्नत का वर्णन

उनके लिए जानी–बूझी रोज़ी है, मेवे। और उनका सम्मान किया जाएगा। नेमत–भरी जन्नतों में तख्तों पर आमने–सामने बैठे होंगे, निथरी बहती (शराब के स्रोत) से मद्य–पात्र भर–भर कर उनके बीच फिराए जाएंगे, उज्ज्वल पीने वालों के लिए स्वादिष्ट न उससे कोई सरदर्द होगा और न वे उससे मतवाले होंगे। और उनके पास निगाहें झुकाने वाली सुन्दर आँखों वाली स्त्रियां होंगी, ऐसी (निर्मल) मानो छुपे हुए अण्डे हैं। (कुरआन 37:41–49)

स्व. अनवर शेख ने जो इंग्लैंड में रहते थे, अपनी पुस्तक ''इस्लामः सेक्स एण्ड वॉयलेंस' में जन्नत में जो सुख मिलता है उसका वर्णन निम्न प्रकार से किया है :–

''विचाराधीन इस विषय को भली प्रकार समझने के लिए मैं आपका ध्यान हदीस तिरमज़ी खण्ड 2 पृष्ठ (35–40) की ओर आकर्षित करना चाहूँगा जिसमें जन्नत में सदैव जवान रहने वाली हूरों का विस्तृत वर्णन हैः

(1) हूर एक अत्यधिक सुन्दर युवा स्त्री होती है जिसका शरीर पारदर्शी होता है। उसकी हड्डियों में बहने वाला द्रव्य उसी प्रकार दिखाई देता है जैसे रूबी और मोतियों के अन्दर की रेखाएं दिखती हैं। वह एक पारदर्शी सफेद गिलास में लाल शराब की भाँति दिखाई देती है।

(2) उसका रंग सफेद है और साधारण स्त्रियों की तरह शारीरिक कमियों जैसे मासिक धर्म, रजोनिवृत्ति, मल व मूत्र विसर्जन, गर्भधारण इत्यादि संबंधित विकारों से मुक्त है।

(3) वह एक ऐसी स्त्री होती है जो विनम्र होती है और कातिलाना दृष्टि रखती है; वह अपने पति के अतिरिक्त किसी अन्य पुरुष को कभी नहीं देखती तथा अपने पति की पत्नी होने के कारण कृतज्ञता का अनुभव करती है।

(4) प्रत्येक हूर एक ऐसी युवती स्त्री होती है जो अहंकार और द्वेष भाव से मुक्त होती है। इसके अतिरिक्त वह प्यार का अर्थ समझती है और उसे व्यवहार में लाने की योग्यता भी रखती है।

(5) हूर एक ऐसी अमर स्त्री होती है जो कभी वृद्धा नहीं होती। विनम्रता से बोलती है और अपने पति के सम्मुख अपनी आवाज ऊँची नहीं उठाती; वह सदैव उससे सहमत रहती है। वह विलासिता में पली होने के कारण वह स्वयं विलासिता ही होती है।

(6) प्रत्येक हूर किशोर वय की कन्या होती है उसके उरोज उन्नत और बड़े होते हैं। हूरें भव्य परिसरों वाले महलों में रहती हैं।

हूर के वृत्तान्त के बारे में देखिए, कि मिस्कट के खण्ड 3 पृष्ठों 83–97 में क्या लिखा है :

(1) हूर यदि जन्नत में अपने आवास से पृथ्वी की ओर देखे तो सारा मार्ग सुगन्धित और प्रकाशित हो जाता है .....

(2) हूर का मुख दर्पण से भी अधिक चमकदार होता है, तथा उसके गाल में कोई भी अपना प्रतिबिम्ब देख सकता है उसकी हड्डियों का द्रव्य आँखों से दिखाई देता है।

(3) प्रत्येक व्यक्ति जो जन्नत में जाता है उसको 72 हूरें प्राप्त होती हैं; जब वह जन्नत में प्रवेश करता है, मरते समय उसकी उम्र कुछ भी हो, वह तीस वर्ष का युवक हो जाता है और उसकी आयु आगे नहीं बढ़ती।

(4) तिर्मिजी के खण्ड 2 पृष्ठ 138 पर कहा गया है; जो आदमी जन्नत में जाता है उसे एक सौ पुरुषों के पुरुषत्व के बराबर पुरुषत्व दिया जाता है।''

जिहाद में मरने वालों के लिए मृत्यूपरांत इस प्रकार के विलासपूर्ण जीवन का लोभ ही जिहादियों में वह साहस पैदा करता है जिसका वर्णन इतिहास में इस्लाम के सेना नायकों द्वारा विरोधियों को दी गई इस गर्वोक्त चुनौती में मिलता है : **हमारे पास ऐसे योद्धा हैं जो मृत्यु को उतना ही प्यार करते हैं जितना तुम जीवन को।'**

अल्लाह पैगम्बर मोहम्मद द्वारा मुसलमानों को निरंतर युद्ध (जिहाद) के लिए प्रेरित करने का आदेश देता है।

हे नबी ईमान वालों को लड़ाई पर उभारो। यदि तुममें 20 जमे रहने वाले होंगे तो वे 200 पर प्रभुत्व प्राप्त करेंगे और यदि तुममें 100 हों तो वे 1000 काफिरों पर भारी पड़ेंगे, क्योंकि वे ऐसे लोग हैं जो समझ–बूझ नहीं रखते।'

हे ईमान लाने वालों ? उन काफिरों से लड़ो जो तुम्हारे आस–पास हों और चाहिए वे तुममें सख्ती पाएं, और जान रखो कि अल्लाह उन लोगों के साथ है जो डर रखने वाले हैं।

चार्ल्स हेमिल्टन द्वारा लिखित शरियत की मुख्य पुस्तक 'हिदाया' में गैर मुसलमानों के साथ युद्ध के विषय में निम्नलिखित शीर्षकों के अंतर्गत आदेश दिए गए हैं। इसकी विस्तृत जानकारी स्वयं हिदाया पढ़कर ली जा सकती है।

1. **गैर मुसलमानों के विरुद्ध मुसलमानों की एक अथवा दूसरी पार्टी द्वारा निरंतर युद्ध होते रहना चाहिए। (खण्ड–1, पृ.140)**
2. **गैर मुसलमानों को पहले इस्लाम स्वीकार करने की चेतावनी दी जानी चाहिए। इस्लाम स्वीकार करने से इंकार करने और जज़िया देने से भी इंकार करने पर उन पर आक्रमण किया जाना चाहिए।(खण्ड–2, पृ.143)**
3. **गैर मुसलमानों पर उनके द्वारा बिना किसी उत्तेजक कार्यवाही के भी आक्रमण किया जा सकता है। (खण्ड–1, पृ.144)**
4. **यदि बिना चेतावनी दिए हुए भी उन पर आक्रमण कर दिया जाए और उन्हें कत्ल कर दिया जाए तो मुसलमानों पर कोई दण्ड वाजिब नहीं है। (खण्ड–2, पृ.144)**
5. **यह बताना आवश्यक है कि मध्यकालीन युग में हिन्दुस्थान में इसी हिदाया के अनुसार उलेमाओं ने सुल्तानों एवं बादशाहों से इस्लामिक कानून हिन्दुओं पर सख्ती से लगवाया।**

जिहाद निर्दोष लोगों की हत्या की इजाज़त नहीं देता ?

कुरआन आदेश देती है

''और युद्ध करो उनसे यहाँ तक कि मूर्ति पूजा बाकी न रहे और दीन (इस्लाम) पूरा का पूरा अल्लाह के लिए हो जाए। (कुरआन 8:39)

उपरिवर्णित कुरआन की आयत से स्पष्ट है कि जिहाद पूरा तभी होगा जब समस्त मानवता इस्लाम स्वीकार कर लेगी।

स्मरण रहे इस्लाम कुफ्र के विरुद्ध निरंतर युद्धरत है और प्रत्येक मज़हबी मुसलमान को इस युद्ध में भाग लेने को सर्वश्रेष्ठ मज़हबी कर्तव्य बताया है।

कुछ आधुनिक मुस्लिम विद्वानों द्वारा धुँआधार प्रचार किया जाता है कि जिहाद में खून खराबे और बल प्रयोग की अनुमति ही नहीं है। यह झूठ अनेक मुसलमानों द्वारा बहुधा फैलाई जाती है और इस्लाम से अनभिज्ञ लोगों द्वारा सहज ही मान भी ली जाती है। परन्तु इसमें एक छिपा हुआ प्रश्न है जिस पर लोगों का ध्यान कभी नहीं जाता : **''इस्लाम में 'निर्दोष' की परिभाषा''**। इस्लाम ग्रहण करने का एक बार निमंत्रण अथवा घोषणा हो जाने के पश्चात् जो मूर्तिपूजक इस्लाम ग्रहण करने को तैयार नहीं होते वे इस्लाम के मापदण्ड के अनुसार निर्दोष नहीं रहते, अपितु अल्लाह और पैगम्बर के घोर शत्रु और अनाज्ञाकारी बनकर तुरन्त वध योग्य हो जाते हैं। इस तरह की दलील देना जिहाद का ही हिस्सा है। मिस्र निवासी शहीद सैयद कुत्ब इस विषय को स्पष्ट करते हुए उन आधुनिक 'सुधारकों' की भर्त्सना करते हैं जो यह सिद्ध करने के लिए लंबे–लंबे लेख लिखते हैं कि जिहाद केवल सुरक्षात्मक होता है। सैयद कुत्ब ऐसे लोगों को आध्यात्मिक और बौद्धिक (दोनों वर्गों) को पराजयवादी बताते हैं जो ऐसा यह समझ कर करते हैं कि वह इस प्रकार इस्लाम की सेवा कर रहे हैं (जबकि) वास्तव में वह इस्लाम को उस महत्वपूर्ण सिद्धांत से

वंचित कर रहे हैं, जिसकी घोषणा है कि उसका मुख्य ध्येय सभी मानवकृत आधुनिक राजतंत्रों को जिनको वह न्यायपूर्ण नहीं समझता, नष्ट करना है। वह बलपूर्वक कहते हैं कि अल्लाह ने जब–जब मुसलमानों को जिहाद से रोका वह सिद्धांतवश नहीं था, वरन वह केवल एक कूटनीतिक चाल थी। (जॉन एल एस्पासिटो : वॉयसेज़ ऑफ रिसर्जेन्ट इस्लाम, पृ. 24–25)

क्या जिहाद स्वयं की इन्द्रियों पर विजय प्राप्त करने का नाम है?

क्या जिहाद शांतिपूर्ण आंतरिक जिहाद है, इसके विषय में हम ''**फ्रंट पेज़**'' **पत्रिका के वरिष्ठ संपादक जेमी गल्जोव द्वारा श्री बिल वाल्मर** से जो सेंटर फॉर दि स्टडी फॉर पोलिटिकल इस्लाम के निदेशक हैं, तथा जिनका केन्द्र इस्लाम के राजनीतिक पहलू पर शोध करता है, की गई भेंटवार्ता के अंश पाठकों की जानकारी के लिए प्रस्तुत करते हैं।

बिल वाल्मर ने भेंटवार्ता में बताया कि जिहाद की विश्वसनीय जानकारी के लिए हमें इमाम बुखारी द्वारा लिखित **हदीस** में वर्णित जिहाद के आँकड़ों पर नज़र डालना चाहिए। इस पवित्र पुस्तक में दिए गए आँकड़ों के अनुसार लगभग 97 प्रतिशत जिहाद का वर्णन युद्ध आधारित है, साथ–साथ लगभग 3 प्रतिशत अपने से संबंधित आतंरिक जिहाद के बारे में है। वाल्मर के अनुसार निम्नलिखित निष्कर्ष निकलता है :–

1. प्रश्न : क्या जिहाद हथियारों से युद्ध है

   उत्तर : हाँ – 97 प्रतिशत

2. प्रश्न : क्या जिहाद आतंरिक जिहाद है ?

   उत्तर : हाँ – 3 प्रतिशत

स्पष्ट है जिहाद दोनों ही हैं, केवल उनकी मात्रा में अंतर है। पाठक स्वयं निष्कर्ष निकाल लें कि काफिरों (जैसे भारत में हिन्दू तथा अन्य गैर–मुस्लिम) के साथ कौन सा जिहाद अपनाया जा सकता है। इस भेंटवार्ता की संपूर्ण जानकारी इंटरनेट पर www.cspipublishing.com Mohammed _Allah _And_Hinduism.htm> उपलब्ध है।

इस्लाम की संकल्पना और आतंक का महत्त्व

इस्लाम और आतंक : 'इस्लाम अपने ध्येय की पूर्ति के लिए आतंक की इजाज़त देता है या नहीं? यह प्रश्न तालिबान द्वारा अमेरिका पर 11 सितम्बर 2001 के आक्रमण के पश्चात् गरमागरम बहस का विषय बन गया। यद्यपि हिन्दुस्थान सहित दूसरे देश जिहादी आतंकवाद के गत दो दशकों से शिकार हैं परन्तु विश्व की एक मात्र महाशक्ति अमेरिका ने राजनीतिक स्वार्थ के कारण इसका

कभी विरोध नहीं किया था। अफगानिस्तान में रूस के विरुद्ध अमेरिका ने उन्हे अरबों डॉलर के हथियार आदि दिए। तालिबान जो मदरसों में पारम्परिक गहन इस्लामिक शिक्षा प्राप्त विद्वान हैं – उनका जिहाद करने का घोषित ध्येय शुद्ध इस्लाम (सातवीं शताब्दी वाला) को विश्व में फैलाना, उनके शत्रुओं का विनाश, साथ–साथ मुस्लिम समाज में घर कर गई मुस्लिम औरतों की बेपर्दिगी, उनकी उच्छृंखलता, मुस्लिम पुरुषों द्वारा दाढ़ी न रखना, हराम चीज़ों का उपयोग इत्यादि कुरीतियों से उनको विरत करना है।

तालिबान की मज़हबी निष्ठा की सच्चाई से परिचित कुछ मुस्लिम विद्वान् मन से उनके प्रशंसक हैं और उनके विश्व इस्लामीकरण के मिशन से सहानुभूति रखते हैं परन्तु इस प्रकार की विचारधारा को आधुनिक जगत घृणा की दृष्टि से देखता है, इसलिए विद्वान् प्रकट रूप में शांति, सद्भावना और मानव भ्रातृत्व का सबसे बड़ा हिमायती बताते हुए तालिबान की इन आतंकी गतिविधियों को इस्लाम के विरुद्ध होने का घनघोर नाटकीय प्रोपेगंडा करते हैं।

इस प्रोपेगंडा की प्रामाणिकता सिद्ध करने के लिए वे कुछ कुरान की आयतों के उद्धरण देते हैं जैसे – धर्म में ज़ोर ज़बरदस्ती नहीं (कुरान 2 : 256) इत्यादि। वे भलीभाँति जानते हैं कि कुरान के सक्षम व्याख्याकारों के अनुसार मक्का काल की वे आयतें कुफ़्र को दमन करने के लिए पैगम्बर मोहम्मद के पास पर्याप्त शक्ति के अभाव में अवतरित हुईं थीं और फिर मदीने पहुँचने पर पर्याप्त शक्ति संपन्न हो जाने पर सुरा किताल (कुरान 47–मोहम्मद) के उतरने के बाद निरस्त हो चुकी हैं।

सोची समझी रणनीति के तहत इस धुँआधार झूठे प्रचार के शिकार अनेक हिन्दू विद्वान, मीडिया में जड़ जमाए पत्रकार और राजनीतिक, धार्मिक नेता तोते की भाँति इन्हीं तर्कों को दोहराते रहते हैं। काफिरों (हिन्दुओं) को इस्लाम ग्रहण न करने पर कत्ल करने, पकड़ने, गुलाम बनाने, बंदी स्त्रियों और बच्चों को लूट के माल की तरह उपयोग करने के आदेश देने वाली मदीने में अवतरित कुरान की जिहादी आयतों की इन प्रोपेगेन्डा करने वालों के द्वारा कहीं चर्चा ही नहीं होती। उन्हें पूर्ण विश्वास है कि हिन्दू समाज पढ़ कर तथ्य जानने में विश्वास ही नहीं करता और इसी कारण उनके झूठे प्रोपेगेन्डा का हिन्दू समाज पर व्यापक प्रभाव पड़ा हुआ है। यह प्रतिक्रिया तब तक जारी रहेगी जब तक हिन्दू समाज अपनी निद्रा अवस्था से उठकर स्वयं कुरआन पढ़कर सत्य जानने की कोशिश न करे। इस्लामी मज़हबी किताबें जैसे कुरान और हदीस सभी भाषाओं में सरलता से किसी भी मुस्लिम दुकान पर मिलती हैं।

युद्ध की संकल्पना और आतंक का महत्व

पाकिस्तान की सेना के सेवानिवृत्त ब्रिगेडियर एस.के.मलिक ने एक महत्त्वपूर्ण

पुस्तक ''कुरानिक कॉन्सैप्ट ऑफ वॉर'' लिखी है। इस पुस्तक की भूमिका पाकिस्तान के पूर्व राष्ट्रपति जिया उल हक ने लिखी है। इस पुस्तक को पाकिस्तानी सेना के सभी अफसरों तथा सैनिकों को पढ़ना और उसके अनुसार अमल करना आवश्यक है। इस पुस्तक में **'जिहाद में आतंक'** की भूमिका पर विद्वान् लेखक लिखता है : ''शत्रु को आतंकित कर देना केवल साधन ही नहीं, साध्य भी है। शत्रु को एक बार आतंकित कर दिया जाए तो फिर कुछ और करना शेष नहीं रह जाता। ..... दुश्मन की सेना को उसके रसद मार्ग को बंद कर देने से आतंकित नहीं किया जा सकता। ऐसा करने के लिए उसका विश्वास नष्ट करना आवश्यक है।'' विश्वास नष्ट करने के उद्देश्य से आतंक फैलाने के लिए मूर्तियों और मंदिरों, पाठशालाओं को ध्वस्त करना और उनके पुजारियों, हिन्दू जन–साधारण के अँधाधुंध कत्लेआम और उनकी स्त्रियों, बच्चों, संपत्ति को लूट लेने से बेहतर कौन सा मार्ग हो सकता है ?

हमने भारत के इतिहास में प्रत्येक इस्लामी आक्रांता और शासक को यही सब करते पाया है – लेखक

ब्रिगेडियर मलिक कुरान की कुछ आयतें अपने विचारों की पुष्टि में पेश करते हैं – ''हम काफिरों के दिलों में जल्दी ही आतंक बिठा देंगे, इसलिए कि उन्होंने ऐसे चीज़ों को अल्लाह का शरीक ठहराया है जिनके हक में अल्लाह ने कोई प्रमाण नहीं उतारा। और उनका ठिकाना आग, जहन्नुम है और जालिमों का क्या ही बुरा ठिकाना है।'' .... मैं अभी काफिरों के दिलों में भय डाले देता हूं तो तुम उनकी गर्दनों पर मारो और उनके हर जोड़ पर चोट लगाओ। किन्तु इससे भी महत्वपूर्ण यह आदेश है कि अल्लाह पैगम्बर को आदेश देता है कि युद्ध में लोगों को बंदी बनाने से पहले उनका बेहिसाब वध कर देना चाहिए।

'किसी नबी को छूट नहीं है कि वह युद्ध में लोगों को बंदी बनाए जब तक कि वह धरती में कत्लेआम न कर दे। तुम लोग दुनिया की सुख सामग्री (लूट का माल) चाहते हो और अल्लाह आखिरत चाहता है और अल्लाह प्रभुत्वशाली और तत्वदर्शी है (कुरान : 8: 67)।

इसके अतिरिक्त पैगम्बर मोहम्मद स्वयं स्वीकार करते हैं कि उनके मिशन की सहायता के लिए अल्लाह ने उनको इस्लाम के शत्रुओं को आतंकित करने की शक्ति से नवाज़ा था। ''मुझे सभी दूसरे पैगम्बरों के ऊपर छह विशेषताएं दी गई हैं :

1. मुझे ऐसे शब्द दिए गए हैं जो संक्षिप्त हैं परन्तु जिनके अर्थ अति व्यापक हैं,
2. अल्लाह और उनके रसूल के शत्रुओं के दिल में आतंक बिठाने में मुझे सहायता दी गई है,
3. लूट का माल मुझे जायज कर दिया गया है,

4. पूरी पृथ्वी मेरे लिए शुद्ध और पूजा का स्थान बना दी गई है,
5. मुझे समस्त मानव जाति के लिए भेजा गया है
6. मेरे पश्चात् दूसरा पैगम्बर नहीं आएगा।

(सही मुस्लिम : 1062)

स्वयं पैगम्बर मोहम्मद का उनके विरोधियों के हृदय में कितना आतंक घर कर गया था इसके अनेक उदाहरण उनकी जीवनी में पाए जाते हैं। इसीलिए तालिबान का यह कहना कि वे जो कुछ कर रहे हैं, इस्लामी तालीम के अनुसार हैं और उनका यह अनिवार्य कर्तव्य है, गलत नहीं कहा जा सकता।

यहाँ यह बताना भी आवश्यक है कि मदरसों में पढ़ाई उपर्युक्त विवरण पर आधारित रहती है। मदरसों के संचालकों/उलेमा शिक्षकों के ऐसे विचारों और इस्लाम के मूल ग्रंथों, कुरान तथा हदीसों में इस प्रकार की मान्यताओं के होते यह कैसे संभव है कि मदरसों में अल्प–आयु से युवा–अवस्था तक पढ़ने वाले तालीबानों में मूर्तिपूजा, मूर्तिपूजकों तथा पैगम्बर मुहम्मद को न मानने वालों के विरुद्ध तीव्र नफरत पैदा न हो जाए ? और वह धर्मान्तरण और दूसरे उपायों और अंत में बतौर आखिरी इलाज जिहाद (हिंसा) द्वारा उनके उन्मूलन को अपना मुख्य मज़हबी फर्ज न मानने लगे। जिहाद करने से जीतने पर पृथ्वी के सभी सुख तथा मरने पर बहिश्त के सुख मिलने का आश्वासन स्वयं पैगम्बर ने दे रखा है।

सुश्री जेसिका स्टर्न जो हार्वर्ड विश्वविद्यालय में पढ़ाती हैं, द्वारा लिखित लेख अमेरिका के विदेश विभाग की पत्रिका के नवम्बर/दिसम्बर 2000 के अंक में छपा। इस लेख में बताया गया कि किस प्रकार पाकिस्तान स्थित इस्लामी संगठन जैसे हिजबुल मुजाहिद्दीन भारत के जम्मू–कश्मीर में आतंकवादी गतिविधियाँ चलाते हैं। भारत सरकार का मानना है कि 3000 से 4000 मुजाहिद्दीन कश्मीर घाटी में किसी एक समय संभवतः होते हैं। इनमें लगभग 40 प्रतिशत पाकिस्तानी या अफगानी तथा उनमें 80 प्रतिशत कम आयु के जिहादी होते हैं। लेख में लिखा है कि अमरीकी सरकार का अनुमान है कि भारत के लगभग चार लाख फौजी जम्मू–कश्मीर में हैं। यह पाकिस्तानी सेना का 2/3 हिस्सा हैं। इतनी बड़ी संख्या में सैनिक भारत वर्ष को मजबूरन जम्मू–कश्मीर में रखने पड़ते हैं जिससे जिहादी आतंकवाद पर नियंत्रण किया जा सके। इस फौज पर भारी खर्च किया जाता है जबकि 3 से 4 हज़ार मुजाहिद्दीन छोटे शस्त्र लेकर बिना किसी विशेष खर्चा किए लड़ते हैं। (यही हाल अब ईराक में अमेरीकी फौज का है जिसे जिहादी आतंकवादियों से लड़ना पड़ रहा है – लेखक)

1980 के दशक में पाकिस्तानी शासक जनरल जियाउलहक ने मदरसे स्थापित करने पर सर्वाधिक बल दिया। उस समय के मदरसों के तालिबान अफगानिस्तान युद्ध में लड़े। धीरे–धीरे इन मज़हबी मदरसों की संख्या बढ़ती गई जिनका खर्च धनाढ्य

पाकिस्तानी उद्योगपति तथा अनेक खाड़ी देश तथा सउदी अरब उठाता है। अनेक मदरसों में जिहाद की विस्तृत शिक्षा दी जाती है। ये मदरसे स्नातकों को अपना मज़हबी फर्ज पूरा करने के लिए उक्साते हैं ताकि वे कश्मीर जाकर हिन्दुओं के विरुद्ध जिहाद करें। स्वयं पाकिस्तानी अधिकारियों के अनुसार पाकिस्तान स्थित मदरसे लगभग 10 से 15 प्रतिशत जिहादी मानसिकता पैदा करते हैं। मिसाल के तौर पर उस काल के मंत्री मुइनुद्दीन हैदर इन समस्याओं को जानते हैं तथा उनका मानना है कि इस्लाम की इन मदरसों में दी जाने वाली शिक्षा स्वयं पाकिस्तान के हित में नहीं है। यही कारण है कि पाकिस्तान की सरकार सब मदरसों को पंजीकृत करने पर बल देती हैं परन्तु वहाँ के उलेमा मदरसों के पंजीकृत कराने के विरुद्ध हैं। पाकिस्तान में 50,000 मदरसों में से केवल 4350 मदरसों ने अपने आपको पंजीकृत कराया है। खुदामुद्दीन मदरसे के मौलाना का मत है कि मदरसों के पंजीकरण का प्रश्न नहीं क्योंकि ये मदरसे विश्वभर में चलाए जाते हैं तथा 1200 वर्ष पहले ईराक में स्थापित किए गए। इसी प्रकार दारुल–उलूम हक्कानी के मौलाना का मानना है कि पंजीकरण द्वारा पाकिस्तान सरकार मदरसों की मूल भावना को ही समाप्त करना चाहती है। पाकिस्तान की प्रमुख राजनीतिक पार्टी सिपाहे–सहाबा पाकिस्तान (एसएसपी) के उप–प्रमुख मुजीबुर्रहमान इन्कलाबी का मानना है कि मदरसों में प्रस्तावित सुधार इस्लाम विरोधी है। **उनका यह भी मानना है कि जिन–जिन देशों ने मदरसों के ऊपर नियंत्रण किया – जैसे जॉर्डन और मिस्र वहाँ से जिहाद को प्रेरित करने वाली शक्ति ही समाप्त हो गई। स्पष्ट है अमेरिका का यह मानना कि जिहादी मदरसों में ही पैदा होते हैं' सत्य ही है।** (यह स्पष्ट हो जाता है कि मदरसे इस्लाम की रूह हैं – लेखक)

जिहादी मानसिकता की प्रेरणा शक्ति मदरसों में तैयार की जाती है जो बड़ी संख्या में पैदल जिहादी सैनिक देते हैं। (लेबर फॉर जिहाद) तथा धनाढ्य पाकिस्तानी व अरब देश मदरसों को चलाने के लिए धनराशि देते हैं।

जिहाद का नशा

1. **सुश्री जेसिका स्टर्न का मानना है कि अनेक जिहादी जो अफगान युद्ध में लड़े, युद्ध समाप्ति के बाद उन्होंने अपना रुख कश्मीर की ओर मोड़ा क्योंकि उन्हें नए जिहादी स्थल की तलाश थी। जेसिका स्टर्न लिखती हैं कि खलील नामक व्यक्ति जो, गत 19 वर्षों से मुजाहिद था, किसी दूसरी जीवन प्रणाली को अपनाने के लिए तैयार ही न था : उसकी मान्यता है ''यह संभव है कि एक अफीमची प्रयत्न करने पर अफीम खाना छोड़ दे, परन्तु कोई भी मुजाहिद जिहाद नहीं छोड़ेगा। उसे स्वयं जिहादी नशा है।'' एक और जिहादी ने बताया – चाहे भारत हमें कश्मीर सुपुर्द कर दे हम नहीं रूकेंगे तथा**

आगे बढ़ेंगे।

उपरिवर्णित विचार अनेक जिहादियों के हैं जिनसे जेसिका स्टर्न ने कुछ वर्षों पूर्व भेंटवार्ता की। उनका मानना है कि जिहाद का आन्दोलन मज़हबी होने के साथ–साथ आर्थिक मुद्दों से भी जुड़ा है। मदरसे अपने विद्यार्थियों को सिखाते हैं कि जिहाद एक मज़हबी फर्ज है। इसे चलाने के लिए धनाढ्य पाकिस्तानी अपना फर्ज आर्थिक मदद देकर पूरा करते हैं, ताकि उनके बेटे जिहादी बनने से रुक सकें। इसके विपरीत गरीब घरों के बच्चे आमतौर से अपने बेटों को मदरसे में भेजते हैं, ताकि वे जिहादी बनकर अपना मज़हबी फर्ज पूरा कर सकें। एक मां ने बताया कि उसका बेटा कुछ दिन पहले कश्मीर में लड़ते हुए मारा गया। फिर भी वह अपने बाकी 6 बेटों को भी जिहाद करने भेजेगी चाहे वे शहीद हो जाएं। शहीद होने से उन्हें जन्नत नसीब होगी जो वास्तविक जीवन है। ऐसे परिवारों को कट्टर मुस्लिम संगठन आर्थिक सहायता देते हैं। एक इस्लामी संगठन सुहदा–ए–इस्लाम ने जिसे जमायते इस्लामी ने 1995 में स्थापित किया इन शहीदों के परिवारों को 1.3 करोड़ रुपये अनुदान राशि के रूप में दिए। इसी प्रकार लश्कर–ए–तैयबा व रकत–उल–मजाहिद्दीन दोनों संगठन विभिन्न शहीदों के परिवारों को निरंतर आर्थिक सहायता देते हैं।

जब किसी गाँव का बच्चा शहीद हो जाता है तो हज़ारों लोग उसके जनाज़े के साथ चलते हैं जिससे गरीब घराने गाँव में प्रसिद्ध हो जाते हैं। गाँव का प्रत्येक व्यक्ति इस घर को इज़्ज़त की नज़र से देखता है जिससे गाँव के दूसरे लोग भी अपने बच्चों को जिहाद की राह पर भेजने के लिए उत्सुक रहते हैं। लोगों का यह भी मानना है कि घरों में अधिक बच्चे होने के कारण वे अपने बच्चों को मज़हबी काम में लगाना चाहते हैं और यह कहकर सब्र करते हैं बच्चा शहीद हो गया तो क्या? वह किसी और कारण से भी जैसे बीमारी से मर सकता था।

2. फरवरी 17, 2002 की अंग्रेज़ी पत्रिका 'द संडे पायनियर' में इंग्लैंड की पाकिस्तान स्थित पत्रकार **क्रिस्टीना लैम्ब का एक लेख छपा** जिसमें उन्होंने तालीबान के अफगानिस्तान से भागे दो प्रमुख मंत्रियों से अपनी गुप्त बैठक की विस्तृत जानकारी दी। यह भेंट 7 दिसम्बर 2001 को अमेरिका द्वारा अफगानिस्तान पर आक्रमण तथा तालिबान द्वारा कंधार छोड़ने के बाद वापिस बलुचिस्तान भाग आने पर हुई। इन दोनों तालिबानों में एक थे 28 वर्षीय मौलाना अब्दुल्ला साहदी जो तालिबान के उपरक्षा मंत्री थे तथा दूसरे व्यक्ति गठीले शरीर वाले लगभग 35 वर्ष के थे तथा वह भी मंत्री थे। उन्होंने इस भेंट में स्पष्ट कहा कि अनेक तालिबान बलूचिस्तान स्थित मदरसों में ही पढ़े थे और अब अमेरिकी दबाव से भागने पर वापिस उन्हीं मदरसों में पनाह लेने आ गए हैं। (क्या यह स्पष्ट नहीं कि मदरसों में जिहाद करने की प्रेरणा दी जाती

है–लेखक)। इस भेंट में मौलाना साहदी ने बताया कि उन्होंने भागने से पहले अपनी लंबी दाढ़ी मुंडवा दी और कंधारी साफा बांध लिया जिससे वे तालिबानी न लगें।

इस भेंट में कुछ अहम जानकारी दी गई जो प्रस्तुत है। **क्रिस्टीना लैम्ब** लिखती हैं कि भेंट वार्ता की शुरुआत उनकी तालिबान फौज में जाने से हुई, जिससे ज्ञात हुआ कि मौलाना साहदी की कहानी अद्‌भुत है। मौलाना साहदी बताते हैं कि जब वे केवल पाँच वर्ष के थे तब उनके परिवार को क्वेटा में एक शरणार्थी कैम्प में अपने पिता के मरने पर, जो स्वयं मुहाजिर थे और रूस की फौज से अफगानिस्तान में लड़ते–लड़ते मारे गए थे, रहना पड़ा। उनका परिवार अत्यंत गरीब था और खाना भी कठिनाई से मिलता था। आठ वर्ष के होने पर जब उन्हें मदरसे में दाखिला मिला तो परिवार के लोग अति प्रसन्न हुए क्योंकि मदरसे में रहने को स्थान, पढ़ने को किताबें तथा पेट भर खाने को मिलने लगा।

मौलाना साहदी ने बताया कि मदरसे में स्वचालित राइफलें चलाना सिखाया गया, वह कहते हैं कि राइफिल ऐसी चीज़ है कि अगले दिन से ही आप राइफिल चलाने में निपुण हो जाते हैं।

उन्होंने आगे बताया कि सन् 1994 के मध्य में कुछ वृद्ध लोग तथा पाकिस्तान के उलेमाओं (मज़हबी विद्वानों) का एक प्रतिनिधि मंडल मदरसे में आया। आने पर उन्होंने एक फतवा (मज़हबी फरमान) जारी किया कि मदरसे में पढ़ने वाले हम सब, तालिबान में शामिल हो जाएं तथा अफगानिस्तान में जिहाद लड़ने को निकल पड़ें। वह बताते हैं कि, वह कुछ और मदरसों के मित्रों के साथ तालिबान में शामिल हो गए और कंधार के रास्ते चलकर स्पिन वोलडक नामक स्थान पर आक्रमण करने अक्टूबर माह में पहुँच गए। उस समय हम सौ थे और हमने बहुत लोगों को कत्ल किया जिसमें हमारे कुछ साथी भी शहीद हुए। फिर भी हम खुश थे क्योंकि हम इस्लाम की खिदमत में थे और हम तो अल्लाह के सिपाही थे।

मौलाना शाहदी ने सारे अफगानिस्तान में जिसमें हेरत, मजार–ए–शरीफ, कुनडुज़ और बामियान में क्रमशः पाँच सौ, फिर पच्चीस सौ तालिबानों की कमांड संभाली तथा अंत में डायरेक्टर ऑफ डिफैंस बने। उन्होंने बताया कि वह अपने तालिबानों को उत्साहित करते थे कि यदि वह शहीद हो जाते हैं तो जन्नत नसीब होगी तथा मुँह माँगे 72 सदस्यों को जन्नत ले जाएंगे। मौलाना शाहदी दो वर्ष पहले तालीबान के उप–रक्षामंत्री बने और उनकी अक्सर ओसामा–बिन–लादेन से मुलाकात होती रहती थी।

इस भेंटवार्ता की विशेष बात यह है कि उन्होंने दर्शाया कि हम तालिबान ही वास्तव में इस्लाम की रक्षा करने वाले हैं। हमारे बीच ब्रिटिश, अमेरिकी और आस्ट्रेलिया के तालिबान भी शामिल थे। ..... अंत में कहा ''आप देखेंगे कि

फतह हमारी ही होगी और हम अमेरिकियों के टुकड़े–टुकड़े कर देंगे जैसा कि हमने रूसियों के साथ किया और तालिबान का नाम रौशन करेंगे।'' (अब 7 वर्ष बाद (सन् 2009) में पुनः तालिबान, अफगानिस्तान वापिस पहुँच चुके हैं, तथा आधे अफगानिस्तान पर उनका वर्चस्व है – लेखक)

3. 'होली वारियर' स्पीक्स दि लैंग्वेज ऑफ मुशर्रफ शीर्षक से दैनिक समाचार पत्र हिन्दुस्तान टाइम्स दिनांक 5 अप्रैल 2000 में रॉबर्ट फिस्क द्वारा लिखित लेख हक्कानी मदरसे के बारे में है, साथ–साथ निष्पक्ष विश्वविख्यात पत्रिका ''रीडर डाइजेस्ट'' के फरवरी 2002 तथा मार्च 2003 के अंक में छपे लेखों का सारांश जान लेना चाहिए।

पाकिस्तान की जिहादी मशीनें

ज्योफरे गोल्ड बर्ग द्वारा न्यूयार्क टाइम्स मैगज़ीन को दी गई एक पाकिस्तान मदरसे की अंदरूनी रिपोर्ट जहाँ विद्यार्थियों (तालिबान) को घृणा करना और कत्ल करना सिखाया जाता है। (रीडर्स डाइजेस्ट से साभार)

पाकिस्तान के उत्तर–पश्चिम में स्थित उसके उत्तरी, पश्चिमी सरहदी सूबे में खैबर दर्रे के पूरब में स्थित है **हक्कानी मदरसा**। इस मदरसे की गिनती पाकिस्तान में स्थित, बड़े मदरसों में से है जो साढ़े सात एकड़ में फैला हुआ है।

इस मदरसे का निर्माण रशीद अल हक के बाबा ने 1974 में प्रारंभ किया और इसी मदरसे में से अनेकानेक तालिबान के नेतागण को जो काबुल और अफगानिस्तान में लड़े, यहाँ मज़हबी तालीम दी गई। यह मदरसा एक चौमंज़िली इमारत में स्थित है और लगभग तीन हज़ार विद्यार्थी इसमें तालीम ले सकते हैं। इस मदरसे को चलाने वाले है रशीद अल हक के वालिद मौलाना समियुल हक।

1998 से इस मदरसे की रक्षा करने के लिए राइफिलधारी पाकिस्तान पुलिस के नौजवान रहते हैं। मदरसे का कुल खर्च पाकिस्तान स्थित मज़हबी धनदाताओं और फारस की खाड़ी के देशों के राजनीतिक मुसलमानों द्वारा दिया जाता है। इस मदरसे में पढ़ने वाले तालिबानों की आयु 8 से 35 वर्ष तक है। सबसे छोटे बच्चे चार से आठ घण्टे प्रतिदिन फर्श पर पालथी मारकर अरबी भाषा में कुरान कंठस्थ करते हैं। हाइस्कूल और कॉलेज की आयु के छात्रों को आठ साल के शिक्षा क्रम में कुरान तथा हदीस की व्याख्याओं का अध्ययन कराया जाता है। उसके साथ–साथ इस्लामिक इतिहास और फिका (कानून) भी पढ़ाए जाते हैं। इस मदरसे में कोई भी नवीनतम विषयों की शिक्षा नहीं दी जाती ..... सबसे लंबे समय तक अध्ययन करने वाले लड़के मुफ्ती बनने की आशा करते हैं। **मुफ्ती उन विद्वानों को कहते हैं जो इस्लाम का नजरिया फतवों द्वारा जो शादी या पारिवारिक विवाद से लेकर युद्ध में सज़ा के विषय तक दे सकने का अधिकार रखते हैं।**

हक्कानी मदरसा वास्तव में एक जिहादी फैक्टरी है। यह पाकिस्तान में अपनी किस्म का अकेला मदरसा नहीं है। पाकिस्तान के हज़ारों मदरसों में लगभग दस लाख तालिबान पढ़ते हैं। इनमें से अधिकांश मदरसों में उनकी पढ़ाई का केन्द्र बिन्दु हिंसाप्रिय इस्लाम ही है। पाकिस्तान के 65 प्रतिशत मदरसों का पाठ्यक्रम भारत में स्थित (दारुल उलूम देवबंद, उत्तर प्रदेश) में दरस–ए–निज़ामी शिक्षा प्रणाली ही हैं। किन्तु हक्कानी मदरसा पाकिस्तान के मदरसों में विशेष है क्योंकि इस मदरसे ने तालिबान को दूसरे मदरसों की अपेक्षा अधिक नेता/शासक दिए हैं। तालिबान का विस्फोट कंधार में हुआ और वह शीघ्र ही काबूल पहुँच गया। उन्होंने लड़कियों की शिक्षा प्रतिबंधित कर दी। स्त्री–डॉक्टरों को सर्विस से निकाल भगाया। समलैंगिकों को कत्ल कर दिया। हाथ इत्यादि काटने का दण्ड सार्वजनिक रूप से दिया जाने लगा और इस प्रकार पैगम्बर मोहम्मद के नाम को भी बदनाम किया। .... गोल्ड बर्ग लिखते हैं, मुझे इस मदरसे में रहने और कुरान पढ़ने की इजाज़त मिल गई। वह इस मदरसे में एक माह तक शिक्षा पाते रहे और जो उन्होंने अनुभव किया, उसको अपने लेख में लिखा।

गोल्ड बर्ग हक्कानी मदरसे में एक माह तक साधारण तालीबानों की तरह रहे तथा उन्होंने मदरसे का वातावरण अच्छी प्रकार देखा। इस विषय में गोल्ड बर्ग बताते हैं कि ''उनके कमरों में इतने सारे तालीबानों के बावजूद मदरसे में कोई शोरशराबा नहीं होता था, वहाँ न कोई रेडियो था और न कोई टी.वी.। दिन निकलने के पहले ही लड़के उठकर मस्जिद में नमाज पढ़ते थे ... यह कहने की आवश्यकता नहीं कि वहाँ कोई स्त्री दिखाई नहीं देती थी। मुझे छोटे बच्चों के कमरों में नहीं जाने दिया। यद्यपि मेरी दिलचस्पी उनमें ही अधिक थी। शायद कारण था कि तब तक इन बच्चों पर जेहादी जुनून का कवच पूरी तरह नहीं चढ़ पाया था। फिर भी अपने साधारण खेलों में वे मदरसे की राजनीति में रंगते जा रहे थे। छुप्पा–छुप्पी खेल खेलने का उनका ढंग यह था कि एक लड़का किसी पेड़ के पीछे से सहसा ही कूदकर 'ओसामा, ओसामा, चिल्लाता हुआ मुझे गोली मारने का नाटक करता था।

एक महीना मदरसे में रहने के पश्चात् भी गोल्डबर्ग वहाँ की अनेक बातों से अनभिज्ञ ही रहे। मिसाल के तौर पर वे जानना चाहते थे, कि ये लड़के मदरसे में कहाँ से आए हैं, किन्तु उनसे इस विषय में बात करने से विद्यार्थी कतराते थे। बाद में किसी प्रकार गोल्डबर्ग को पता चल गया कि उनके पीछे जिन दो लड़कों को लगाया गया था, अफगानी अनाथ लड़के थे।

गोल्डबर्ग बताते हैं कि एक दिन ''वह हदीस की क्लास में भी बैठे। वहां एक वृद्ध मुल्ला पुस्तक पढ़ कर सुनाता है। किसी भी तालीबान द्वारा प्रश्न पूछने का नियम नहीं है। दलील और बौद्धिक पूछताछ की कोई गुंजाइश ही नहीं रहती।'' यहाँ यह बताना आवश्यक है कि इस्लाम में तालीबानों को केवल जो लिखा है उसे

मानना पड़ता है।

कुछ दिनों के बाद उनको लगभग दो सौ तालीबान की एक सभा में बैठने का मौका मिला जिसकी अध्यक्षता एक मुल्ला कर रहा था। ''मुझसे पूछा गया कि अमेरिका ओसामा–बिन लादेन के पीछे क्यों पड़ा है ?'' मस्जिद में एक मुल्ला की मौजूदगी में 200 पगड़ीधारी तालिबानों के बीच बैठकर ऐसे प्रश्न का उत्तर देना बहुत कठिन था। मैंने पैगम्बर के हवाले से कहा कि ''निरपराध लोगों का वध करना जिहाद में भी मना है।''

गोल्डबर्ग लिखते हैं : ''मेरा पैगम्बर का संदर्भ देना उनको पसंद नहीं आया। वे एक स्वर से ''ओसामा–ओसामा'' चिल्लाने लगे। वली नामक एक लड़के ने कहा : **''पश्चिम इस्लाम से भय खाता है। ओसामा इस्लाम को काफिरों की गंदगी से मुक्त कर बलवान बनाना चाहता है। पूरे विश्व को मुसलमान बनाना चाहता है।''** वह बारी–बारी से ओसामा का पक्ष लेने लगे। (विवाद को समाप्त करने के लिए मैंने पूछा ''क्या इस्लामी कानून जिहाद में अणु बम के प्रयोग को उचित ठहराता है ?) उत्तर मिला : ''अणु बम अल्लाह की देन है, इसलिए उसका प्रयोग बिल्कुल उचित है। फिर मैंने पूछा : ''आप लोगों में से कौन–कौन ओसामा को अणु बम देने के पक्ष में है'' ? क्लास में बैठे सभी तालिबानों ने अपने हाथ उठा दिए।

''मैंने अंतिम प्रश्न पूछा कि यदि आपको पता लगे कि अमेरिका लादेन को पकड़कर उस पर अभियोग को चलाने के लिए अमेरिका ले जा रहा है तो आप क्या करेंगे ? मुहम्मद नामक लड़के ने उत्तर दिया : ''हम ओसामा के लिए अपने प्राण न्यौछावर कर देंगे। हम अमरीकियों का कत्ल कर देंगे।'' मैंने पूछा ''किन अमरीकियों को ?'' उत्तर था ''सबको'' (इन उत्तरों से तालिबानों के मस्तिष्क में जो विष भर दिया गया, उसे समझिए–लेखक)

''मैं एक महीना हक्कानी मदरसे में ठहरा। मदरसे में भरती प्रत्येक बच्चे को एक ही सिद्धांत की शिक्षा मिलती है। अमेरिका यहूदियों के वश में है और यहूदी शैतान के बस में।'' मौलाना समीयुल हक विश्व को दो परस्पर विरोधी कैंपों में विभाजित करते हैं : दारुल इस्लाम (इस्लाम शासित देश) और शेष सब दारुल हरब (युद्ध देश, जहाँ मुस्लिम राज्य बनाकर शांति स्थापित करना इस्लाम का ध्येय एवं कर्तव्य है)।

समीयुलहक्क कोई नई बात नहीं कह रहे थे, यह सब कुरआन में वर्णित है।

इस्लाम के आधुनिक शीर्षस्थ कहे जाने वाले विद्वानों में से मिस्र के शहीद सैयद कुत्ब, जमातुल इस्लामी के संस्थापक सैयद अबू आला मौदूदी और केन्द्रीय सरकार में शिक्षा मंत्री रहे मौलाना अबूल कलाम आजाद जैसे विद्वान भी यही विचार रखते हैं जो मौलाना समीयुलहक्क तथा उन जैसे विभिन्न मदरसों के संस्थापक और

संचालक रखते हैं।

अपने लेख में अंतिम निष्कर्ष निकालते हुए गोल्डबर्ग कहते हैं : **''इन बेचारे अबोध और अति संवेदनशील आयु के बच्चों को मदरसों में दुनियावी वास्तविकता से बिल्कुल अनभिज्ञ रखा जाता है, उनको केवल यही शिक्षा दी जाती है कि वास्तविकता एक ही है। ''इस्लाम का जिहादी दर्शन – यह मदरसा एक अनुपम जिहादी मशीन है।**

इन मदरसों को चलाने वाले संस्थापक/प्रशासक/अध्यापक सदैव इस बात पर बल देते हैं कि मदरसे का आतंकवाद और आतंकियों से कोई संबंध नहीं है। गोल्डबर्ग कहते हैं कि ''उनसे भी मदरसे के संस्थापक/प्रशासक मुल्ला समीउल हक ने कहा कि उनका मदरसा तालिबान विश्वविद्यालय भले ही कहा जा सकता हो वह आतंकवाद सिखाने का कैम्प हरगिज़ नहीं है।'' गोल्डबर्ग कहते हैं कि ''यदि देखा जाए तो एक प्रकार से समीउल हक ठीक ही कह रहे थे। मैंने मदरसे में कभी कोई हथियार नहीं देखा, न कभी बम बनाने के विषय में कोई लेक्चर सुना। किन्तु जब अफगानिस्तान में तालिबान युद्ध में अपने शत्रु नार्दन एलाइंस से हार रहे थे तब मौलाना हक्क ने अपना मदरसा बन्द कर दिया और अपने तमाम मदरसे में पढ़ने वालों को तालिबान की ओर से युद्ध लड़ने को अफगानिस्तान भेज दिया।''

यह तथ्य वास्तव में सभी मदरसों पर लागू होता है। वहाँ बम बनाने की कोई शिक्षा भले ही नहीं दी जाती हो परन्तु रोज़ाना उनके मस्तिष्क में गैर–इस्लाम के प्रति जो विष भरा जाता है, घृणा करना सिखाया जाता है और इस्लाम के अतिरिक्त सभी मतों, कौमों, दर्शनों, संस्कृतियों और शासनों को नष्ट कर उनके स्थान पर इस्लाम मज़हब और शरीयत शासन को स्थापित करना उनका सर्वश्रेष्ठ पैगम्बर द्वारा बताया गया मज़हबी कर्तव्य बताया जाता है, उसके पश्चात् गैर–इस्लाम के विरुद्ध जिहाद में उतरने में उनको देर नहीं लगती। इस बात की पुष्टि निरंतर दैनिक समाचार पत्रों और पत्रिकाओं में छपती रहती है जिससे पाठक परिचित हैं।

4. <u>रीडर्स डाइजेस्ट के अंक मार्च 2003 के हवाले से</u>

मार्च 2003 के रीडर्स डाइजेस्ट में ब्राएन एडस द्वारा लिखित एक लेख ''सउदी अरब का खतरनाक निर्यात'' शीर्षक से छपा था। लेख में लेखक ने बताया कि सउदी अरब के अनेक गैर सरकारी संगठन आतंकवादियों से जुड़े हैं। जैसे वहाँ का अल हरामेन इस्लामिक फाउंडेशन विश्व के पचास देशों में अल–कायदा संगठन से मिलकर सक्रिय है।

सउदी अरब की सरकार को इसकी विस्तृत जानकारी है। सउदी राज परिवार अरबों डालर संसार भर में 1350 मस्जिदों, 210 इस्लामिक केन्द्रों तथा सैंकड़ों मदरसों तथा कॉलिजों पर खर्च करता है। इसके अतिरिक्त सउदी अरब हज़ारों मदरसे, पाकिस्तान, अफगानिस्तान, मध्यएशिया और अफ्रीका में चलाता है। प्रोफेसर

वली नस्र जो अमेरिका में इस्लामिक आतंकवाद के विशेषज्ञ हैं – का मानना है कि इनमें से बहुत से मदरसे वास्तव में इस्लाम के सैनिक केन्द्र हैं जिनमें इस्लाम की मज़हबी शिक्षा के साथ–साथ सैनिक शिक्षा भी दी जाती है।

उनका कहना है कि अलकायदा के बहुत से सदस्य सउदी अरब द्वारा चलाए गए इन मदरसों के स्नातक हैं उन्होंने बताया कि मिसाल के तौर पर हारुन फज़ल नामक छात्र भी वहाबी कुरानी स्कूल कोमोरोस द्वीप समूह (जो पूर्वी अफ्रीका के निकट स्थित है) तथा पाकिस्तान के मदरसों में पढ़ा था जिसने नैरोबी स्थित अमरीकी दूतावास को 1998 में विस्फोट से उड़ाया और फलस्वरूप 213 लोगों की जानें गईं। (यह मदरसों में पढ़े तालिबान की उपलब्धि थी – लेखक)

पश्चिम यूरोप यानि एडिनबरा (यू.के.) से लिस्बन (पुर्तगाल) तथा बुस्रेल्स से मास्को तक अनेक मस्जिदें तथा मदरसे सउदी अरब चलाता है। इन मदरसों से पैदा होने वाले तालिबान उन देशों के लिए खतरा बनेंगे।

ऊपर लिखे सब तथ्यों के बावजूद सउदी अरब की सरकार विश्व के अनेक देशों के साथ (विशेषकर अमेरिका तथा यूरोप) आतंकवाद से लड़ने का नाटक करती है। ज़ाहिर है कि सउदी अरब सरकार की कथनी और करनी में ज़मीन आसमान का अंतर है, (जिसे सब पाठकों को समझना चाहिए–लेखक)।

मदरसों के संचालकों/उलेमा शिक्षकों के ऐसे विचारों और इस्लाम के मूल मज़हबी ग्रंथों, कुरआन तथा हदीस में इस प्रकार की मान्यताओं के होते यह कैसे संभव है कि मदरसों में अल्प आयु से युवावस्था तक पढ़ने वाले तालिबानों में मूर्ति पूजा, मूर्तिपूजकों तथा पैगम्बर मोहम्मद के असूलों को न मानने वालों के विरुद्ध तीव्र घृणा उत्पन्न न हो जाए ? और वह धर्मान्तरण तथा ऊपर वर्णित उपायों और अंत में मजबूरन आखिरी इलाज नवीनतम हिंसक तरीकों से जिहाद द्वारा उनके उन्मूलन को अपना मुख्य मज़हबी फर्ज न मानने लगें ?

इस्लामी मदरसों का मुख्य ध्येय मुस्लिम बच्चों को इस्लामियत में पारंगत करना होता है, जिससे वे स्वयं उसका निष्ठापूर्वक पालन करें और दूसरों को भी उसका निष्ठापूर्वक पालन करना सिखाएं। **इसलिए मदरसों की भूमिका को समझने के लिए इस्लाम की मज़हबी, सामाजिक और राजनीतिक मान्यताओं और दर्शन को भलीभांति समझना आवश्यक है।**

शेख अहमद सरहिंदी अकबर के शासनकाल के प्रसिद्ध उलेमा अपने विख्यात पत्रों में लिखते हैं : इस्लाम और हिन्दू धर्म एक दूसरे के विरोधी हैं। उनके दर्शन एक दूसरे के विपरीत हैं। जो मुसलमान हिन्दुओं से संपर्क रखता है वह अपने मज़हब की अप्रतिष्ठा करता है। अच्छे मुसलमान को गंदे काफिरों से दूर रहना चाहिए। हिन्दू धर्म इस्लाम के विरुद्ध ही नहीं है, अपितु हिन्दू इस्लाम के घोर शत्रु

हैं। इसलिए मुसलमानों को उनके साथ नहीं रहना चाहिए और हिन्दू रीति–रिवाज़ों के त्याग द्वारा उनके विरुद्ध अपनी शत्रुता का प्रदर्शन भी करना चाहिए। (एच.ए. करंदीकर : इस्लाम इन इंडियाज़ ट्रान्जीशन टू मॉडर्निटी, पृ. 114)

कुफ्र के विरुद्ध निरन्तर युद्ध : जिहाद

इस्लाम में मूर्ति पूजा, बहुदेवता पूजा और उनके अनुयायियों के बीच केवल बौद्धिक विरोध ही पर्याप्त नहीं है, इन बुराइयों से दूसरे लोगों को छुड़ाने की ज़िम्मेदारी भी इस्लाम की है जिसके लिए कुरआन और हदीस अनेक साधनों के उपयोग का उपदेश करती है। इन सभी प्रयासों द्वारा किसी गैर मुस्लिम समाज अथवा देश में इस्लाम मज़हब और इस्लामी कानून (शरीया) की स्थापना के लिए ही **जिहाद** शब्द का उपयोग किया गया है।

जिहाद एक अंतर्राष्ट्रीय धारणा है जो संसार के प्राणियों को दो निरन्तर विरोधी गुटों में बाँटता है एक दारुल हर्ब (युद्ध स्थल), जहाँ इस्लाम का राज्य नहीं है, दूसरा दारुल–इस्लाम (इस्लामी स्थान), जहाँ इस्लामी राज्य है। जिहाद उन दोनों में निरन्तर युद्ध की स्थिति है, जिसका अन्त तभी होगा जब काफिरों पर मुसलमानों को पूर्णरूपेण प्रभुत्व प्राप्त हो जाए और सारे विश्व में दूसरे सभी मतों पर इस्लाम का वर्चस्व स्थापित हो जाए।'' (प्रो. डेनियल पाइप्स : इन द पाथ आफ गॉड, पृ. 46)

''क्योंकि जिहाद स्थायी युद्ध की स्थिति है। उसमें निष्ठापूर्वक शांति का कोई स्थान नहीं है।

हमारे देश के कूटनीतिज्ञ मुसलमान उलेमा मानते हैं कि वर्तमान हालातों में सशस्त्र जिहाद सफल नहीं होगा। अतः उन्होंने वर्तमान उदारवादी, सेक्युलर, संविधान और वोटों की लालची पार्टियों का सहयोग लेते हुए शांतिपूर्ण जिहाद की निम्नलिखित विभिन्न कार्य योजनाएं बनाई हैं जिन्हें वे रात–दिन सफल करने में जुटे हुए हैं; और पिछले 60 वर्षों के इसके परिणाम भी स्पष्ट दिखाई दे रहे हैं। इनमें से कुछ शांतिप्रिय जिहादी कार्यक्रम और योजनाएं निम्न प्रकार हैं –

1. **मुस्लिम जनसंख्या वृद्धि दर को बढ़ाना ताकि अगले 15–20 वर्षों में वे बहुमत में आकर भारत की सत्ता के स्वतः वैधानिक अधिकारी हो जाएं। इसके लिए,** (1) बहु–विवाह (2) परिवार नियोजन न अपनाना (3) हिन्दू लड़कियों का अपहरण, (4) धनी, व शिक्षित हिन्दू लड़कियों का स्कूल व कॉलेजों में तथा कार्यालयों में, प्रेमजाल में फँसाकर विवाह करना, (5) बंगलादेश से मुसलमान युवकों को योजनापूर्ण ढंग से भारत में बसाना, यहाँ की लड़कियों से उनकी शादी कराना व रोजगार दिलाना आदि।

2. **इस्लामी शिक्षा के आधुनिकीकरण के लिए सरकारी सहायता माँगना** : (1) इनमें कंप्यूटर के प्रशिक्षण के बाद इंटरनेट, ई–मेल आदि से इस्लाम का प्रचार करना, (2) मदरसों द्वारा मज़हबी कट्टरता पैदा करना, (3) अनधिकृत मदरसों और मस्जिदों में गैर–कानूनी कार्य करना, (4) अरबी संस्कृति को अपनाने पर बल देना, (5) मदरसों में आधुनिक शिक्षा को बढ़ावा देने के सरकार के प्रयास का विरोध करना और (6) मदरसों के प्रबंधन में किसी भी प्रकार के सरकारी हस्तक्षेप का विरोध करना।

3. **मुसलमानों की आर्थिक उन्नति के लिए सरकारी सहायता व नौकरियों में आरक्षण मांगना** : (1) मुसलमान युवकों को रोज़गारयुक्त शिक्षा के लिए मुस्लिम बहुल क्षेत्रों में सरकारी स्कूल खुलवाना, (2) उर्दू के विकास के लिए निरंतर संघर्ष करना, (3) प्रोफेशनल कॉलेजों में दाखिले के लिए आरक्षण माँगना, (4) उच्च सरकारी परीक्षाओं की तैयारी के लिए विशेष सुविधाएं माँगना और (5) निजी व्यवसाय खोलने के लिए कम दर पर ऋण पाने की माँग करना।

4. **मज़हबी कार्यों के लिए आर्थिक सहायता की मांग करना** : (1) बढ़ती मुस्लिम जनसंख्या के लिए अधिक से अधिक हज सब्सिडी की माँग, (2) मुस्लिम बहुल राज्य में हज–हाउसों की स्थापना, (3) मस्जिद, मदरसा व मज़हबी साहित्य के लिए प्राप्त विदेशी सहायता पर सरकारी हस्तक्षेप का विरोध, (4) उर्दू के अखबारों के लिए सरकारी विज्ञापन तथा छापने के लिए सस्ते दामों पर कागज़ का कोटा माँगना, (5) वक्फ बोर्ड की संपत्ति को सरकारी अधिकार से मुक्त रखना और (6) इमामों के लिए सरकार से वेतन माँगना।

5. **राजनैतिक अधिकार माँगना** : (1) मुस्लिम पर्सनल–लॉ का अधिकाधिक प्रयोग एवं सरकारी हस्तक्षेप का विरोध, (2) समान आचार संहिता का विरोध, (3) गैर–कानूनी ढंग से आए बंगलादेशी मुसलमानों की वापसी का विरोध, (4) बंगलादेशी व पाकिस्तानी नागरिकों को वीज़ा समाप्त होने पर भी रुके रहने पर मदद करना, (5) पुलिस व सेना तथा अन्य संवेदनशील विभागों में मुसलमानों को आरक्षण देने की मांग, (6) जिहादी कार्यों के लिए नशीले पदार्थों की तस्करी तथा नकली नोटों का

प्रसार करना व करवाना, (7) देश में राजनैतिक अस्थिरता एवं अलगाववाद पैदा करने वाले गुटों को सहयोग देना, (8) राज्य एवं संसद के चुनावों में विभिन्न राजनैतिक पार्टियों के सहयोग से मुस्लिम एवं मुस्लिम–हितकारी नेताओं को कूटनीति से वोट डालकर चुनाव में जिताना तथा राजनैतिक सत्ता प्राप्त करना, (9) हिन्दू नेताओं को इस्लाम हित में इस्तेमाल करना और (10) शरीयत कानून के दायरे में आने की मांग निरंतर करते रहना।

6. **प्रचार–माध्यमों पर कब्ज़ा करना** : (1) छद्म सेक्यूलरवादी लेखकों को आर्थिक व अन्य प्रकार के प्रलोभन देकर इस्लाम हितकारी दृष्टिकोण को पत्र–पत्रिकाओं, प्रचार–माध्यमों टीवी, रेडियो आदि में सामग्री प्रस्तुत करना, (2) फिल्मों में इस्लाम के मानवीय व उदार स्वरूप को प्रस्तुत करना, (3) उच्च पदों पर मुस्लिम व मुस्लिम हितकारी व्यक्तियों को बैठाने की माँग, (4) शोध के नाम पर गैर–मुस्लिमों के प्राचीन इतिहास का विकृतिकरण एवं रक्त–रंजित मुस्लिम इतिहास को उदार रूप में प्रस्तुत करना, (5) हिन्दुओं की धार्मिक व सामाजिक मान्यताओं की खुलेआम निंदा करना, (6) इसके विपरीत इस्लाम पर खुली बहस की जगह ***'जिहाद बिल सैफ'*** के द्वारा इस्लाम के आलोचकों को प्रताड़ित एवं उनकी हत्या करना, (7) हिन्दुओं के खुलेआम धर्मान्तरण को उचित ठहराना परन्तु इसके विपरीत कोई मुस्लिम लड़का एवं लड़की स्वतः हिन्दू बनना चाहे तो उससे संबंधित हिन्दू पारिवारिक जनों की हत्या करना, (8) मुसलमानों द्वारा हिन्दू लड़कियों का प्यार जीतना किन्तु साथ ही साथ अपनी बहनों को बलपूर्वक बुरका पहनाना तथा उन्हें हिन्दू लड़कों से दूर रखना, (9) जनसंख्या नियंत्रण उपायों को अस्वीकार करना, (10) बहु–विवाह अपनाना, (11) 21वीं शताब्दी में देश के काफिरों को अल्पसंख्या में तबदील करने का षड्यंत्र जिसमें बंगलादेश तथा पाकिस्तान से सीमा पार से घुसपैठ को बढ़ावा देना, (12) मुसलमानी माफिया को पैसा देना और (13) काफिरों को मूर्ख बनाने के लिए इस्लामी सूफीपन का नकाब पेश करना।

अनेक शांतिपूर्ण जिहादी गतिविधियों में से उपरिवर्णित कुछ थोड़ी सी हैं जिन्हें कि देश के मुसलमान संविधान की आड़ में छद्म सेक्युलरवादियों तथा राजनैतिक पार्टियों के सहयोग से चला रहे हैं। ◆◆◆

अध्याय–४
इस्लाम के मदरसे

इस्लाम मज़हब की शिक्षा का प्रमुख ध्येय अपने विद्यार्थियों में निम्नलिखित भावनाओं को अंकुरित और पुष्ट करना है :

1. मुसलमान अल्लाह की पार्टी हैं और शेष सब अन्य मज़हब वाले लोग शैतान की पार्टी हैं जिन्हें सदैव संघर्षरत रहना चाहिए। स्पष्ट है कि इस संघर्ष में अल्लाह की पार्टी सदैव विजय पाने वाली होगी।
2. अल्लाह व उसके रसूल ने किसी भी अन्य दूसरी पूजा को अपनाना ऐसा पाप कहा है जिसे अल्लाह भी क्षमा नहीं करता।
3. अल्लाह के इन शत्रुओं, उनके धर्म, संस्कृति और दर्शन से घृणा करना है और उनको समूल नष्ट कर उनके स्थान पर इस्लाम मज़हब, इस्लामी नज़रिया, संस्कृति और शरियत शासन को स्थापित करना प्रत्येक मज़हबी मुसलमान के लिए अनिवार्य मज़हबी फर्ज है।
4. अल्लाह के दीन (इस्लाम) और उसके कानून (शरियत) को स्थापित करने के लिए शासनतंत्र पर अधिकार प्राप्त करना आवश्यक है। मुस्लिम राजनीति का यही एकमात्र ध्येय होना चाहिए। प्रत्येक मुसलमान को इस ध्येय की प्राप्ति के लिए अपने उलेमाओं के पथ–प्रदर्शन को अपनाना चाहिए तथा राजनीति में भाग लेना चाहिए।
5. शासन पर अधिकार होते ही काफिरों और कुफ्र का दमन और उन्मूलन मुस्लिम शासन का मुख्य कर्तव्य है।
6. इस ध्येय की प्राप्ति के लिए नसीहत (प्रवचन), फहमायश (चेतावनी/उपदेश), तरगीब (प्रेरणा, प्रलोभन), तबलीग (प्रचार, धर्म परिवर्तन) और परिस्थिति अनुकूल रहने पर पड़ौसी मुल्क की सहायता अथवा बिना सहायता के सशस्त्र

जिहाद, ये सभी उपाय इस्लाम मज़हब के अनुकूल हैं। इस्लाम मज़हब में लक्ष्य प्राप्ति के लिए कोई भी साधन अपनाया जा सकता है।

7. यदि किसी मुसलमान अथवा किसी मुस्लिम समुदाय को पराजय अथवा कठिनाई भोगनी पड़ती है तो इसका कारण यह समझा जाता है कि उनके इस्लामी विश्वास तथा इस्लामी आचरण में, जिसका जिहाद महत्वपूर्ण अंग है, कमी रह गई है।

इस्लाम के प्रारंभिक काल में मदरसे, जैसे आज जाने जाते हैं, न ही थे। उस समय मदरसों की कोई निश्चित प्रणाली नहीं थी। इस्लाम के विद्वान् अपने घरों पर निजी तौर से इस्लामी शिक्षा देते थे। इसी प्रकार अनेक विद्वान् अपने शिष्यों को घरों में, मस्जिदों या अन्य मज़हबी स्थानों पर तालीम देते रहे। मुख्यतः यह तालीम अल्लाह से बरकत पाने के उद्देश्य से निःशुल्क दी जाती थी। समय बीतने पर अनेक मुस्लिम शासकों तथा उनके दूसरे राजदरबारियों ने विभिन्न देशों में मदरसे खोले। हिन्दुस्तान में भी ये मदरसे प्रारंभ में उसी प्रणाली पर चले तथा कई शताब्दियां बीतने के बाद अनेक सुल्तानों ने अपने राजकाल में मदरसे स्थापित कराए जिसका खर्च स्वयं सुल्तानों द्वारा दिया जाता था। ऐसा माना जाता है कि मदरसों की प्रणाली जैसे आज जानी जाती है, हिजरा की चौथी शताब्दी में प्रारंभ हुई।

मौलाना हाकिम सैयद अब्दुल हई की लिखित पुस्तक ''इंडिया ड्यूरिंग मुस्लिम रूल'' के एक अध्याय में मध्यकालीन हिन्दुस्थान में चलाए गए मदरसों का विवरण पुस्तक के 23 पृष्ठों में दिया है। लेखक लिखता है कि इस्लाम के शुरुआत में मदरसे का जैसे आज जाने जाते हैं, उल्लेख नहीं है। लेखक के अनुसार सर्वप्रथम इस्लामी तालीम को एक प्रणाली के रूप में कायम करने की कोशिश हिजरा सन् की चौथी शताब्दी में प्रारंभ हुई। लेखक के अनुसार पहला मदरसा निशापुर (ईरान) में स्थापित हुआ। इसके पश्चात् दो विख्यात मदरसे जो विश्वविख्यात बने, वे थे – निज़ामिया और मुस्तनसरैया जो बगदाद में स्थित हैं। हिन्दुस्तान में मुस्लिम शासन के शुरू के काल में मदरसों की कोई प्रणाली नहीं थी। केवल इस्लाम के विद्वान् अपने घरों पर निजी तौर पर इस्लामी शिक्षा देते रहे। इसी प्रकार दूसरे बड़े विद्वान् भी अपने शिष्यों को घरों में ही निरंतर तालिम तथा मस्जिदों और मज़हबी स्थानों में यह शिक्षा देते रहे। समय बीतने पर मुस्लिम शासकों और उनके दूसरे राजदरबारियों ने हिन्दुस्तान में बहुत से मदरसे खुलवाने शुरू किए जिनमें रहने का प्रबंध रहता था तथा तालीबानों को निःशुल्क तालीम दी जाती थी। कुछ विख्यात मदरसों की सूची निम्नलिखित है–

1. सिंध में स्थापित मदरसे

(क) मदरसा फिरोज़िया : मुल्तान में स्थित राज्यपाल नसीरुद्दीन

कुबाचा ने स्थापित किया। एक विख्यात् विद्वान् जिसका नाम मिनहाजुद्दीन अबु अम्र उथ्मान था उसका सद्र (हैड या चीफ) सन् 1224 ई. में बना।

(ख) मदरसा ए मुल्तान : सन् 1224 ई. में शैकुल इस्लाम बहाउद्दीन ज़कारिया की, जो मुल्तान का विख्यात सूफी था, खनका (निवास स्थान) पर बना।

(ग). मदरसा शिवस्तान : शिवस्तान में एक बड़ा मदरसा बना। माना जाता है कि जब इब्नबतूता भारत में, मुहम्मद तुगलक के राज्यकाल में आया तो वह इस मदरसे को 1333 ई. में देखने गया। वह इस मदरसे के बारे में लिखता है कि मैं शहर के इस बड़े मदरसे में ठहरा और मैं छत के ऊपर सोया करता था।

(घ) मदरसा भुक्कर : यह मदरसा नज़ीबुद्दीन मुहम्मद ने सन् 1747 ई. में बनवाया।

2. कश्मीर में स्थापित मदरसे

(क) सुल्तान कुतुबुद्दीन का मदरसा : कश्मीर के सुल्तान कुतबुद्दीन (1393 ई. में मृत्यु) ने एक बड़ा मदरसा कुतबुद्दीनपुरा में स्थापित किया और इसने शेख ज़ौहर जैसे अनेक इस्लामिक विद्वान् दिए।

(ख) सुल्तान ज़ैल–उल–अबदीन का मदरसा : कश्मीर का सुल्तान ज़ैल उल अबदीन जो स्वयं इस्लामिक विद्वान था उसने कश्मीर में अनेक मदरसे स्थापित किए। इनमें से एक बड़ा मदरसा राजमहल के निकट स्थित था। उसने बहुत आलिम फाज़िल अध्यापक नियुक्त किए, जिन्हें अच्छा मानधन दिया जाता था।

(ग) श्रीनगर का मदरसा : मिर्जा बुरहानुद्दीन तुनी ने जिसको फादिल खां के नाम से भी जाना जाता है, भी एक मदरसा जब वह कश्मीर का राज्यपाल औरंगज़ेब के ज़माने में था, श्रीनगर में बनवाया। उसने कुछ उपजाऊ भूमि भी इस मदरसे के नाम की ताकि मदरसे की देखरेख हो सके।

दिल्ली में स्थापित कुछ विख्यात मदरसे

कुतबुद्दीन ऐबक 1206 ई. में हिन्दुस्तान का प्रथम बादशाह बना। उसने कौशक सुफेद या सफेद महल और एक मस्जिद कुवत्तुल इस्लाम नाम की (इस्लाम की शक्ति) महरौली दिल्ली में बनवाई जिसे 1192 में दिल्ली पर कब्ज़ा करने की खुशी

में बनवाई गई थी। उसने एक मदरसा मुअज़्ज़िया नाम से जो किले के अंदर स्थित था बनवाया।

मदरसा–ए–नसीरिया

ऐसा माना जाता है कि यह मदरसा सुल्तान शमसुद्दीन इल्तुतमिश ने अपने वालिद के नाम पर बनवाया। काज़ी मिन्हाजुद्दीन उथ्मान बिन मुहम्मद जोज़ानी इस मदरसे का मुख्य था। इसे रज़िया सुल्ताना द्वारा 1226 में बनवाया गया।

मदरसा–ए–फिरोजशाह

फिरोज़शाह ने इस नाम से एक बड़ा मदरसा बनवाया जो एक बहुत शानदार ईमारत में हौज़खास दिल्ली में स्थित था। मौलाना ज़ियाउद्दीन बरनी तारीख–ए–फिरोज़शाही में लिखते हैं कि इस मदरसे में सब प्रकार की शिक्षा दी जाती थी।

एक अन्य मदरसा फिरोज़शाह ने सीरिफोर्ट किले में बनवाया। मौलाना बरनी इस मदरसे की ईमारत की भी बहुत तारीफ करते हैं। मौलाना नजमुद्दीन जो समरकंद के निवासी थे इस मदरसे में पढ़ाते थे।

फिरोज़शाह ने एक और मदरसा अपने बेटे फतेह खान की मज़ार के पास बनवाया।

लेखक फरिश्ता के अनुसार इस मज़ार पर पैगम्बर मोहम्मद के पैर के चिह्न बनवाए गए। यह पत्थर का टुकड़ा कदम रसूल के नाम से जाना जाता है अरब से सूफी शेख जलालुद्दीन हुसैन अल हुसैनी, बुखारा के निवासी लाए थे।

विश्वसनीय सूत्रों के अनुसार तुर्की सुल्तान के राज्यकाल में अनेक मदरसे देश के विभिन्न भागों में स्थापित किए गए। माना जाता है कि पहला बड़ा मदरसा सन् 1191 में अजमेर में मोहम्मद गौरी द्वारा बनवाया गया। यह भी माना जाता है कि मुहम्मद बिन तुगलक (1324–1351) के काल में संभवतः 1000 मदरसे केवल दिल्ली में स्थापित थे। (Bastions of the Believers by Yoginder Sikand, Publisher Penguin Books, India, 2005 पृ. 33)

मदरसा तुलानबी

यह मदरसा सिकन्दर लोदी ने एक इस्लामी विद्वान् मौलाना अब्दुल्ला तुलानबी के लिए जो विदेश से भारत आए और दिल्ली में बस गए थे, ने बनवाया। मौलाना बदायुनी लिखते हैं कि सुल्तान सिकन्दर लोदी ने 'मलिक उल उल्मा' की उपाधि मौलाना तुलाबंदी को बख्शी और उन्हें ही इस मदरसे का प्रधान बनाया। इस मदरसे ने शासकों को अनेक विद्वान् दिए।

मौलाना शमाउद्दीन का मदरसा

यह मदरसा मौलाना शमाउद्दीन ने दिल्ली में स्थापित किया जिसमें वह स्वयं लंबे अर्से तक इस्लाम की तालीम देते रहे। उनके मरने पर (मृत्यु 1495) उनके परिवार के शेख फतेहउल्ला, शेख अब्दुल गफूर और मुफ़्ती जलालुद्दीन ने इस्लाम की मशाल को आगे बढ़ाया जिसने अनेक प्रसिद्ध तालीम–ए–इल्म प्रदान किए।

मदरसा शेख फरीद

यह बड़ा मदरसा विख्यात सूफी शेख फरियुद्दीन गंजशकर के नाम पर बनवाया। शेख अलाउद्दीन ने इस मदरसे की नींव अपने दादा हुमायूं के राज्यकाल (1534 ई.) में रखी। कहते हैं कि इस मदरसे के खण्डहर आज भी इसके संस्थापक की मज़ार के पास हैं।

मदरसा महम बेगम

अकबर बादशाह के काल में महम नामक नर्स ने एक मस्जिद और मदरसा 1561 ई. में हुमायूं के किले के पास जिसे दीन–पनाह के नाम से जाना जाता है, बनवाया। कहते हैं कि इसके खण्डहर आज भी देखे जा सकते हैं।

मदरसा शेख अब्दुल हक मुहाद्दीथ

जहांगीर बादशाह ने इस नाम से इस्लाम की उच्च शिक्षा देने के लिए बनवाया। साथ–साथ रख–रखाव के लिए एक ट्रस्ट शेख अब्दुल हक बिन सैफेद्दीन जो इस्लाम के दिल्ली स्थित विद्वान् थे, भी स्थापित किया। मौलाना हाकीम सैयद अब्दुल हयी अपनी पुस्तक ''इंडिया ड्यूरिंग मुस्लिम रूल'' पृ 171 पर लिखते हैं कि इस मदरसे को साइंस ऑफ ट्रेडिशन (हदीस) पढ़ाने का गौरव प्राप्त था। इस मदरसे ने अनेक इस्लामी विद्वान् दिए।

मदरसा शाहजहानी

यह मदरसा शाहजहां बादशाह ने 1649 और 1658 ई. के बीच स्थापित किया। यह जामा मस्जिद के निकट स्थित था। बयाना निवासी मौलाना याकूब इस मदरसे के बड़े मौलाना बादशाह द्वारा नियुक्त किए गए। इस मदरसे को मुफ़्ती सदरउद्दीन अज़रुदा (मृत्यु 1842) ने पुनः बनवाया। इस मदरसे को 1857 में अंग्रेज़ों ने पूर्णतया नष्ट कर दिया।

मदरसा फतेहपुरी बेगम

शाहजहां की एक मल्लिका नवाब फतेहपुरी बेगम ने एक बहुत खूबसूरत मस्जिद फतेहपुरी तथा मदरसा जो मस्जिद के निकट स्थित था 1649 ई. में बनवाया। इस मदरसे की दीवारें संगमरमर की और लाल पत्थर से बनी थीं। मस्जिद

में बहुत से अध्यापकों और छात्रों के रहने के स्थान बनवाए। साथ–साथ इसमें दुकानें भी बनवाईं जिससे वहाँ से होने वाली आय से मदरसे के रखरखाव में मदद मिले।

मदरसा अकबराबादी बेगम

शाहजहां की दूसरी बेगम अकबराबादी ने एक मस्जिद और मदरसा 1630 ई. में दिल्ली में बनवाया। यह भी एक भव्य इमारत थी जिसमें अध्यापक और शिष्यों के रहने का इंतज़ाम था तथा इस मदरसे के परिसर में दुकानें बनवाई गई जिससे प्राप्त आय से मदरसे का रखरखाव हो सके। इस मदरसे में मशहूर इस्लामी विद्वान् शाह अब्दुल कादिर ने लंबे अरसे तक इस्लाम की तालीम दी। 1857 ई. में अंग्रेज़ों ने इस मदरसे को पूर्णतया नष्ट कर दिया।

मदरसा मीर जुमिया

औरंगज़ेब के वंशज मीर जुमिया ने यह मदरसा दिल्ली में स्थापित किया जो अब पूर्णतया नष्ट हो चुका है।

मदरसा–ए–इनायत खां

यह भी दिल्ली में स्थित मदरसा था जिसकी खण्डहर भी अब मौजूद नहीं हैं।

मदरसा गाज़ियुद्दीन खां

यह एक बहुत बड़ी लाल पत्थर की इमारत गाज़ियुद्दीन खां ने जो बादशाह अहमद शाह बहादुर और उसके बाद आलमगीर–2 का प्रधानमंत्री था, 1751 ई. में बनवाया। यह मदरसा दिल्ली नगर के बाहर था तथा उसके दादा बाबा गाज़ियुद्दीन खां फिरोज़जंग के महल के नज़दीक स्थित था।

एक मदरसा गाज़ियुद्दीन खां की माँ ने बनवाया। रामपुर मौलवी अब्दुल कादिर लिखते हैं कि यह मदरसा मौलाना फखरुद्दीन, जो इस मदरसे में पढ़ाते थे, के नाम से मशहूर हुआ।

मदरसा शाह वलीउल्ला

यह मदरसा विश्वविख्यात् आलिम हिन्दुस्तान में जन्मे, तथा औरंगेज़ेब के मरने के बाद इस्लाम को पुनः स्थापित करने वाले शाह वलीउल्ला के नाम से मशहूर हुआ। इस मदरसे में शाह वलीउल्ला अनेक तालीब–इल्म को इस्लाम की मुख्य धारा में लाने की पढ़ाई कराते रहे। उस काल के बादशाह मोहम्मद शाह ने एक बहुत बड़ी इमारत इस मदरसे को शुरू करने के लिए उपहार स्वरूप दी। शाह वलीउल्ला के मरने के बाद एक नया मदरसा उसी स्थान पर बनवाया गया जिसमें उनके बेटे शाह अब्दुल अज़ीज़ लगातार पढ़ाते रहे। साथ–साथ शाह रफीयुद्दीन और शाह अब्दुल कादिर दोनों शाह अब्दुल अज़ीज़ के भाई थे, भी इस मदरसे में पढ़ाते रहे। तत्पश्चात् शाह मुहम्मद इशाक, शाह मुहम्मद याकूब तथा शेख मख्सूस

उल्ला, जो शाह अब्दुल अज़ीज़ के उत्तराधिकारी थे, निरंतर इस मदरसे में इस्लामी तालीम को आगे बढ़ाया। यह मदरसा हिन्दुस्तान में इस्लामी शिक्षा का एक प्रमुख शिक्षा केन्द्र बना।

मदरसा बाजार दरीबा

दरीबा बाज़ार (दिल्ली) में सुनहरी मस्जिद के निकट, नवाब रौशन–उद–दौला ने एक शानदार मदरसा 1721 में बादशाह मोहम्मद शाह के शासन काल में बनवाया। यह मदरसा मुगल शासन के अंत तक चलता रहा और अंत में मदरसे को खत्म करके अंग्रेज़ों ने इसको पुलिस चौकी बना डाला।

मदरसा इरादत मंदखां

यह मदरसा भी बादशाह मोहम्मद शाह के शासन काल में दरीबा मस्जिद के नज़दीक नवाब शराफ–उद–दौला इरादतमंदखां ने 1722 ई. में बनवाया। सर सैयद अहमद खां ने इस मदरसे का जिक्र अपनी पुस्तक ''अथर–उस–सनादीद' में किया है। इंडिया ड्यूरिंग मुस्लिम रूल पुस्तक पृ. 173

मदरसा शाह हुसैन

शाह हुसैन ने एक मदरसा और मस्जिद बुलबलीखाना में 1735 ई. में स्थापित की।

उपरिवर्णित मदरसों में प्रमुख मदरसों का ही उल्लेख है। इसके अलावा अनेक मदरसे विशेषतया उत्तर भारत में जगह–जगह पर निरंतर बनते रहे।

रूहेलखण्ड (पश्चिमी उत्तर प्रदेश) मदरसा

बदायूं का सुप्रसिद्ध मदरसा सुल्तान कुतुबुद्दीन ऐबक या उसके उत्तराधिकारी सुल्तान शमसुद्दीन इल्तुतमिश द्वारा 1223 ई. में बनवाया गया। हसन–सिज–ज़ी अपनी पुस्तक में लिखते हैं कि बहुत संख्या में इस मदरसे ने तालिबान दिए जिनमें एक प्रसिद्ध विद्वान् था शेख ज़ैनुद्दीन।

लखनऊ का मदरसा – एक बड़ा मदरसा जिसने अनेक इस्लामी विद्वान् दिए, को शेख मुहम्मद–बिन–आबी–बाका (मोहम्मद आज़म –मृत्यु 1465 ई.) ने स्थापित किया। इसी प्रकार प्रसिद्ध मदरसा काज़ी अब्दुल कादिर फारुखी–(मृत्यु–1664 ई.) ने स्थापित किया। इस मदरसे ने भी अनेक विद्वान् पैदा किए जिन्होंने आगे चलकर अन्य मदरसे स्थापित किए।

मदरसा अमेठी–एक मदरसा बारूना (अमेठी) में सारंगपुर के मौलाना हसन ने स्थापित किया। शेख ज़फर बिन निज़ामुद्दीन (मृत्यु 1635 ई) इस मदरसे के बड़े मौलाना थे। इस मदरसे में अनेक कमरे तालिबानों के पढ़ने के लिए थे। लेखक का मानना है कि इस मदरसे के खण्डहर अभी देखे जा सकते हैं।

मदरसा मुल्ला जिवान – यह मदरसा भी अमेठी में अब्दुल कादिर–बिन–अहमद ने स्थापित किया।

मदरसा–शाह पीर मुहम्मद –यह प्रसिद्ध मदरसा गोमती नदी के किनारे स्थापित किया गया था इसको भी बड़े मदरसों में माना जाता था।

इसी प्रकार जौनपुर में भी मदरसे स्थापित किए गए।

मदरसा फिरंगी महल – औरंगज़ेब ने यह प्रसिद्ध इमारत मुल्ला निज़ामुद्दीन जो सियाली निवासी थे, द्वारा स्थापित करवाया। इस मदरसे ने निज़ामिया शिक्षा प्रणाली अपनाई जो आज भी प्रसिद्ध है। इस मदरसे ने अनेकोनेक मज़हबी विद्वान् पैदा किए।

मदरसा मन्सूरिया – इस मदरसे की स्थापना मुल्ला हामिद उल्ला–बिन–शुक्रउल्ला तथा उसके बेटे मौलवी असकार ने संडीला (उ.प्र.) सन् 1733 में हुई। इस मदरसे के रखरखाव के लिए अहमद शाह बहादुर बादशाह ने अनेक गाँव खैरात के रूप में दिए।

मदरसा बिलग्राम – यह मदरसा अलमा अब्दुल ज़लील बिलग्रामी (मृत्यु 1725 ई.) में स्थापित हुआ। इस मदरसे ने अनेक विख्यात् स्नातक दिए।

मदरसा वाला जाहिया – माना जाता है कि यह मदरसा 1785 ई. में नवाब मोहम्मद अली खान ने जो मद्रास में गवर्नर नियुक्त किए गए थे, अपने गाँव में बनवाया।

मदरसा सुल्तानिया – अवध के बादशाह के राज्यकाल में उनके वज़ीर हकीम मेंहदी अली खान ने लखनऊ में मदरसा स्थापित किया। इसी प्रकार हकीम मेंहदी अली खान ने एक दूसरा मदरसा मुख्यतः कश्मीरी तालिबानों के लिए स्थापित किया।

मदरसा अमजद अली भााह – यह मदरसा नवाब अमजद अली शाह ने लखनऊ में स्थापित किया।

मदरसा सालोन –रायबरेली ज़िले में सालोन नामक स्थान पर स्थापित किया गया। यह माना जाता है कि मुगल बादशाहों ने काफी बड़ी भूमि इस काम के लिए खेरात में दी, ताकि मदरसे का खर्च चलाया जा सके।

मदरसा अलीया – नवाब फैजुल्ला खान ने यह मदरसा रामपुर (उ.प्र.) में स्थापित किया।

मदरसा बरेली – यह मदरसा नवाब हफीज़ रहमत खान ने स्थापित किया।

मौलाना रुस्तम अली बिन अस़गर जो कन्नौज निवासी थे, और प्रसिद्ध इस्लामी विद्वान् थे, लंबे समय तक प्रधान बने रहे।

मदरसा पीलीभीत – इस मदरसे की जिसमें उच्च श्रेणी की शिक्षा दी जाती थी, स्थापना भी नवाब हफीज़ रहमत खान द्वारा संभवतः 1767 ई. में की गई। इस मदरसे के रखरखाव के लिए एक बड़ा न्यास नियुक्त किया गया जिसमें अनेक गांव सम्मिलित थे।

अन्य प्रदेशों के मदरसों का उल्लेख स्थानाभाव के कारण छोड़ दिया गया।

मध्यकालीन भारत में मुस्लिम शासनतंत्र की आवश्यक जानकारियां

मुस्लिम शासकों की राजनीतिक व्यवस्था मुख्यतया दो भागों में विभाजित थीः–

1. शरीया कानून द्वारा शासन व्यवस्था
2. तत्कालीन परिस्थिति के अनुसार शासन

शासन–व्यवस्था चलाने के लिए मदरसों में पढ़े तालीम–ए–इल्म मुख्य स्थानों पर नियुक्त किए जाते थे। मध्यकालीन हिन्दुस्तान में मदरसों में शिक्षा मुख्यतया विदेशी मुसलमानों को जो अपने को उच्चश्रेणी का मानते रहे, ही दी जाती थी। हिन्दुस्तानी मुसलमानों (धर्मान्तरित मुसलमान) को मदरसों में शिक्षा नहीं दी जाती थी। इस विषय में मौलाना ज़ियाउद्दीन बरनी ने 13वीं शताब्दी में अपने फतवा–ए–जहानदारी में वर्णन किया है।

मदरसों में पढ़े तालीबानों को जिन स्थानों पर मुख्यतया नियुक्त किया जाता था, निम्नलिखित हैं :–

वकील–ए–मुत्तलक यह प्रधानमंत्री का पद था जिसमें मुख्यतः सुल्तान के विश्वासपात्र ही नियुक्त किए जाते थे।

मदार–उल–महाम इसका दर्जा वज़ीर (मंत्री) का होता था जिसका काम सरकारी खर्च पर निगरानी रखना होता था इसकी सहायता के लिए अनेक मुस्तफिस नियुक्त किए जाते थे। यह पद भी मुख्यतः शासकों के विश्वासपात्रों को ही दिया जाता था।

दिवान–ए–आला यह राज्यों के मालगुजारी और खर्चे की जांच–पड़ताल करने वाला होता था।

मीर–बख्शी सेना का प्रशासनिक अधिकारी होता था जो नई भर्ती को बादशाह के समक्ष पेश करने तथा उनका दर्जा व वेतन की जिम्मेदारी का कार्य करता था। मीर बख्शी की सहायता के लिए तीन अतिरिक्त बख्शी उसके सहायक होते थे जो घुड़सवारों, तीरअंदाज़ों और थल सेना के लिए होते थे।

सद्र–अस–सुदूर इसका कार्यक्षेत्र मज़हबी उस्तादों, बेवाओं, अनाथों, ज़रूरतमंदों की देखभाल की जिम्मेदारी तथा काज़ियों की नियुक्ति करना था।
सद्र–अस–सुदूर मुख्यतः राजपरिवार से होते थे।

काज़ी–उल–कुज़ात इसका मुख्य कार्य शरीया कानून को कठोरता से लागू करवाना और जनता द्वारा अपनी दिनचर्या में उसके पालन की निगरानी रखना था। उसके कार्य क्षेत्र में शादी में समस्याएं तथा ऋण संबंधित झगड़ों का निपटारा शामिल है। यह पदवी मुख्यतः प्रसिद्ध लोगों को ही दी जाती थी। मुफ्ती उल अस्कर इसका कार्यक्षेत्र मुख्य न्यायाधीश का था जो हन्फी न्यायिक पद्धति के अनुसार फैसला करता था।

मुहतासिब यह मुख्यतः इस्लामिक पद्धति के अनुसार (नशा करने और चरित्रहीन कार्य करने से रोकना) समाज के चरित्र पर निगरानी रखता था।

दरोगा–ए–अदालत इसका छोटे स्तर पर फसादों का निपटारा करने व शरिया कानून–व्यवस्था को लागू करने की ज़िम्मेदारी थी।

दाबिर शाही आदेशों को लिखने का कार्य करता था।

मीर तुज़क न्यायालय में नियमों एवं तौर–तरीकों पर निगरानी रखने का कार्य करता था और बादशाह के आदेशों का ऐलान करवाता था।

19वीं शताब्दी में ब्रिटिश शासन काल में मदरसे

तालिका – 1

उत्तर प्रदेश तथा बिहार में 19 वीं शताब्दी में स्थापित मदरसे :–

वर्ष	उ.प्र.	बिहार	कुल
1865	2	–	2
1867	–	1	1
1874	1	–	1
1876	1	–	1
1877	1	–	1
1878	2	1	3
1880	1	–	1
1883	3	–	3
1889	1	1	2
1890	2	–	2
1892	2	–	2
1893	–	2	2
1894	1	1	2
1895	1	–	1
1896	1	–	1
1897	2	–	2
1898	1	–	1
1899	2	–	2
कुल	24	6	30

''इस्लाम इन सेक्युलर इंडिया'' पुस्तक के पृ. 24 पर डॉ. मशीरूल हक ने 19वीं शताब्दी में उत्तर प्रदेश तथा बिहार प्रान्त में स्थापित मदरसों की सूची दी है। वे लिखते हैं कि दूसरे प्रान्तों की सूची के बारे में ठीक ज्ञान नहीं है।

डॉ. मुशीरूल हक अपनी इसी पुस्तक में लिखते हैं कि अन्दाज़न सर्वे के अनुसार **1950 ई. में 88 अरबी मदरसे थे। वे स्वयं कहते हैं कि यह वास्तविकता से बहुत कम है। श्री मंजूर अहमद अपनी पुस्तक ''इस्लामिक एजुकेशन'' पृ. 32 में लिखते हैं कि 1990 ई. तक देश में 30,000 गैर सरकारी मदरसे जिनमें इस्लामी शिक्षा दी जाती है, स्थापित थे।**

एक दूसरे हवाले से ''प्रमोशन ऑफ साइंस सेन्टर'' अलीगढ़ मुस्लिम युनिवर्सिटी

द्वारा बताया गया कि 1985 में 2890 मदरसे थे। इसके 10 वर्ष बाद मानव संसाधन विकास मंत्री द्वारा मदरसों की संख्या 12000 बताई गई। **वर्श 2002 में देश के गृह मंत्री ने बताया कि मदरसों की संख्या 31,857 है।** ('दि हिन्दू' बेंगलूर, दिनांक 19 मई 2002) इसके बिल्कुल विपरीत **सन् 2003 में एक प्रमुख मुस्लिम अखबार ने दावा किया कि देश में मदरसों की संख्या 1,25,000 है जिनमें लगभग 30,00,000 विद्यार्थी पढ़ते हैं** और इन सबके ऊपर प्रति वर्ष खर्चा लगभग 14 बिलियन (1 अरब 40 करोड़) है। यह टिप्पणी मौलाना मोहम्मद कलीम सद्दीकी द्वारा ''इस्लामिक मदरसा : सर्विसिंग एण्ड चैलेंजिस'' विषय पर आयोजित गोष्ठी में दी गई, जिसको रेडियंस व्यूज़ वीकली–7–13 सितम्बर 2003 में दर्शाया गया।

मुहम्मद बदीउज़्ज़मान ने अपने लेख ''हिन्दुस्तान के मदरसे और मस्जिद मरकज़ी हुकुमत के निशाने पर'' बसात ज़िक्र–ओ–फ्रिक मई–जून 2002 में कुछ प्रदेशों में स्थापित मदरसों की सूची दी है। इस सूची में उत्तर प्रदेश बिहार और कई बड़े प्रदेश शामिल नहीं हैं, जिनसे मदरसों की संख्या का ठीक ज्ञान नहीं मिलता।

क्र.	राज्य	मदरसों की संख्या	अध्यापकों की संख्या	तालिबानों (विद्यार्थी) की संख्या
1	आंध्र प्रदेश	721	.2000	72,528
2.	असम	2002	4000	20,000
3.	दिल्ली	1161	86	3,722
4	गुजरात	1825	6000	1,20,000
5.	जम्मू–कश्मीर	122	475	8515
6.	कर्नाटक	961	1884	84,864
7.	केरल	9975	25,000	7,38,000
8	मध्य प्रदेश	6000	12,000	4,00,000
9	महाराष्ट्र	2,435	4,900	20,397
10	राजस्थान	1780	3600	25,000
11	प.बंगाल	2116	10,000	90,000

ये आंकड़े Bastions of the Belivers by Yoginder Sikand, Publisher Penguin Books, India, 2005 पृ. 313 पर आधारित हैं।

दी गई मदरसों की संख्याएं सात वर्ष पुरानी हैं। इन पांच वर्षों में मदरसों की संख्या अधिक बढ़ी है। उपरिवर्णित सूची में दिल्ली राज्य में मदरसे 1161 तथा अध्यापक 86 बताए गए हैं, इसमें सामान्यता कुछ त्रुटि है।

मदरसों के विषय में विश्वसनीय आँकड़े सरलता से उपलब्ध नहीं है। मूल कारण है कि देश की सरकार ने स्वतंत्रता के बाद से आज तक इस विषय में कोई रुचि न दिखाई और इसी का परिणाम है कि कोई विस्तृत संर्वेक्षण उपलब्ध नहीं हो सका।

डॉ. मुशीरूल हक के अनुसार मदरसों, मख्तबों के इस अपूर्व विस्तार से यह समझने में सहायता मिलती है कि : ''मुसलमानों को अपनी मज़हबी शिक्षा की कितनी चिंता है, वे अच्छी तरह से जानते हैं कि मदरसे से पढ़े हुए लोगों के लिए दुनिया में सफलता प्राप्त करने के सभी द्वार बंद हैं फिर भी उन्होंने इन मदरसों को चलाने के लिए न केवल भरपूर पैसा दिया बल्कि इस बात के लिए भी पूरा प्रयत्न किया कि किसी मदरसे में छात्रों की कमी न होने पाए। आम तौर पर यह विश्वास किया जाता है कि केवल गरीब घरों के लोग जो अपने बच्चों को उच्च शिक्षा दिलाने में असमर्थ हैं, उन्हें मदरसों में भेज देते हैं। यह बात केवल आंशिक रूप से सत्य है क्योंकि बहुत से खाते–पीते घरानें कम से कम अपने एक बच्चे को अवश्य मदरसे में भेजते हैं। सच तो यह है कि **मदरसे की शिक्षा को मज़हबी कर्तव्य समझा जाता है। आस्था यह है कि कयामत के दिन आलिम अपने मां–बाप और रिश्तेदारों की ओर से पैरवी कर सकेगा। इसलिए बहुत से आधुनिक शिक्षा पाए हुए मां–बाप भी जो अपने सभी बच्चों को आधुनिक शिक्षा दिलवा सकते हैं, कम से कम एक बेटे को तो मदरसे की शिक्षा के लिए भेजने की कोशिश ज़रूर करते हैं।** (मुशीरूल हक : पंथनिरपेक्ष भारत में इस्लाम, पृ. 49)

इस आस्था के फैलाने से एक लाभ यह है कि प्रत्येक मुस्लिम परिवार में अंततः एक आलिम पहुँच जाए। इस्लाम को स्वच्छ हालत में रखने और उसमें काफिरों के रीति–रिवाज़ों और गैर–इस्लामी विश्वासों के प्रवेश को रोकने का इससे उत्तम और क्या उपाय हो सकता है।

मुशीरूल हक के अनुसार ''मदरसों के छात्रों की शिक्षा का उद्देश्य मुख्यतः छात्र को इस्लाम के प्रचार और उसकी व्याख्या के लिए तैयार करना है : इन सभी मदरसों में चाहे वह देश के किसी भाग में स्थित हों, उच्चतर मज़हबी शिक्षा, उर्दू भाषा के माध्यम से ही दी जाती है। फलस्वरूप किसी भी छात्र को अपने राज्य से भिन्न भाषा और संस्कृति वाले दूसरे राज्य के मदरसे में चले जाने में कोई कठिनाई नहीं होती। सारे भारत व पाकिस्तान का हर आलिम कम से कम उतनी ही अच्छी उर्दू जानता है जितनी अपनी मातृभाषा। (उपर्युक्त)

इस प्रकार जहाँ दक्षिण भारत के राज्यों में हिन्दी का विरोध होता रहा है वहाँ उर्दू का विरोध नहीं होता और वह एक प्रकार से संपूर्ण भारत के मुसलमानों और उनके उर्दू प्रैस की मज़हबी और संपर्क भाषा बन गई है। **भले ही यह प्रचार किया जाता हो कि उर्दू हिन्दू–मुसलमानों की साझा भाषा है, धीरे–धीरे वह पाकिस्तानी और भारतीय मुसलमानों की ही साझा भाषा बन चुकी है।** उर्दू पढ़े लिखे नवयुवक हिन्दू ढूंढे नहीं मिलते। सन् 1960 ईसवी तक साधारण

भारतीय मुसलमान उर्दू को छोड़कर हिन्दी अपना चुका था। परन्तु उनके वोटों की तलाश में हिन्दू नेतृत्व ने ही उर्दू को दूसरी राजभाषा बनाने का लोभ दे देकर उन्हें हिन्दी से विमुख कर दिया।

मदरसों और मख्तबों के पास रहने वाले ये नवयुवक मस्जिदों में पेश इमाम हो जाते हैं या इस्लाम के प्रचार–प्रसार के संगठनों जैसे : तबलीगी ज़मात से जुड़ जाते हैं। उर्दू को दूसरी राज भाषा बना कर सहस्त्रों की संख्यां में सरकारी स्कूलों में उर्दू शिक्षकों की नियुक्तियों से इनके लिए एक नया मार्ग खुल गया है। वह कहीं भी हों, **उनका एक ही स्पष्ट ध्येय और एक ही आकांक्षा होती है – भारत में कुफ्र का नाश कर इस्लाम का वर्चस्व और शरीयत शासन स्थापित करना।** अपने शैशव और किशोरावस्था में निरंतर उन्होंने अल्लाह की वाणी में पढ़ा है :

''मनुष्य जाति में जो भी पैदा किए गए है। उनमें तुम सर्वोत्तम समुदाय हो ...'' (कुरआन : 3:110)

''सिवाय थोड़ा दुःख पहुँचाने के वे तुम्हारा कुछ भी नहीं बिगाड़ सकते। और यदि वे तुमसे युद्ध करेंगे तो वे तुम्हें पीठ दिखाकर भाग जाएंगे। फिर उन्हें कहीं से सहायता नहीं मिलेगी।'' (कुरआन 3:111)

''और अल्लाह का वायदा है कि वह इस्लाम को सभी दूसरे मतों पर विजयी बनाएगा। भले ही मूर्तिपूजक उसका कितना ही विरोध क्यों न करें।'' (कुरआन 9:33)

विज्ञान और इतिहास की शिक्षा और मतों के तुलनात्मक अध्ययन से अनेक अंधविश्वासों और कट्टरता का उन्मूलन होता है। नयी पीढ़ी के मस्तिष्क पर मतान्धता की पकड़ ढीली होती है। पारस्परिक समझदारी बढ़ती है। मुस्लिम बच्चों में विज्ञान, सत्य और इतिहास और मतों के तुलनात्मक अध्ययन से अनेक अंधविश्वासों और कट्टरता का उन्मूलन हो सकता था। खेद की बात है कि ऐसी शिक्षा पर धन व्यय न कर रूढ़िवादी शिक्षा पर धन व्यय करने का अर्थ संपूर्ण भारत के इस्लामीकरण के लिए मौलाना मौदूदी की भाषा में **''लाखों खुदाई फौजी सैनिकों को प्रतिवर्ष तैयार करने में सहयोग देना है।''**

हम प्रतिदिन सुनते चले आए हैं कि अनेक प्रांतीय सरकारें मदरसों के ऊपर बेहद पैसा खर्च करती हैं पर जब कभी इन मदरसों के आधुनिकीकरण का प्रश्न उठाया जाता है तो उलेमा इसका कट्टर विरोध करते हैं और उनका मानना है कि मदरसों में किस प्रकार की शिक्षा दी जाए इसका निर्णय केवल वे ही करेंगे। हम पहले ही वर्णन कर चुके हैं कि प्रारंभिक काल से ही सब उलेमाओं का एक ही ध्येय है – 'विश्व का इस्लामीकरण', जिसमें ये मदरसे अहम भूमिका निभा रहे हैं।

स्वतंत्रता के बाद के मदरसे

सन् 1946 में हिन्दुस्तान के 96 प्रतिशत मुस्लिमों ने पाकिस्तान बनाने के पक्ष में अपना वोट देकर यह स्पष्ट कर दिया था कि वे एक अलग राष्ट्र हैं तथा किसी भी दशा में उनका हिन्दुओं के साथ सहअस्तित्व संभव नहीं है। मुसलमानों की यह भावना इस्लाम मज़हब तथा उसी के अनुसार 'दारुल हरब'' व ''दारुल इस्लाम'' के सिद्धांत के अनुकूल ही थी। किन्तु **उस काल के हिन्दू नेतृत्व ने मूर्खता दिखाते हुए हिन्दुओं और मुसलमानों की पूर्ण अदला–बदली न होने दी।** निःसंदेह डॉ. अम्बेडकर व मुहम्मद अली जिन्ना के आबादी की पूर्ण अदला–बदली के सुझाव को कार्यान्वित न करने से जो हमारे देश को क्षति पहुँची उसके गंभीर परिणाम शीघ्र ही सामने आने शुरू हो गए। आज स्थिति यह है कि अपने देश में हिन्दू अपने को असहाय पाते हैं और यह ठीक समय पर उचित फैसला न करने के ही दुखदायी नतीजे हैं।

मुसलमानों को हिन्दुओं पर राज करने का लगभग 800 वर्ष का अनुभव था। वे भलीभाँति जानते थे कि बाल्यकाल की शिक्षा का कितना प्रभाव होता है, क्योंकि वही भावी नागरिक तैयार करती है। वे जानते थे कि हिन्दुस्तान में वे अल्पसंख्यक हैं किन्तु यह भी आवश्यक था कि इस्लामी सिद्धांत के अनुसार वे अपनी अलग पहचान बनाए रखें। हिन्दू आशा करते थे कि जिन मुसलमानों ने हिन्दुस्तान में बसे रहने का निर्णय लिया है वे संभवतः हिन्दुओं के साथ सह अस्तित्व बनाए रखेंगें और उन्हीं शिक्षा संस्थानों में पढ़ेंगे जिनमें देश के सभी बालक–बालिकाएं शिक्षा ग्रहण करेंगे। **परन्तु मुस्लिम उलेमाओं ने ऐसा नहीं होने दिया। वे महसूस करने लगे कि यदि मुस्लिम बच्चे हिन्दू बच्चों के साथ पढते हैं तो वे शीघ्र इस्लाम से दूर होते जाएंगे और उनकी मज़हबी पहचान खतरे में पड जाएगी।**

देश के संविधान के अनुच्छेद 30 का सहारा लिया गया जिसके अनुसार अल्पसंख्यकों को अधिकार दिया गया था कि वे अपने शिक्षा संस्थान स्वयं स्थापित कर सकते हैं तथा उनका रख–रखाव भी अपने नियंत्रण में स्वयं कर सकते हैं। इस कारण यह जिम्मेदारी मुस्लिम नेतृत्व की थी कि वे किस प्रकार की तालीम मुस्लिम बच्चों को दें। मज़हबी जुनून के कारण और भावी पीढ़ी को इस्लाम के दायरे में बनाए रखने के लिए हिन्दुस्थान में मुस्लिम बच्चों को बाल्यकाल से ही अलग रखकर इस्लाम के मूल सिद्धांतों के दायरे में निरंतर बनाए रखना आवश्यक समझा गया।

इस्लाम के मूल सिद्धांत क्या हैं :–

1. हजरत मुहम्मद के आने से पहले की समस्त सभ्यताओं को जहालिया समझना तथा केवल बाद की सभ्यता को ही रोशनी

वाली मानना।

2. समस्त मानवता का दो विरोधी पार्टियों में बंटवारा–

अ– अल्लाह की पार्टी जिसके अनुयायी केवल मुसलमान है।

ब–शैतान की पार्टी जिसमें मुसलमानों के अलावा अन्य सभी सभ्यताएं शामिल हैं।

3. इस्लाम सारे विश्व को दो खेमे में बाँटता है

अ–जिसमें इस्लाम का शासन है – दारुल इस्लाम

ब–बाकी समस्त देश जिनमें गैर इस्लामियों (काफिरों) का राज्य है–दारुल हरब।

यह इस्लामी सिद्धांत अल्लाह की पार्टी मोमीनों को काफिरों (गैर–इस्लामियों) से स्थायी युद्ध करने को मजबूर करता है।

सन् 1947 ई. की स्वतंत्रता के बाद हिन्दुस्थान में प्रजातंत्र स्थापित होने पर तथा मुसलमानों को अल्पसंख्यक रह जाने के कारण चिन्ता होनी स्वाभाविक थी। हर हालत में वे मुसलमान बच्चों को हिन्दू सभ्यता से अलग रखना आवश्यक समझते थे। ऐसा न होने पर मुस्लिम उलेमाओं के एक हजार साल के कठिन प्रयत्नों के बावजूद सारे देश को दारुल इस्लाम बनाने में पूर्ण सफलता न मिली थी, यद्यपि पाकिस्तान बनने से तीस प्रतिशत देश की भूमि उनके कब्जे में आ चुकी थी – अभी बाकी देश को **''दारुल–इस्लाम''** बनाने का स्वप्न पूरा होना शेष था। मुसलमानों की सोच है कि जो देश किसी काल में भी इस्लामी दायरे में रह चुका हो उसे कभी भी त्यागा नहीं जा सकता। यह विचार मौलाना अबुल कलाम आज़ाद सहित अनेक मुस्लिम उलेमाओं ने निरंतर प्रकट किए हैं। **अनेक उलेमाओं ने पहले भी साफ कहा था कि वे तो समस्त हिन्दुस्तान को ही लेना चाहते थे इस कारण पाकिस्तान का बनना उनके लिए एक पड़ाव समान ही था और यह उनकी अंतिम मांग न होकर केवल उस समय की ही मांग थी।**

उत्तर प्रदेश के मुसलमानों ने पाकिस्तान बनाने में अहम भूमिका निभाई थी। वैसे भी अनेक मुस्लिम उलेमा/विद्वान् उत्तर प्रदेश प्रान्त ने ही देश को दिए थे। सबसे अधिक मदरसे उत्तर प्रदेश में ही स्थित थे। मुस्लिम लीग का जन्म अलीगढ़ उत्तर प्रदेश के मुसलमानों ने 1906 ई. में ढाका में किया था। मुसलमानों के अधिकांश विचारक उत्तर प्रदेश के थे तथा सदैव की भाँति उत्तर प्रदेश ने ही मुस्लिम बच्चों की पढ़ाई की बागडोर संभाली।

परिस्थितियों को देखते हुए अनेक मुस्लिम नेता और दारुल उलूमों जैसे देवबंद का मदरसा, नदवा (लखनऊ) का मदरसा ...., बरेली, अलीगढ़, जामिया

मिलिया इस्लामिया दिल्ली, जमायतुल–उलेमा–ए–हिन्द, जमायते इस्लामी तथा अनेक **विख्यात मौलानाओं ने 30–31 दिसम्बर 1959 में बस्ती (उत्तर प्रदेश) में एक सेमिनार आयोजित किया। चर्चा के पश्चात् इसमें दीनी तालीमी कौंसिल उत्तर प्रदेश स्थापित करने का निर्णय लिया गया।** इस निर्णय के अन्तर्गत उत्तर प्रदेश के चप्पे–चप्पे में मखतब (प्राइमरी इस्लामी स्कूल) मुसलमान बच्चों को दीनी–तालिम (इस्लाम के प्रमुख सिद्धांतों से परिचय) तथा कुरान कंठस्थ करना (नाजिरा) तथा साथ–साथ और अन्य विषयों का ज्ञान कराना था। मुख्य ध्येय था कि इन बच्चों को भली प्रकार इस्लाम मजहब के मुख्य सिद्धांतों तथा उसके कार्यकलाप से अवगत कराया जाए जिससे पैगम्बर मोहम्मद के बताए रास्ते पर दृढ़तापूर्वक चलते रहें।

उपरिलिखित निर्णयों को गंभीरता से समझने की आवश्यकता है। विषयों में कुरान की जानकारी, उसको पढ़ना इत्यादि से बच्चों को प्रारंभ से ही मोमिन तथा काफिर के अंतर सिखाने से शुरू होता है। इन मखतबों में सिखाया जाता है कि उनके जीवन का मुख्य उद्देश्य इस्लाम की सेवा करना है और इन नन्हें बालक–बालिकाओं को जाने–अनजाने धीरे–धीरे दारुल–इस्लाम और और दारुल–हरब का फर्क समझा दिया जाता है। इसी प्रकार 'गाज़ी' तथा 'शहीद' में अंतर बताया जाता है। धीरे–धीरे कथाओं द्वारा समझा दिया जाता है कि काफिर को मुसलमान बनाना अन्यथा कत्ल करना 'कार–ए–सबाब' सबाब (पुण्य) कार्य है जिससे अल्लाह खुश होता है और उन्हें जन्नत जाने के लाभ बताए जाते हैं।

मदरसे से पढ़े किसी भी बच्चे से आप यह सब जानकारी स्वयं प्राप्त कर सकते हैं जिससे इसकी सत्यता जानी जा सकती है।

दीनी तालिमी काउंसिल का मुख्यालय लखनऊ (उ.प्र.) में बनाया गया, साथ–साथ प्रदेश के 48 जिलों में इसके केन्द्र अन्जुमन–ए–तालिम–ए–दीन नाम से स्थापित करने का निर्णय लिया गया। इस कांउसिल की अध्यक्षता नदवा लखनऊ के रेक्टर मौलाना सैयद अबुल हसन अली नदवी (अली मिया) ने की, जो निरंतर इस पद पर बने रहे।

इन मखतबों द्वारा दी गई तालीम ने मुसलमान बच्चों में इस्लाम मज़हब के प्रति एक नया मज़हबी जुनून पैदा कर दिया है। इस प्रयास ने मुसलमानों में मज़हबी शिक्षा प्रदान करने का आन्दोलन जैसा स्वरूप ले लिया है व मुस्लिम बच्चे अपनी पहचान बनाने में स्तंभ की तरह खड़े हो गए हैं। मौलाना सैयद अबुल हसन अली नदवी ने अपने एक अध्यक्षीय भाषण में सच ही दावा किया था कि ''हिन्दुस्तान में खिलाफत आन्दोलन के बाद मुस्लिम समाज के लिए इस दीनी–तालीमी आन्दोलन से बढ़कर दूसरा नहीं हुआ''।

Education and Muslim in India since Independence पुस्तक में एच.यू.

आज़मी के लेख पृ.148 के अनुसार 1998 तक उत्तर प्रदेश में बीस हजार मखतब स्थापित किए जा चुके थे। (संभवतः इनकी संख्या गत दस वर्षों में पचास हज़ार के आँकड़े पार कर चुकी होगी – लेखक)

दीनी तालिमी काउंसिल द्वारा चलाए गए मखतब स्थापित करने वाले आन्दोलन ने मुस्लिम बच्चों के मज़हबी तथा दूसरी पढ़ाई की समस्त समस्याओं की गुत्थी को सुलझा दिया है। इस शिक्षा के प्रमुख उद्देश्य हैं :–

1. मजहबी ग्रंथ कुरआन का मुस्लिम बालक एवं बालिकाओं को विस्तृत ज्ञान
2. उर्दू भाषा में अन्य विषयों की शिक्षा जिससे यह मखतब में पढ़े बच्चे सरकारी स्कूलों में पढ़ने के योग्य बन सकें अन्यथा दूसरे बड़े मदरसे जैसे नदवा–तुल–उलमा, दारुल उलूम देवबंद, जामिया–सलफिया वाराणसी तथा और अन्य प्रमुख मदरसों में पढ़ सकें।

उत्तर प्रदेश की सफलता के बाद दीनी तालिमी काउंसिल का कार्यक्षेत्र हिन्दुस्थान के दूसरे प्रान्तों में भी निरंतर फैलाया जा रहा है। 1998 ई. तक इसकी प्रान्त स्तरीय शाखाएं हैदराबाद, तमिलनाडु, कर्नाटक, मुम्बई तथा मध्य प्रदेश में कार्यरत हैं तथा इनको देश के बाकी प्रान्तों में स्थापित करने का काम चल रहा है।

स्पष्ट है कि 1947 ई. में स्वतंत्रता के बाद इन मदरसों की संख्या में अभूतपूर्व वृद्धि हुई। किसी भी विचारशील व्यक्ति के मन में यह भाव उत्पन्न होगा कि ऐसी कौन सी परिस्थितियां मुसलमानों के लिए देश में बदलीं जिसके कारण उनको इतने अधिक मदरसे स्थापित करने की आवश्यकता महसूस हुई। देश के विभाजन से पहले भी हिन्दू तथा मुसलमान देश में साथ–साथ रहते थे और अंग्रेज़ी काल के दौरान इतनी अधिक संख्या में मदरसे क्यों नहीं बनाए गए? उलेमा इसका कारण स्वतंत्रता के बाद शिक्षा प्रणाली में नैतिक शिक्षा जो सरकारी स्कूलों में दी जाने लगी, उससे मुसलमानों को डर हुआ कि वे धीरे–धीरे अपना मज़हब त्याग देंगे। कुछ लोगों का विचार है कि सरकारों ने इस भय को मुसलमानों के दिल से निकालने का कोई प्रयत्न नहीं किया। साथ–साथ मुसलमानों द्वारा यह भी प्रचार किया गया कि हिन्दुस्थान में इस्लाम को बुरी नज़र से पुस्तकों में दर्शाया जाता है और इसके विपरीत अपनी हिन्दू संस्कृति को बढ़ा–चढ़ा कर बताया जाता है। उनके अनुसार इसका परिणाम यह निकला कि मुसलमान सरकारी स्कूलों को शक की नज़र से देखने लगे। उनका आरोप था कि यह एक हिन्दुओं द्वारा बड़ा भारी षड्यंत्र है ताकि हिन्दुस्थान में इस्लाम समाप्त हो जाए और मुसलमानों का निजी अस्तित्व समाप्त होकर वे हिन्दुत्व में मिल जाएं। इसके बिल्कुल विपरीत विचार प्रस्तुत किए जाते हैं कि विश्व भर में मदरसों की संख्या बढ़ाना, जो स्पष्टतः देखा जा सकता है, एक

ज़बरदस्त वैश्विक इस्लामिक षड्यंत्र हैं। साथ–साथ मुसलमानों का यह दृष्टिकोण है कि हिन्दुस्तान में इस्लाम को हिन्दुओं से गंभीर खतरा है।

इसीलिए एक देवबंदी आलिम के अनुसार ''आज मदरसे इस्लाम के किले हैं, जिनके द्वारा इस्लाम मज़हब को हिन्दुस्थान में सुरक्षित रखना और मुसलमानों और मज़हबी पहचान को कायम रखना उन्हीं पर निर्भर है।'' (कुलहिंद दीनी मदारिस कन्वैंशन सोविनियर, ऑल इंडिया मुस्लिम मिल्ली कॉन्सिल 1994 द्वारा प्रकाशित पृ. 7)

उलेमाओं द्वारा चलाए गए अभियान से मदरसे स्थापित करने के लिए अपूर्व धन मिलता है जिससे और अधिक मदरसे स्थापित किए जाते हैं। खाड़ी के अनेक मुस्लिम देशों द्वारा भी इन मदरसों के स्थापित करने में सहयोग किया जाता है। स्पष्ट है कि अनेक मुस्लिम संगठन मख्तब और मदरसे स्थापित करने में और अधिक रुचि दिखा रहे हैं ताकि मुसलमान बच्चों को अपने मज़हब की कट्टरता सिखाई जा सके।

दारुल–उलूम, देवबंद जैसे विश्वविख्यात मदरसे में आज भी हनफी कानून सिखाया जाता है। इस विषय की प्रायः सभी पुस्तकें 500 वर्ष पुरानी हैं और उनमें से कुछ 1000 वर्ष पुरानी भी हैं। इन पुस्तकों को मदरसों में तरह–तरह के विश्लेषण करके उलेमाओं द्वारा पढ़ाया जाता है। हनफी कानून की मुख्य पुस्तक जो आज भी देवबंद मदरसे की ऊँची कक्षाओं में पढ़ायी जाती है वह है '*हिदाया* के चार खण्ड'' जिसको शेख बुरहानुद्दीन अबुल हसन अली अल मार्घीनानी (जन्म 1117 ई.) ने लिखा था जिसमें मुसलमानों द्वारा काफिरों से किए जाने वाले बर्ताव की विस्तृत जानकारी भी शामिल है। अनेक उलेमा हिदाया की चारों पुस्तकों को कंठस्थ करते हैं तथा गर्व भी करते हैं। इसी हिदाया में लिखित शरीया कानून को मध्यकालीन हिन्दुस्थान में उलेमाओं द्वारा सख्ती से हिन्दुओं पर थोपा गया और अनेक बर्बरताएं की गईं।

हिदाया का अंग्रेज़ी भाषा में अनुवाद ईस्ट इण्डिया कंपनी के भारत स्थित अधिकारी सर चार्ल्स हैमिल्टन ने किया तथा यह अनुवाद 1791 ई. में लंदन से प्रकाशित हुआ। हिदाया में यूं तो मुसलमानों से संबंधित विभिन्न विषय हैं जो सर्वदा उनका मार्गदर्शन करते हैं। साथ–साथ हिदाया में काफिरों से संबंधित कानून को खण्ड–9 में लिखा है जिसमें कुरआन आधारित राजनीतिक आदेश वर्णित हैं। अनेक लेखकों के अनुसार मध्यकालीन इस्लामी राज्य के दौरान अनेक उलेमाओं को यह हिदाया पूर्ण कंठस्थ थी।

हमारा देश गत 25 वर्षों में जेहादी आतंकवाद से जूझ रहा है, परन्तु विश्व के अनेक देश, विशेषतया अमेरिका व यूरोप के देशों का इस ओर ध्यान 9/11 के बाद ही गया। अब यह सवाल ज़ोर से उठाया जाने लगा कि **''क्या मदरसे जिहादी**

आतंकवाद के गढ हैं ?'' जहाँ तक हमारे देश का संबंध है, यह विषय एक ज़ोरदार बहस का केन्द्र बिन्दु बना है। इस गंभीर विषय को राजनीतिक संदर्भ में समझना आावश्यक है।

स्मरण हो कि जमायते–इस्लामी के संस्थापक मौलाना सैयद अबुल आला मौदूदी का दृढ़ता से मानना था कि मुस्लिम जगत में किसी अमुक देश की राष्ट्रीयता संभव नहीं। मुसलमान चाहे वह किसी भी देश का निवासी हो उन सबका एक राष्ट्र है। इसी कारण मुसलमानों का अलग–अलग राष्ट्र का होना संभव नहीं।

स्वतंत्रता मिलने तथा मुसलमानों को पाकिस्तान मिल जाने के बाद भी जमायते–इस्लामी हिन्द ने हिन्दुस्थान में इस्लामी शासन पुनः स्थापित करने का लक्ष्य नहीं त्यागा; यद्यपि खण्डित हिन्दुस्थान में अस्थायी तौर पर गैर–इस्लामी शासन में बने रहना स्वीकारा। यह जमायते इस्लामी हिन्द को हिन्दुस्थान में बने रहे मुसलमानों की संख्या कम रह जाने के कारण मजबूरन स्वीकारना पड़ा। उनका निश्चित मत था कि यह स्थिति मुसलमानों के अल्पसंख्यक बने रहने तक ही चलेगी। इसी कारण प्रतीक्षा करना आवष्यक हो गया। **स्पष्ट है कि उनका लक्ष्य स्पष्ट था, जो आज भी ज्यों का त्यों बना है – हिन्दुस्थान का इस्लामीकरण–जिसके लिए मुसलमानों की जनसंख्या बढाई जा रही है।**

इस्लाम की विशेषता रही है कि वह परिस्थितियों के अनुसार अपने को ढाल लेता है। यह रणनीति स्वयं पैगम्बर मोहम्मद ने अपनाई थी। जमायते–इस्लामी ने परिस्थिति को देखते हुए निर्णय किया कि मुसलमानों को फिलहाल हिन्दुओं के बीच बने रह कर तथा इस्लामी प्रचारक बन कर कार्य करना चाहिए, साथ–साथ आशा कि ऐसी कार्य प्रणाली अपना कर वह हिन्दुओं का मन इस्लाम की ओर आकर्षित कर सकेंगे जिससे उनका भारत के इस्लामीकरण का लक्ष्य सरल बन सकेगा। हम पहले भी अनेक उलेमाओं के विचार पाठकों के समझ रख चुके हैं।

क्या मदरसों की पढ़ाई में बदलाव संभव है ?

देवबंद मदरसे के पढ़े मौलाना ममसद अली का मानना है कि पुराने विचारों के उलेमा मदरसों की पढ़ाई में किसी भी प्रकार का बदलाव नहीं लाना चाहते। उनका मानना है कि ऐसे उलेमा प्रकाश से भयभीत होते हैं क्योंकि उन्हें अंधेरे में बने रहने की आदत है। फिर भी मदरसों के ऊपर निरंतर दबाव बना रहता है कि मदरसों का, विशेषतया हिन्दुस्तान के प्रसिद्ध देवबंद मदरसे का आधुनिकीकरण होना चाहिए।

सन् 1994 में देवबंद मदरसे ने देशभर से देवबंद प्रणाली से चलाए जा रहे मदरसो के अध्यापकों को बुलाकर एक गोष्ठी आयोजित की। इस गोष्ठी को आयोजित करने का प्रमुख कारण यह विचार करना था कि ''क्या मदरसों की शिक्षा प्रणाली में बदलाव लाना आवश्यक है।'' इस गोष्ठी के मुख्य वक्ता स्वयं देवबंद

मदरसे के रेक्टर मौलाना मारघुबुर्रहमान थे। अपने अध्यक्षीय भाषण में इन मौलाना साहब ने ज़ोर देकर स्पष्ट किया कि मदरसों में किसी भी नवीनतम शिक्षा प्रणाली को अपनाने की आवश्यकता नहीं है। उनका कथन था कि देश में नवीनतम शिक्षा पाने के हज़ारों/लाखों स्कूल हैं जहाँ जो चाहे अपनी रुचि के अनुसार शिक्षा प्राप्त कर सकता है। इस गोष्ठी के अंत में प्रस्ताव पारित किया गया जो निम्नलिखित है। **''क्योंकि इस्लाम अपने में एक संपूर्ण जीवन प्रणाली (मुक्कमिल दीन) है तथा इसमें सब समस्याओं से निपटने के तरीके मौजूद हैं, इसी कारण मुसलमानों को अपनी सभी समस्याओं से निपटने के लिए केवल कुरान, हदीस तथा शरीया कानून पर अपनी आस्था रखनी चाहिए। इस कारण हमारे मुसलमान भाइयों को पाश्चात्य ज्ञान तथा संस्कृति से सहायता लेने की तनिक भी आवश्यकता नहीं है। मदरसों को अपने स्वरूप ''संपूर्ण मज़हबी'' तालीम का केन्द्र जैसी प्रथा चली आ रही है, बने रहना चाहिए।''** हरियाणा के मेवात क्षेत्र में स्थित एक मदरसे के प्रधानाचार्य ने भी अपने भाषण में कहा कि मदरसों में पढ़ाए जाने वाले विषयों में किसी भी बदलाव की आवश्यकता नहीं है।

स्वतंत्रता मिलने के बाद देश के पहले प्रधानमंत्री द्वारा मदरसा शिक्षा प्रणाली के विषय में कोई भी स्पष्ट नीति नहीं अपनाई गई। 1950 ई. में भारतीय संविधान में अल्पसंख्यकों को अपने–अपने मनपसंद शिक्षा संस्थान स्थापित करने की खुली छूट मिल गई। आजादी के बाद जहाँ देश में 88 मदरसे थे, अब मदरसों की संख्या कई लाख हो चुकी है। **साथ–साथ प्रस्ताव है कि देश की लगभग बत्तीस लाख मस्जिदों में दीनी तालीम के केन्द्र स्थापित होने चाहिएं जिससे प्रत्येक मुस्लिम बच्चा लड़का अथवा लड़की को मज़हबी शिक्षा मिल सके।** यह देखा गया है कि उलेमा मुस्लिम बच्चों को केवल मदरसों में पढ़ने पर बल देते हैं। उनका मानना है कि यदि मुस्लिम बच्चे देश के दूसरी जातियों के बच्चों के साथ शिक्षा लेंगे तो वे अपने मज़हब से हटते जाएंगे। यह उलेमा कभी नहीं होने देंगे क्योंकि हिन्दुस्थान में इस्लाम मज़हब को सुरक्षित रखने की जिम्मेदारी उन्हीं की है। हम देख चुके हैं कि इस्लाम के भारत आगमन से लेकर मुस्लिम शासन काल के अंत तक ये उलेमा निरंतर राज प्रणाली पर हावी रहे और इनकी बिना राय के कोई भी सुल्तान या बादशाह मज़हबी काम में हस्तक्षेप नहीं करता था। केवल अकबर ऐसा बादशाह था जिसने इस अभिमानी वर्ग को (उलेमाओं को) हस्तक्षेप नहीं करने दिया। वैसे भी अकबर मुगल बादशाहों में अकेला बादशाह था जिसने हिन्दुओं के प्रति उदार नीति अपनाई। मदरसों में अकबर जैसे उदारवादी मुस्लिम बादशाह की निरंतर निंदा की जाती है और साथ–साथ महमूद गज़नवी, मुहम्मद गौरी, अलाउद्दीन खिलजी, इब्राहिम लोदी, शाहजहां और अंत मे औरंगज़ेब जैसे जिहादी बादशाहों और सुल्तानों की प्रशंसा की जाती है। इस विषय में **मौलाना अबुल**

हसन अली नदवी ने अपने विचार स्पष्ट किए जो निम्नलिखित हैं:–

''ऐसा लगता था कि अकबर जैसे शक्तिशाली सम्राट ने भारत जैसे भूभाग को इस्लाम से हटाकर बहुदेवतावाद के सांचे में (हिन्दुत्व) में ढालने का लगभग निश्चय कर लिया था। जबकि उससे पहले लगभग 400 वर्ष यहाँ इस्लाम का गौरवमयी शासन रह चुका था। नदवी साहब आगे लिखते हैं कि अकबर का प्रत्येक वंशज पहले से उत्तम सिद्ध हुआ, और फिर आया औरंगज़ेब जिसका शासनकाल इस्लाम का एक उज्ज्वल अध्याय है। अनेकानेक उलेमा प्रयत्नशील हैं कि इस्लाम के इस गौरवमयी युग को पुनः वापिस लाने के लिए निष्ठा, लगन, बुद्धिमानी और चतुराई से लगे रहना चाहिए।

विश्व के सभी उलेमा स्पष्ट करते हैं कि इस्लाम मज़हब में राजनीति का ऐसा समावेश है जिसे कभी अलग नहीं किया जा सकता। देश के सभी मदरसों में इस्लाम का इतिहास, पैगम्बर की जीवनी तथा पैगम्बर द्वारा अपनाए कार्यकलाप की विस्तृत जानकारी पर ज़ोर दिया जाता है। इसी प्रकार प्रारंभिक चारों खलीफा जो पैगम्बर के संबंधी थे उनका स्वर्णयुग तथा उनके द्वारा अपनाई गई नीतियां इन मदरसों में पढ़ाई जाती हैं। उन्हें यह भी पढ़ाया जाता है कि आदर्श राज तभी संभव है जब राज खलीफा द्वारा किया जाता हो तथा राज में शरीया कानून लागू हो। इस प्रकार उन्हें शरीया कानून तथा उसका मूल स्रोत ''हिदाया'' में दर्शाया कानून जो 1000 वर्ष पुराना है, पढ़ाया जाता है। इस्लाम में किसी भी प्रकार का बदलाव लाना संभव नहीं। इस प्रकार मदरसों में पढ़ने वाले तालीबानों के मस्तिष्क में कूट–कूट कर भरा जाता है कि जिन देशों में, जैसे हिन्दुस्थान, यदि मुस्लिम राज नहीं है तो वहाँ रहते प्रत्येक मुसलमान का मज़हबी कर्तव्य है कि वह पैगम्बर मोहम्मद द्वारा (622–632 ई.) के दौरान अपनाई गई नीतियों का निष्ठापूर्वक पालन करे। इसकी विस्तृत जानकारी दी जा चुकी है। **वास्तव में इस प्रकार का इतिहास और शिक्षा किसी मुसलमान तालीबान को जब वह दारुल–हरब (हिन्दुस्थान) में रहता हो, देशभक्त कैसे बनने दे सकती है ?** उलेमा भी राष्ट्रीयता के मामले पर परस्पर विरोधी विचार देकर देशवासियों को संशय की स्थिति में डाले रखते हैं। मिसाल के तौर पर कुछ देवबंदी उलेमा विचार प्रकट करते हैं कि सब भारतवासी चाहे वे हिन्दू हों या मुसलमान, सब एक ही राष्ट्र के हैं। इसके बिल्कुल विपरीत कुछ दूसरे उलेमा फरमाते हैं ''इस्लाम में राष्ट्रीयता का कोई स्थान नहीं''। हिन्दू व मुसलमान तो एक दूसरे के घोर शत्रु हैं तथा वे कभी एक नहीं हो सकते। कुछ अन्य उलेमाओं की राय है कि मुसलमानों को राष्ट्रीयता का पाठ पढ़ाना ''एक विश्वव्यापी षड्यंत्र है ताकि मुस्लिम उम्मा को विश्व में अलग–अलग बांटा जा सके।

जमायते–इस्लामी के एक उलेमा के जो उत्तर प्रदेश के एक मदरसे में पढ़ाते हैं विचार निम्नलिखित हैं :–

''इस्लाम मज़हब व राष्ट्रीयता परस्पर विरोधी हैं तथा इनका सहअस्तित्व संभव नहीं। इस्लाम का दावा है, कि समस्त मुस्लिम जगत् बिना किसी रंग, भाषा, देश के बिना भेदभाव किए मिलकर एक मुस्लिम समुदाय है। वे सब परस्पर भाई हैं और एक ही राष्ट्र के हिस्से हैं। स्पष्ट है कि इसके विपरीत समस्त गैर–मुसलमान चाहे उनका कुछ धर्म या मज़हब या राष्ट्र हो, एक विपरीत समुदाय के सदस्य हैं। मुसलमान तो अल्लाह के दल (हिज़बुल्लाह), तथा बाकी सब शैतान दल (हिज़–उल–शैतान) हैं। इस्लाम मुसलमानों से अपेक्षा करता है कि वह एक विश्वव्यापी इस्लामी ''खलीफा'' को पुनः स्थापित करें। फिलहाल मुसलमानों के लिए आज की स्थिति में यह काम सरल नहीं दिखता। मुसलमान इस काम को अपनी सैनिक शक्ति से अंजाम देने में भी असमर्थ हैं। इसी कारण गैर–इस्लामी होते हुए भी हमें अस्थायी रूप से वर्तमान के बहुराष्ट्रीय सिद्धांत को मजबूरन स्वीकारना चाहिए तथा धीरे–धीरे तथा शांति से तथा निरंतर अपने प्रयासों द्वारा अपने लक्ष्य की तरफ अग्रसर होते रहना चाहिए। (लक्ष्य स्पष्ट है, विश्व का इस्लामीकरण – प्रतीक्षा करना उन्हें स्वीकार है। यह मुसलमानों द्वारा स्थिति को देखते हुए एक सोची–समझी रणनीति है जो प्रजातांत्रिक देशों में स्पष्ट तौर से सिखाई जा रही है – लेखक)

उलेमाओं का स्पष्ट मत है कि इस्लाम की शिक्षा के अनुसार यदि किसी समय मुस्लिम जगत के लिए परस्पर विरोधी परिस्थितियों से गुज़रना पड़े तो ऐसी परिस्थिति गैर–इस्लामी होने के बावजूद उन्हें कम खतरे वाला रास्ता अपनाना चाहिए। मिसाल के तौर पर हिन्दुस्तान में कुछ हिन्दू संगठन हिन्दू राष्ट्र के पक्ष में विचार प्रकट करते हैं तथा ऐसी स्थिति में मुसलमानों को शांत रहकर ऐसी शक्तियों को निरंतर कमज़ोर करने का सरल उपाय चुनाव में अपने मताधिकार का बुद्धिमत्ता से प्रयोग कर परास्त करना चाहिए। मुसलमान इसी में अपना भला समझते हैं और इसी कारण देश के चुनावों में अधिकांश मुसलमान उलेमाओं के मार्गदर्शन द्वारा फतवों के आधार पर उन्हीं दलों को वोट देते हैं जो स्पष्टतः पंथनिरपेक्ष नीतियां अपनाने का दावा करते हों। यह समझ लेना अति आवश्यक है कि हिन्दुस्थान के प्रत्येक मुसलमान के मन तथा मस्तिष्क में इन मदरसों में पढ़ते हुए यह बिठा दिया जाता है कि केवल इस्लामीराज की स्थापना ही उनकी समस्त विपदाओं का एक मात्र हल है। उन्हें साथ–साथ यह पाठ भी पढ़ाया जाता है कि यदि मुसलमान हिन्दुस्थान पर पुनः राज करने में सफल होते हैं तो परिणाम न केवल उनके लिए बल्कि समस्त देशवासियों के लिए हितकर होगा। ऐसाा निरंतर प्रयास करते रहना इस्लामिक जिहाद का एक विशेष स्वरूप है।

इसी संदर्भ में देश के मदरसों की भूमिका समझनी चाहिए। मदरसों में कुरआन आधारित मान्यताएं, हदीसों में उजागर किए गए उदाहरण तथा पैगम्बर मोहम्मद के आदेश, इस्लामिक राज स्थापित करने की अनिवार्यता तथा शरीया कानून आधारित

राज चलाना प्रत्येक मुसलमान के दिल में एक ऐसा जुनून पैदा कर देता है जिसके कारण हर प्रकार से जिहाद करना; आवश्यकता पड़े तो फिदाईन बनकर काफिरों को क्षति पहुँचाने के इरादे से स्वयं को ही नष्ट कर लेना, ये सब उपाय इस्लामी शिक्षा के माध्यम से तालिबान ग्रहण करते हैं। पाठक स्पष्ट समझ लें कि मदरसों के आज के शिक्षक, मौलाना, उलेमा तथा अन्य स्वयं इन्हीं मदरसों से विशिष्ट योग्यता प्राप्त पूर्व तालिबान हैं। मदरसों की पढ़ाई का यह सिलसिला निरंतर नए–नए भावी उलेमा तैयार करता रहता है।

गत कुछ वर्षों से हिन्दुस्थान के मदरसों में नए विषय पढ़ाना प्रारंभ किया गया है। पूरी पढ़ाई समाप्त करने के बाद जैसे ''फाजिल'' दर्जा, कुछ चतुर तालिबानों को दूसरे धर्मों की शिक्षा देना प्रारंभ हुआ है जिससे उन्हें दूसरे धर्मों का ज्ञान प्राप्त हो जाने पर ये प्रचारक बने तथा दूसरे मतावलम्बियों (हिन्दुओं) के समक्ष मौखिक जिहाद में लग जाएं। दूसरे धर्मों की किताबें, जो स्वयं उलेमाओं द्वारा लिखी गईं, उनके धर्मों के अनुयायियों को अपने धर्म से विचलित करने की नियत से लिखी गईं। मदरसों में ऐसी शिक्षा देने का अभिप्राय दूसरे धर्मों को झूठा सिद्ध करने तथा उनके अनुयायियों के समक्ष इस्लाम को अकेला सच्चा मज़हब सिद्ध करने के इरादे से दी जा रही है। अनेक उलेमाओं का स्पष्ट मत है कि मुस्लिम समुदाय के प्रत्येक व्यक्ति को ऐसे जिहाद में जुट जाना चाहिए। इस **विधि को ''दवाह'' कहते हैं जिसका मकसद दूसरे मतावलम्बियों को इस्लाम स्वीकार करने का निमंत्रण देना है।**

एक आलिम मौलाना सैयद हमीद उल हसन प्रधानाचार्य जामिया नाज़मिया की जो शिया मज़हब का लखनऊ स्थित बड़ा मदरसा है तथा मौलाना साहब स्वयं शिया मज़हब के देश के प्रमुख उलेमा माने जाते हैं, राय है कि जिन देशों में विभिन्न मज़हब के लोग रहते हों (जैसे हिन्दुस्थान में) मज़हबी नेताओं को सभी मतावलम्बियों के समक्ष मज़हबी सद्भाव बढ़ाने के लिए कार्य करना चाहिए। इन मौलाना साहब के अनुसार यह ही वास्तविक ''जिहाद' है। यह विचार मौलाना साहब ने 21 मार्च 2003 को एक भेंटवार्ता में प्रकट किए। (*योगिन्दर सिकंद ने अपनी पुस्तक "Bastions of the Believers" पृ. 256)।*

हिन्दुस्थान के मदरसों का पाठ्यक्रम (सिलेबस)

1. उर्दू और फारसी की शिक्षा (शोबा दीनियत उर्दू–ओ–फारसी)

   दरजा अफलत : फारसी के अक्षर; इस्लाम की पहली स्वीकारोक्ति (कलिमा) प्रारंभिक मजहबी ज्ञान, सौ तक की गिनती, उर्दू अक्षर का प्रारंभिक ज्ञान

2. **दर्जा अव्वल (कक्षा–1)** कुरआन के कुछ हिस्सों को रटाना; प्रारंभिक तीन कलिमाओं को याद कराना; उर्दू व्याकरण; लिखित उर्दू; प्रारंभिक मज़हबी विश्वास और उस पर अमल करना; पहाड़े, इबादत करना

3. **दर्जा दोउम (कक्षा–2)** कुरआन के अंशों को रटना; पाँचों कलिमाओं को याद करना; प्रारंभिक मज़हबी विश्वास और उस पर अमल करना; उर्दू व्याकरण; हिन्दी अक्षर ज्ञान; प्रारंभिक गणित, इबादत करने की प्रक्रिया

4 **दर्जा साउम (कक्षा–3)** कुरआन के अंशों को रटना; प्रारंभिक इस्लाम का इतिहास; मज़हबी विश्वास और मान्यताएं; उर्दू व्याकरण; हिन्दी व्याकरण; फारसी का ज्ञान; अंग्रेज़ी अक्षर ज्ञान; स्थानीय भूगोल; प्रारंभिक गणित; 6 कलिमाओं को कंठस्थ करना। इबादत की पूर्ण शिक्षा, दुआ देना और दफनाना (अंतिम संस्कार की प्रक्रिया)।

5. **दर्जा चाहरूम (कक्षा–4)** कुरआन को कंठस्थ करना; उर्दू व्याकरण; फारसी साहित्य; इस्लाम का इतिहास; मज़हबी विश्वास और मान्यताएं; स्थानीय भूगोल; साधारण अंग्रेज़ी; प्रारंभिक हिन्दी, प्रारंभिक गणित, प्रारंभिक विज्ञान

6. **दर्जा पंजम (कक्षा–5)** फारसी साहित्य और व्याकरण; उर्दू साहित्य; प्रारंभिक हिन्दी; प्रारंभिक अंग्रेज़ी; भारत का इतिहास; दारुल–उलूम देवबंद के संस्थापकों का इतिहास; भारत का भूगोल; साधारण गणित; सामान्य ज्ञान

दर्जा अरेबिया

साल अव्वल (कक्षा–1) पैगम्बर की जीवनी; अरबी व्याकरण; कुरआन को पढ़ना और कंठस्थ करना; कुरआन का शुद्ध उच्चारण

साल दोयम (कक्षा–2) अरबी व्याकरण, फिक कादरी (कानून का ज्ञान); कुरआनी लॉजिक, तज़बीद (सुलेख), कुरआन का शुद्ध उच्चारण।

साल साउम (कक्षा–3) अरबी व्याकरण; कुरआन के हिस्सों का तर्जुमा; फिक कादरी (कानून) हदीस; अख्लाक, लॉजिक, तजबीद, चार प्रारंभिक स्वर्णकालीन खलीफाओं का इतिहास

साल चाहरूम (कक्षा–4) कुरआन के हिस्सों का अनुवाद; फिक (शरीया विकाया); तजबीद; उमायद अब्बासीयद औ ऑटोमन खलीफाओं का इतिहास; संसार और अरब का भूगोल

साल पंजम (कक्षा–5) कुरआन का तर्जुमा, फिक, असूल अलफिक, अदब, इस्लामी विश्वास, तजबीद और भारतवर्ष में मुसलमान शासकों का इतिहास

साल षशुम (कक्षा–6) कुरआन का विश्लेशण; फिक हिदाया; तफसीर के सिद्धांत; फिक के सिद्धांत, तज़वीद (पैगम्बर की जीवनी), अरबी साहित्य और फलसफा

साल हफ्ता (कक्षा–7) हदीस का अध्ययन, फिक हिदाया, अकाइद, विभिन्न इस्लामी स्कूलों के कानून

साल हशतम् (कक्षा–8) (साल हशतम् को उदरा–ए–हदीस शरीफ भी कहा जाता है) हदीस का विशेष ज्ञान (बुखारी, मुस्लिम, तीरमिधी; अबुदाउद, निशाई, इब्न माजा; तहावी, शमाइल तिरमिधी; मुत्तवा इमाम मलिक; मुत्तवा इमाम मुहम्मद)

विशिष्ट शिक्षा (स्पैशलाइज़्ड कोर्स) (तकमील/तखसूस)

फाजिलत स्तर के बाद लगभग 25 छात्र निम्नलिखित विशेषज्ञ दर्जों में दाखिल किए जाते हैं :–

1. तफसीर
2. मज़हबों का तुलनात्मक अध्ययन
3. फिक (कानून)
4. अरबी साहित्य
5. इफ्ता (फतवा देने की शिक्षा)

दारुल उलूम देवबंद तथा भारत में इससे जुड़े अन्य मदरसों में आज भी हनफी फिक (कानून) की शिक्षा दी जाती है। इसकी अधिकांश पुस्तकें पाँच सौ साल से अधिक पुरानी हैं, कुछ ऐसी भी हैं जो एक हजार साल पहले लिखी गईं। इनको मध्यकालीन हनफी उलेमाओं द्वारा विश्लेषण की गई तफसीर को आज तक इन मदरसों में पढ़ाया जाता है। हनफी फिक की विशेष पुस्तक जो देवबंद और अधिकांश दूसरे उच्च स्तरीय मदरसों में पढ़ायी जाती है, हिदाया के चार खण्ड हैं जो 12वीं शताब्दी में केन्द्रीय हनफी फिक ''शेख बुरहानुद्दीन अबुल हसन अली अल मारगिनानी'' ने लिखा था (जन्म 1117 ई.) इन हिदाया के खण्डों में अनेक विषय हैं जिनमें इस्लाम के अनुयायियों तथा काफिरों के साथ कानून लगाने का विस्तृत वर्णन है।

मदरसों की पुस्तकों में पढ़ाए जाने वाले कुछ अंश –

1. अल्लाह को पूज, वतन को ना पूज (पृ.68, मनुहाजू अलहरव्यातू–भाग–2)
2. ऐ खुदा हम तेरी इबादत करते हैं और शुक्र करते हैं, किसी दूसरे खुदा की इबादत नहीं करते। (पृ. 70, मनुहाजू अलहरव्यातू, भाग–2)
3. अरब के लोग अक्सर मिट्टी और पत्थर की मूर्तियां बनाकर उन्हें पूजते थे। लड़कियों को पैदा होते उन्हें मार डालते, हज़ारों गुनाह किया करते, धीरे–धीरे लोग इस्लाम को मानने लगे। उनको समझाया गया कि आप बुतों की पूजा क्यों करते हो। खुदा एक है उसकी इबादत करो (पृ. 16, बेदीनी)
4. हर एक मुसलमान को चाहिए कि वह खुदा के रास्ते पर ही चले। (पृ. 37, बेदीनी)

5. आपने फरमाया कि अगर तुम मुझे सच्चा समझते हो तो खुदा एक है। इसके सिवा कोई इबादत के लायक नहीं है। जो नहीं मानता वह जूतियों की पूजा करते हैं और सब काफिर हैं। तुम लोग अल्लाह पर ईमान लाओ वरना दोज़ख में जाओगे (पृ. 34, रसूल अरबी)
6. कुछ कौमें गाय के गोबर और पेशाब को पवित्र मानती हैं। गोबर से चौका देती हैं। हमारे नज़दीक इसका पेशाब और गोबर दोनों नापाक हैं। कपड़े या और चीज़ की दरमभर जगह पर पड़ जाए तो वह पलीद हो जाती है (पृ. 39, उर्दू की दूसरी किताब)
7. बाज़ लोग गाय की बहुत ताजीम (इज्जत) करते हैं। इसका नाम लेना हो तो अदब का लिहाज करके 'गोमाता' कहते हैं। इतना ही नहीं बल्कि उसके सामने माथा भी टेकते हैं और उसे पूजते हैं। हमारे मजहब में यह दुरुस्थ नहीं है क्योंकि यह चीज़ खुदा ने हमारे आराम के लिए बनायी हैं। इतना ही काफी है कि हम उसे अच्छी हाल में रखें। आराम पाएं, यह नहीं कि उसकी ऐसी इज्ज़त करें और पूजें। (पृ 41, उर्दू की दूसरी किताब)
8. हिन्दुस्तान में करोड़ों बुतों की पूजा होती थी – किस कदर शर्म की बात है। बदन के नापाक हिस्सों – लिंग को भी पूजा जाता था। हर शहर में अलग–अलग हुकूमत, लूटमार, झगड़े–फसाद थे। दुनिया को उस समय सच्चे रहबर की ज़रूरत थी। हुजूर हलिया वस्लम (पृ. 32, तारीख इस्लाम, प्रथम भाग)
9. शहर मक्का यहाँ तक कि खाना काबा के भी जो खास इबादत का मकाम है और बड़ा मुकद्दस घर है, मिट्टी और पत्थर की मूर्ति जिन्हें बुत कहते हैं, रखी गईं और उनकी पूजा होने लगी। इस हालत में अल्लाहताला ने अपने फजलवा कर्म से हजरत इस्माइल हलिया इस्लाम के घराने में हमारे रसूल करीम अल्लाह वलिया वस्लम को पैदा किया। जिनकी पाक तालीम की बदौलत दुनिया के बड़े हिस्से से बुतपरस्ती का नामोनिशान बिल्कुल मिट गया और सिर्फ खुदा की ही परस्ती होने लगी। (पृ. 4–5, बे–दीनी)
10. **सवाल** : जो लोग खुदाताला के सिवा और किसी की पूजा करते हैं या दो–तीन खुदा की पूजा करते हैं, उन्हें क्या कहते हैं ?

    जवाब : ऐसे लोगों को काफिर मुशरफ कहते हैं।

    सवाल : मुशरफ बख्शे जाएंगे कि नहीं ?

    जवाब : मुशरफों की बक्शीश नहीं होगी। वह हमेशा तकलीफ (मुसीबत) में रहेंगे

    सवाल : क्या यह कह सकते हैं कि हिन्दुओं के पेशवा जैसे कृष्ण जी, रामचन्द्र

जी वगैरह खुदा के पैगम्बर थे ?

जवाब : नहीं कह सकते – क्योंकि पैगम्बरी का खास ओहदा है जो खुदा की तरफ से खास बंदों को अता फरमाया जाता था। हिन्दुओं या अन्य कौमों के पेशवाओं के मुतालिक हम ज़्यादा से ज़्यादा इस कदर कह सकते हैं कि अगर उनके अमान दुरुस्त हों और उसकी तालीम आसमानी तालीम के खिलाफ न हों तो मुमकिन हैं कि वे नबी हैं मगर ये कहना अटकल का तीर है। (पृ. 12, तालीम इस्लाम का हिस्सा – 4)

कुर्बानी

1. प्रश्न : क्या मुस्लिम गाय की इबादत करता है ?

   उत्तर : नहीं। वह खुदा की इबादत करता है। गाय एक मख्लूक, अल्लाह इसका मालिक है। इबादत खालिक के लिए है कि ना कि मख्लूख के लिए। हर चीज़ में फायदा है। पानी में फायदा है, हवा में फायदा है, मिट्टी में फायदा है। क्या तुम इन सबकी इबादत करोगे ? नहीं – हम सिर्फ खुदा की इबादत करते हैं। (पृ. 78, मनुहाजू अलहरव्यातू, भाग–2)

2. मेरी वालदा ने एक मोटी गाय ज़बे करने के लिए खरीदी थी और कहा कि इसमें सात हिस्से हैं, एक मेरा, एक तुम्हारे वालदा का, एक तुम्हारा और चार हिस्से तुम्हारे दो–भाइयों और दो–बहनों के। (पृ. 37, अल्लकरात अलअषदत भाग–2)

3. कुर्बानी बच्चे, बालिक मुसलमान – मर्द व औरत, पर कुर्बानी वर्जित है। एक आदमी एक बकरा, सात बकरे,,सात आदमियों की तरफ से, एक गाय या एक और कुर्बानी चाहिए। बकरा एक साल, गाय दो साल की, और ऊँट पाँच साल का, सब ऐबों से पाक होकर इनकी कुर्बानी जायज़ है। कुर्बानी करने वाला इसका गोश्त खुद भी खाए और अजीज़ों और दोस्तों को भी खिलाए, खैरात भी करे, बेहतर तो यह है कि एक तिहाई गोश्त खैरात करे। (पृ. 22–23, छत्तीसगढ़ मदरसा बोर्ड, रायपुर, दीनियात कक्षा–4)

खुदा सब चीज़ों को पैदा करने वाला

अच्छी तरह से जान लो कि ''अल्लाह'' ने तुमको मिट्टी से बनाया, इसकी कुदरत बहुत बड़ी है, देखो अल्लाह ने कैसे बड़े पहाड़ पैदा किए और समुद्र भी कैसे पैदा किए। (पृ. 84, मनुहाजू अलहरव्यातू–भाग–2)

यह ज़मीन, आसमान, सूरज, चाँद–सितारों को अल्लाह ने बनाया। अल्लाहताला एक है, बहुत नहीं। अल्लाहताला मुसलमान होने और बुरी आदतों से बचने में राज़ी

होता है। वह काफिरों से कभी राज़ी नहीं होता। इस्लाम मज़हब तमाम मज़हबों से पाक, अच्छा और सच्चा मज़हब है। (पृ. 4–7, नूरी तालीम)

अल्लाह एक है, उसका कोई शरीक नहीं, उसने ज़मीन, आसमान, चाँद, सूरज, सितारे, दरिया, पहाड़, दरख्त, इंसान, हैवान, फरिश्ते और इसी प्रकार दूसरी तमाम चीज़ों को पैदा किया।

जिहाद

1. आखिर अल्लाहमियां ने हुजूर को हुक्म दिया कि दुश्मनों से लड़ाई करो। ऐसी लड़ाइयों को 'जिहाद' कहते हैं। (पृ. 69, रसूल अरबी)

2. बादशाहों के नाम हुजूर ने खत लिखे जिसमें लिखा था कि तुम मुसलमान हो जाओ और अपनी रियाया को भी मुसलमान बनाओ वरना तुम पर अज़ाब आएगा। जिन्होंने खत को फाड़ कर फेंक दिया और गुस्ताखी की तो सल्तनत ही बरबाद हो जाएगी। (पृ. 106, रसूल अरबी)

3. हमें अच्छी तरह से मालूम है कि सब बुराइयों की जड़ और हर किस्म के फितना, फसाद, जुल्म व ज़्यादती इंसानों की अल्लाह से बगावत के कारण है। हम यह जानते हैं कि यह ज़िम्मेदारी मुसलमानों पर आयद होती है। (पृ. 124, तारीख इस्लाम प्रथम भाग)

4. आप में से बहुत से लोग सोचते होंगे कि हम लोग मदरसे के छोटे लड़के हैं – हम क्या कर सकते हैं। खुद को करीम, सलीम, कली, हलिया, वसलम ने भी कमसिन (छोटी आयु) में दुनिया को संभाल लिया। हम भी बच्चे मिलकर बैठें। इंशाअल्लाह दुनिया की रहनुमाई ऐसे पाक हाथों में होगी जो तमाम खराबियों का नामोनिशां मिटा दे। (पृ. 125–126, तारीख इस्लाम, प्रथम भाग)

इस्लाम

1. जब इस्लामी हुकूमत हुआ करती थी और हिम्मतें बुलंद थीं तो नौजवान 'जिहाद' करने और मुल्क फतह करने का रियावतमंद हुआ करता था। कोई हुकूमत की बुनियाद कायम करता या शहादत की मौत हासिल करता (पृ. 51, अल्लकरात अलअशदत भाग–2)

2. जन्नत ऐसी जगह है जहाँ पानी, दूध और शहद के दरिया हैं। इनसे नहरें निकलती हैं। जन्नत की औरतें इतनी खूबसरत हैं यदि उनमें से कोई औरत ज़मीन पर झाँके तो सूरज की रोशनी मिट जाए। (पृ. 9, नूरी तालीम)

3. जो लोग जन्नत में जाएंगे, सदा तंदरुस्त रहेंगे और हमेशा जिंदा रहेंगे।

(पृ. 10, नूरी तालीम)

4. सब अपने अमाल (कर्म) के हिसाब से जन्नत और दोज़ख में भेज दिए जाएंगे, जो मुसलमान अपने गुनाहों की वजह से दोज़ख में गिर पड़ेंगे, हमारे पैगम्बर उनकी सिफारिश करेंगे और दूसरे पैगम्बर गुनाहगारों की सिफारिश करेंगे और सारे मुसलमान जन्नत में चले जाएंगे और सभी काफिर दोज़ख में जाएंगे (पृ. 12, तलकीन ज़दीद)

5. कब्र में भी सवाल–जवाब होंगे। मोमिन जवाब देगा – अल्लाह मेरा रब है, इस्लाम मेरा दीन है। काफिर जवाब नहीं दे सकेगा और इसलिए कब्र में काफिरों और गुनाहगारों का अंजाम होगा। (पृ. 13, तलकीन ज़दीद)

6. वह कयामत के दिन ज़िंदा करके सबके अमाल का हिसाब दे देगा और नेकी व बदी का बदला लेगा। (पृ. 26, इस्लामी तालिमात, पंजम के लिए)

7. रसूल–ए–खुदा जब किसी के घर में बच्चा होता है तो सबसे पहले उसे आपकी खिदमत में पेश किया जाता है। आप बच्चे के सिर पर हाथ फेरते, खजूर चबाकर लुआब (थूक) बच्चे के मुंह में डालते और उसके लिए बरकत की दुआ फरमाते (पृ. 13, हमारी किताब, कक्षा–4)

8. तुममें बेहतर वह शख्स है जो कुरआन सीखे और दूसरों को सिखाए। (पृ. 18, हमारी किताब–2, कक्षा–3)

9. हमारे प्यारे नबी हज़रत मुहम्मद सली अल्लाह हलिया वस्लम को जो लोग मानते गए वह मोमिन कहलाए। बाकी जो बात न मानने वाले काफिर कहलाए। अरब के सारे लोग मुसलमान हो गए। सबका दीन इस्लाम हो गया (पृ. 16–17, हमारी किताब–2, कक्षा–3)

10. सवाल : कुफ्र और शरीक किसे कहते हैं ?

जवाब : जिन चीज़ों पर ईमान लाना ज़रूरी है उनमें से किसी एक बात को भी न मानना कुफ्र है। खुदाताला की किताबों को न मानना कुफ्र है। (पृ. 19, तालीम इस्लाम–4)

सवाल : यदि गुनहगार आदमी बगैर तौबा किए मर जाए तो जन्नत में जाएगा या नहीं?

जवाब : हाँ। सिवाए काफिर और मुशरक के बाकि तमाम गुनाहगार अपने गुनाहों की सज़ा पाकर जन्नत जाएंगे। काफिर कभी भी जन्नत नहीं जाएंगे (पृ. 25, तालीम, भाग–4)

काफिर

1. पैगम्बर मोहम्मद ने उस्तनतुनिया के तरफ कूच किया और इसके लिए

ज़बरदस्त तैयारी की क्योंकि यह खुदा का फरमान है। काफिरों से मुकाबला करने के लिए तुम जो भी ताकत जमा कर सकते हो, तैयार करो (पृ. 62, अल्लकरात अलअशदत भाग–2)

2. इस्लाम को न मानने वाले को काफिर कहते हैं। मुसलमानों को अल्लाहताला मरने के बाद कब्र में आराम देगा और कयामत में हिसाब–किताब के बाद जन्नत में जगह इनायत फरमाएगा। काफिर अगरचे हर दुनिया में बड़े आराम से रहता है पर हकीकत में वह इज़्ज़त की जिन्दगी नहीं, और मरने के बाद उसे हमेशा दोज़ख की आग में जलाया जाएगा। (पृ–8, नूरी तालीम)

3. दोज़ख एक मकान है जिसमें काफिरों और गुनाहगारों के लिए आग भड़कायी गई है। हर तरफ आग ही आग होगी। गंदगी और कीचड़ होगी। (पृ. 11, नूरी तालीम)।

4. दीन इस्लाम को न मानना या दीन की जो बातें यकीन से साबित हैं इनमें से किसी एक का भी इंकार करना, 'कुफ्र' है। कुफ्र व शरक पर मरने वाले हमेशा दोज़ख में रहेंगे। जन्नत एक नुशानी, रूहानी और लतीफ जिस्मों का खूबसूरत आलम है, निहायत पाकिज़ा जहाँ आराम और राहत के जिस्म और जान के सारी लज्जतें हासिल जैसे बागात, महलात, नहरें, हूरें (पृ. 5, तलकीन ज़दीद)

5. दोज़ख एक ऐसा जहान है जिसमें दुःख, दर्द, रंज व गम के सभी अश्वाब मोहिया होंगे और हर किस्म के अज़ाम मौजूद नहीं होंगे। खुदा ने उसको काफिरों और गुनाहगारों के लिए पैदा किया है और काफिर उसमें हमेशा रहेगा। (पृ. 6, तलकीन ज़दीद)

6. वह बड़ा गुनाह करता है जो हिन्दुओं और बड़ी बदऐतों के मेले में जाता है। काफिरों की दीवाली, दशहरा मनाना या इस मौके पर उनके साथ रहना यह सब गुनाह है। (पृ. 44, तलकीन ज़दीद)

7. जो खुदा के अंजाम से डरते हैं, वह काफिर हैं। जो खुदा को सज़दा करते हैं, वह खुदा की रहमत के उम्मीदवार हैं। (पृ. 144, छत्तीसगढ़ मदरसा बोर्ड, दीनीयात कक्षा–2)

8. **सवाल** : जो लोग खुदा ताला को नहीं मानते, उन्हें क्या कहते हैं ?

जवाब : उन्हें काफिर कहते हैं। (तालीम इस्लाम)

साभार–शिक्षा बचाओ आन्दोलन समिति की पुस्तिका क्रमांक 34, 7/10
नेहरु नगर महात्मा गाँधी मार्ग, नई दिल्ली–65

उपरिवर्णित पाठ्यक्रमों से स्पष्ट है कि मुसलमान बच्चों को किस प्रकार की शिक्षा, मदरसों और मख्तबों में दी जाती है। उनके मस्तिष्क में काफिरों (हिन्दुओं) के विरुद्ध ज़हर भर दिया जाता है तथा उन्हें उनसे जिहाद करने के लिए प्रेरित किया जाता है। क्या मदरसों से निकले बच्चे सच्चे देशभक्त बन सकते हैं? क्या इन मदरसों से पढ़े मुसलमान हिन्दुओं के साथ सह–अस्तित्व की भावना रख सकते हैं ? – लेखक

<u>मदरसों द्वारा जिहाद का विस्तार</u> :– पाकिस्तान के अनेक जिहादी संगठन तेज़ी से विश्वभर में जिहाद फैलाने में लगे हैं। पाकिस्तान स्थित खुदामुद्दीन मदरसे के मौलाना के अनुसार उनका मदरसा बर्मा, नेपाल, चेचनिया, बंगलादेश, अफगानिस्तान, यमन, मंगोलिया तथा कुवैत के लड़कों को विस्तृत शिक्षा प्रदान करता है। उनके मदरसे में कुल 700 तालिबानों में, 127 विदेशी हैं। इसी प्रकार दारूल–उलूम हक्कानी (जिसका वर्णन किया जा चुका है। पृ.– 36), मदरसा (जिसके तालिबान अफगानिस्तान में लड़े) उज़बेकिस्तान, ताज़किस्तान, रूस तथा तुर्की के तालिबानों को शिक्षा देते हैं। जेसिका स्टर्न लिखती हैं कि इन मदरसों में चेचनिया देश के पढ़ने वाले एक तालिबान ने बताया कि मदरसे से लौटने के बाद उसका ध्येय रूस से लड़ना है। अमरीका के विदेश विभाग के अनुसार पाकिस्तान के बहुत से संगठन उज़बेकिस्तान में इस्लामी गतिविधियां तेज़ी से चलाते हैं ताकि वहाँ की धर्मनिरपेक्ष सरकारों को बदला जा सके। अनेक जिहादी संगठन जो मदरसों की देन है, ज़ोर देकर ऐलान करते हैं कि उन्हें भारत में जिहाद का विस्तार करना है। इस प्रकार पाकिस्तान स्थित मदरसे जिहाद का भूमण्डलीकरण कर रहे हैं।

लाल मस्जिद इस्लामाबाद के मदरसे :–

इस्लामाबाद स्थित लाल मस्जिद के परिसर में बने दो मदरसे – जामिया हफसा (बुरकाबंद लड़कियों वाला) जामिया फरीदिया (लड़कों का) ने संसार भर को हाल ही में स्पष्ट खुलासा किया कि मदरसे ही जिहाद के मूल स्रोत हैं। इस मदरसे के तालीबानों ने कुछ पुलिस कर्मियों को बंदी बना दिया जिन्हें छुड़ाने के लिए पाकिस्तान सेना के कमाण्डो द्वारा इन दोनों मदरसों को घेर लेने पर मौलवियों ने खुल्लमखुल्ला एलान किया कि मदरसे की सुरक्षा कर रहे कई छात्रा आत्मघाती हमलावर हैं। जहाँ अधिकतर छात्राों के पास लाठी ठण्डे हैं वहीं कुछ छात्रों के पास मशीनगन भी हैं। मदरसे के मौलाना अब्दुल रशीद गाज़ी ने घोषणा की कि उनके समर्थक छात्र हज़ारों की संख्या में मौजूद हैं और यदि मदरसों के खिलाफ किसी प्रकार की कार्रवाई की गई तो आत्मघाती बम हमले से जवाब दिया जाएगा (दैनिक जागरण 21.05.2007 से साभार)।

मौलाना अब्दुल रशीद गाज़ी कोई छोटे मुल्ला नहीं हैं बल्कि वह पाकिस्तान

के प्रसिद्ध उलेमा हैं। विश्व भर में जिहादियों द्वारा इसी प्रकार की कार्यशैली अपनाई जा रही है जिससे विश्वभर के लोग भलीभांति परिचित हैं। मिसाल के तौर पर पाकिस्तान के उत्तर–पश्चिमी क्षेत्र के मुफ्ती खालिद शाह ने कुछ दिन पहले जिहाद करने की घोषणा की तथा सभी आतंकवादी संगठनो से पाकिस्तान सरकार के खिलाफ एकजुट होकर कार्य करने को उकसाया। (टाइम्स ऑफ इंडिया दिनांक 04.05.2007 से साभार) साथ–साथ पाकिस्तान में ईसाइयों को धमकी दी जा रही है कि या तो वे इस्लाम स्वीकारें अन्यथा अपने घर खाली कर पलायन कर जाएं। उत्तर पश्चिमी प्रान्त की राजधानी पेशावर से 35 कि.मी. दूर चरसद्दा में रह रहे 50 ईसाई परिवार धमकी मिलने के बाद से दहशतज़दा हैं और स्वयं को असुरक्षित महसूस कर रहे हैं (दैनिक जागरण 18.05.2007)।

लगभग 21 महीने जेल में रहने के पश्चात् मौलाना अब्दुल अज़ीज़ को जो कट्टरपंथी लाल मस्जिद, इस्लामाबाद के मौलाना हैं, पाकिस्तान सरकार ने रिहा कर दिया। जेल से बाहर आने के बाद जुम्मे की नमाज़ लाल मस्जिद परिसर में मौलाना अब्दुल अज़ीज़ ने अदा करवाई। नमाज़ के पश्चात् उन्होंने ज़ोर देकर ऐलान किया कि वह अब सारे पाकिस्तान में अपने साथियों को लेकर शरिया कानून लागू करेंगे। स्पष्ट है कि पाकिस्तान इस समय एक विशेष तथा गंभीर स्थिति से गुज़र रहा है। यह जान लेना आवश्यक है कि पाकिस्तान हमारा पड़ौसी है और वहाँ पर हुई हर हलचल का हमारे देश से सीधा संबंध रहता है, क्योंकि संसार में सबसे अधिक मुसलमान यहीं पर रहते हैं।

क्या यह हास्यास्पद नहीं कि हमारे देश के उलेमा निरंतर कहते रहते हैं कि हिन्दुस्थान के मदरसे जिहाद की शिक्षा नहीं देते। इस विषय में केवल यह जान लेना पर्याप्त है कि विश्वभर के मदरसों का पाठ्यक्रम सदैव एक ही होता है। इस कारण देश के उलेमाओं की ऐसी दलीलों को कैसे मान लिया जाए।

उत्तर पश्चिम पाकिस्तान मालाकन्द व स्वात घाटी के मदरसों से निकले तालीबान

पाकिस्तान के उत्तर–पश्चिम में मालाकन्द क्षेत्र है जिसमें सात जिले हैं जिसमें स्वात घाटी भी शामिल है। सन् 1990 के दशक में इस क्षेत्र में मौलाना सूफी मोहम्मद का बहुत दबदबा था तथा तत्कालीन सरकार से एक समझौते के तहत मालाकन्द डिवीज़न में शरीया कानून लागू करने का एक समझौता हुआ था। इस समझौते पर कार्यान्वयन अदालतों के हस्तक्षेप के कारण न हो सका था। इस क्षेत्र में गत दो वर्षों से सूफी मोहम्मद के दामाद मौलाना फजलुल्ला जिन्हें एफ.एम.मुल्ला भी कहते हैं (क्योंकि यह एक एफ.एम.रेडियो भी चलाते हैं), अति सक्रिय हो गए। मौलाना फजलुल्ला अपने विचार इस रेडियो स्टेशन से निरंतर प्रसारित करते थे। जिससे पूरे क्षेत्र में उनका दबदबा हो गया। इनके समर्थक हज़ारों की संख्या में इस्लाम

के विद्वान् तालीबान हैं। इसकी गतिविधि निरंतर बढ़ती गई तथा वह बहुत शक्तिशाली बन बैठा। पूरे क्षेत्र में खौफ का माहौल पैदा कर दिया गया। सभी प्रकार के मनोरंजन के साधनों पर रोक लगा दी गई। पुरुषों को दाढ़ी रखना जबरन अनिवार्य कर दिया गया। लड़कियों के स्कूल बंद करा दिए गए। लगभग एक सौ अस्सी स्कूलों की ईमारतों को ध्वस्त कर दिया गया। लड़कों को केवल मदरसों में पढ़ाने के लिए ज़ोरज़बरदस्ती होने लगी। लड़कियों की शादी तालीबानों से कराना प्रारंभ करने पर ज़ोर दिया जाने लगा। पाकिस्तान सरकार द्वारा बड़ी शक्तिशाली फौज इस क्षेत्र में भेजनी पड़ी तथा यह कार्रवाई लगभग 20 महीने तक चलती रही। इसी बीच इस क्षेत्र में जबरन शरिया कानून लागू किया गया जिसके तहत खुलेआम फाँसी देना, मार डालना, कौड़े लगाना शामिल है। छोटे–छोटे अपराधों पर गोलियों से मार दिया जाना शुरू हो गया। पत्रकारों का वध होने लगा। मौलाना फजलुल्ला के तालीबान पाकिस्तान फौज से अधिक शक्तिशाली साबित हुए जिससे फौज को परास्त होना पड़ा। फलस्वरूप 1200 व्यक्ति स्वात घाटी में मारे गए तथा दो से पाँच लाख व्यक्तियों का स्वात घाटी से पलायन हुआ।

आखिरकार पाकिस्तान सरकार ने घुटने टेक दिए और फरवरी 2009 में स्वात घाटी में शरिया कानून लागू करने के लिए एक समझौता किया गया।

शरिया कानून पर एक नज़र

1. अदालतों में फैसले काज़ी द्वारा होंगे।
2. पुरुषों के लिए दाढ़ी रखना अनिवार्य होगा।
3. फौजदारी के मुकदमों का फैसला चार महीनों में दिया जाएगा।
4. बाकी सभी मुकदमें छः माह में निपटाए जाएंगे।
5. शरीया कानून वकालत के पाठ्यक्रम में पढ़ाया जाएगा।

स्वात घाटी की सफलता के बाद तालीबानों का हौसला बहुत बढ़ गया। अब वे पाकिस्तान के दूसरे क्षेत्रों की ओर अग्रसर हैं। गत 3 मार्च 2009 को लाहौर में श्रीलंका की क्रिकेट टीम पर आत्मघाती हमला किया गया। 20 मार्च 2009 को लाहौर स्थित पुलिस के ट्रेनिंग स्कूल पर घात लगाकर हमला किया गया, जिसमें अनेक पुलिस वालों की जानें गईं।

उपरिवर्णित तथ्यों से यह स्पष्ट है कि मदरसों में पढ़ा कर कट्टर जिहादी तैयार किए जा रहे हैं। ये हमारे देश के लिए भी गंभीर खतरा बन गए हैं। एक संसद् सदस्य ने संसद् में बयान देकर चौंका दिया कि जिहादी हमारे देश से सड़क के रास्ते केवल कुछ घण्टे की दूरी पर आ चुके हैं।

इन घटनाओं ने अमेरिका की चिन्ता भी बढ़ा दी है। मालकन्द क्षेत्र से ये

तालीबान सुविधापूर्वक अमेरिका की फौज के खिलाफ अफगानिस्तान आते–जाते किसी भी कार्रवाई को अंजाम दे सकते हैं।

यह जानना आवश्यक है कि मदरसे चाहे वे पाकिस्तान में हो, भारत में या अन्य किसी देश में, सभी में एक ही शिक्षा दी जाती है। सभी मदरसे एक सी मानसिकता पैदा करते हैं। हमारे देश में लाखों मदरसे स्वतंत्रता के बाद स्थापित हो चुके हैं। देश के मदरसे भी वही शिक्षा देते हैं जो पाकिस्तान के मदरसों में दी जाती है। यह समझना बड़ी भूल होगी कि हमारे देश के मदरसे जिहादी शिक्षा नहीं देते। सर्वदा याद रखना चाहिए कि जिहाद इस्लाम का अभिन्न अंग है। यह बात अलग है कि भारत में जिहादी मानसिकता वाले तालिबान अभी अदृश्य हैं, तथा समय पर ये स्लीपरसैल उठ कर सामने आ सकते हैं।

◆◆◆

अध्याय-५

मध्य एशियाई तेल – मदरसों का अपूर्व विस्तार

पाठकों के मन में विचार आएगा कि मदरसों का तेल उत्पादन से क्या संबंध है? इसका उत्तर धीरे– धीरे ज्ञात होने लगेगा।

पिछले 30–35 वर्षों में इस्लाम के पुनरुत्थान के दो विशेष पहलू हैं।

1. बीते कुछ वर्षों में यकायक विभिन्न इस्लामिक देशों में अद्‌भुत जागृति, साथ–साथ उत्पन्न आक्रामकता देखने में आई।
2. यह उत्थान विशेषतः 1970 से 1980 के दशक से शुरू हुआ।

आखिर ऐसा क्या कारण था कि विभिन्न मुस्लिम देश (उम्मत) इस्लाम की ओर इतनी तेज़ गति से बढ़ कर बल देकर अपनी इस्लामी पहचान दर्शाने लगे।

क्या इसका कारण यह था कि विभिन्न मुस्लिम देशों (लगभग 40) ने स्वयं इतनी उन्नति की हो या इसका कोई ऐसा संबंधित कारण था जिसका प्रभाव यकायक सभी मुस्लिम देशों पर एक साथ पड़ा। हमें यह कारण अवश्य जानना चाहिए।

Ali-A-Marzui लिखते हैं ''किसी मज़हब का राजनीतिक पुनरुद्धार प्रायः तब होता है, जब मज़हब या तो भयग्रस्त होकर किसी संशयकाल के दौर से गुज़र रहा हो या फिर उसके अनुयायियों में एक नया आत्मविश्वास पैदा हो गया हो। मरजुई का मानना है कि इस्लाम के पुनरुद्धार में इन दोनों कारणों ने एक साथ सहयोग देकर कार्य किया। (In the path of God -Islam & Political Power- by Daniel Pipes- page 282)

यूरोप के विभिन्न देशों ने 19वीं शताब्दी तक अनेक एशियाई तथा अफ्रीका के देशों पर अपना आधिपत्य जमाए रखा; परन्तु 20वीं शताब्दी में यह यूरोपीय प्रभुत्व अचानक घटने लगा। 1943 ई. से यूरोप द्वारा शासित विभिन्न देशों के स्वतंत्र होने की प्रक्रिया शुरू हुई। स्वतंत्रता मिलते ही आने वाले दशकों में इन देशों ने हर दिशा में उन्नति की। उसी काल में यू.एन.ओ. का जन्म हुआ जिसके ये विभिन्न देश सदस्य बने, तथा उन्हें अपनी बात सुनाने का अवसर प्राप्त हुआ। स्वतंत्र हुए देशों में अनेक इस्लामी देश थे। यूरोपीय देशों का प्रभुत्व समाप्त होते ही इस्लाम का

पुनरुद्धार प्रारंभ हुआ। मुस्लिम बच्चों को अपने मज़हब की विस्तृत जानकारी दी जाने लगी तथा उनके पाठ्यक्रमों में मज़हब के अनुरूप परिवर्तन लाया गया।

सन् 1943 और 1963 के बीच अधिकांश मुस्लिम देश स्वतंत्र हो चुके थे तथा ये सभी देश अपने मज़हब की ओर आकर्षित होने लगे। धीरे–धीरे मज़हबी कट्टरवाद इनके मन में आना प्रारंभ हो गया। कट्टरवाद लाने में किसी विशेष परिश्रम की आवश्यकता नहीं। केवल मज़हब को अपनी दिनचर्या का भाग बनाने से मज़हब के प्रति निष्ठा स्वयं आ जाती है।

इस्लामिक पुनरुद्धार का एक कारण उस काल का अरब–इस्राइली युद्ध बना, जिसने विभिन्न मुस्लिम देशों को एक मंच पर ला खड़ा किया। यरूशलम नगर के प्रति मुस्लिम समुदाय (उम्मा) का विशेष मज़हबी महत्त्व था, तथा इसके सन् 1967 से यहूदियों के सत्तापक्ष में आने से अनेक मुस्लिम देशों ने इस झगड़े को एक मज़हबी रुख दे डाला। सउदी अरब में विशेषकर वहाँ के नेताओं ने येरूशलम को दारुल–इस्लाम के दायरे में लाने की अनिवार्यता पर पूरी शक्ति से बल दिया। सन् 1969 में अल–अक्सा मस्जिद में लगी आग ने पूरे मुस्लिम जगत को मिलाने में सहायता की। मात्र एक महीने के बाद अनेक मुस्लिम शासकों की एक उच्च स्तरीय बैठक रब्बात में हुई। इस बैठक का परिणाम निकला कि एक मुस्लिम ''ऑर्गनाइज़ेशन ऑफ इस्लामिक कन्ट्रीज़'' नामक संगठन (ओआईसी) का जन्म हुआ। मुस्लिम शासकों की इस बैठक में निर्णय हुआ कि वे सब मिलकर फिलीस्तीन के लोगों की इस झगड़े में सहायता करेंगे। फिलीस्तीनी लोगों के समर्थन में सहायता देना इस बैठक का प्रमुख ध्येय हुआ। धीरे–धीरे केवल ''अरब मुल्कों'' शब्द के स्थान पर ''समस्त इस्लामी मुल्कों'' में बदल डाला गया। इतिहास में यह एक महत्त्वपूर्ण फैसला था जिसके दूरगामी परिणाम निकले। सन् 1967 की इस्राइल द्वारा अरब देशों की हार को समस्त उम्मा की शर्मनाक हार माना जाने लगा। साथ–साथ सन् 1973 की जीत को इस्लाम की जीत माना जाने लगा। कुछ प्रेक्षक (ऑब्ज़रवर) सन् 1967 तथा 1973 के युद्ध के परिणामों को दुनिया में इस्लामिक पहचान स्थापित करने का दर्जा देने लगे।

प्रश्न यह उठता है कि आखिर ऐसा क्या कारण रहा जिसने विश्व के विभिन्न मुस्लिम देशों के समुदायों को प्रभावित किया ? क्या इस्लामी जगत में कोई विशेष घटना घटी ? सच यह है कि हलचल हुई, विशेष घटना भी घटी। यह विशेष घटना थी **''कच्चे तेल की कीमतों में उछाल''**। तेल की कीमतों में उछाल 1970 से 1980 के दशक में घटी एक मात्र ऐसी घटना थी जिसने इस्लाम की राजनीतिक शक्ति को बढ़ा दिया।

इस बढ़ते तेल के उत्पादन और फलस्वरूप बढ़ती आय ने मुख्यतया इस्लामी जगत पर तीन प्रकार प्रभाव डाला।

1. सांसारिक मामलों में बढ़ावा मिलने से मुसलमानों का स्वयं इस्लाम के प्रति संकल्प बढ़ा।

2. विशेषकर सउदी अरब और लीबिया के पास इस्लाम को बढ़ावा देने के लिए पेट्रो डॉलर बढ़ने से दुनिया भर में इस्लामी उन्नति/प्रगति का मार्ग खुला।

3. ईरान में राजनीतिक उथल–पुथल हुई जिसके कारण अयातुल्ला खुमैनी ने पैरिस में बैठे ही शाह पहलवी के पैरों के नीचे से ज़मीन निकालते हुए स्वयं सत्ता पर आरुढ़ हो गया। ईरान के शाह को देश छोड़ कर भागना पड़ा। फलस्वरूप ईरान में कट्टर मज़हबी शासन की स्थापना से ईरान के बाहर भी अनेक मुस्लिम देशों के उलेमाओं का मनोबल बढ़ा।

निःसंदेह मुस्लिम जगत् के लिए यह 'तेल की कीमतों में उछाल' बीसवीं शताब्दी में इस्लाम के पुनरुद्धार के लिए अद्‌भुत वरदान सिद्ध हुआ। तेल ने इस्लामिक अनुयायियों को भी बढ़ाया।

इस कच्चे तेल तथा इस्लाम के कई पहलुओं पर आपसी संबंध जुड़े। इनका केन्द्र बिन्दु अरबी भाषा बोलने वाले मध्य एशियाई शासनों, जिसमें सउदी अरब विशेष है, बना।

तेल निर्यात करने वाले देशों के संगठन ओपीईसी (OPEC) के तेरह सदस्य हैं जिनमें दो देशों (वेनिजुएला और इक्वेडोर) के अलावा सब दारुल इस्लाम में है। इनमें आठ अरबी देश हैं, उत्तरी अफ्रीका के अलजीरिया तथा लीबिया; फारस की खाड़ी के हैं – सउदी अरब तथा संयुक्त अरब अमीरात, कतर, कुवैत, ईराक तथा ईरान : तथा इण्डोनेशिया (90 प्रतिशत मुस्लिम) : नाइजीरिया (लगभग 50 प्रतिशत मुस्लिम) जिसका सरगना बहुधा मुसलमान ही रहा। साथ गबन, जिसमें मस्लिम जनसंख्या बहुत कम होते हुए भी उसका राष्ट्रपति अलबर्ट बनार्ड बौंगो के सन् 1973 में मुस्लिम मज़हब अपनाने के कारण शासन मुस्लिम था। परिणाम यह निकला कि विश्व की आर्थिक नीतियां इन तेल निर्यात करने वाले देशों के हाथों में आईं जिससे समस्त निर्णय मुस्लिम गुट करने लगे।

फलस्वरूप यह संगठन ऐसी इस्लामी शक्ति बनी तथा जिसके पास तेल के असीम भण्डार होने से इन देशों का तेल की कीमतों पर पूरा नियंत्रण हो गया। तेल की कीमतों में लगातार वृद्धि की जाने लगी। इन मुस्लिम देशों की तिजोरियां डॉलरों से छलकने लगी।

उपरिवर्णित तेल निर्यात करने वाले देशों में से, विशेषतया लीबिया, सउदी अरब, कुवैत, कतर तथा यू.ए.ई. (संयुक्त अरब अमीरात) ने जो अरबी भाषा बोलने

वाले देश हैं, मिलजुल कर निर्णय लिया कि वे सब अपने देशों में शरिया कानून अपनाएंगे, जिससे इन देशों में जनता पर कोई भी कर न लगेगा। इस निर्णय से वहाँ के लोगों ने राहत की साँस ली।

इन पांचों देशों (शेखडम) में सउदी अरब का तेल उत्पादन सबसे अधिक होने के कारण तथा पैगम्बर की जन्मभूमि के देश ने, जिसमें मक्का एवं मदीना स्थित हैं, मज़हब को बढ़ाने की आवश्यकता समझते हुए इस्लाम को सुदृढ़ बनाने की ओर कमर कसी। तेल की कीमत को जो 1961 में एक डॉलर 80 सेंट प्रति बैरल थी, निरंतर बढ़ाया गया – बेहिसाब डॉलर आते गए – ज़कात देना शुरू हो गया तथा इस अपूर्व प्रगति का असर समस्त मुस्लिम जगत में स्पष्ट दिखने लगा। (सउदी अरब ने 1970 में कमाए 1.2 बिलियन डॉलर, 1974 में कमाए 29 बिलियन तथा 1981 में 101 बिलियन डॉलर। यह कमाई निरंतर बढ़ती रही। इस खुशहाली का परिणाम यह निकला कि इन शेखडम का प्रभुत्व ईसाई देशों पर जमकर पड़ने लगा। उनके लिए सब लक्ष्य संभव दिखने लगे। परिणाम यह निकला कि यूरोप के सभी देश इन मुस्लिम देशों के प्रति उदार नीति अपनाने लगे तथा इस्लामी कट्टरवाद की अनदेखी करनी शुरू हो गई।

सउदी अरब का इतना प्रभुत्व हो गया कि 1980 ई. में एक ''ब्रिटिश टेलीविज़न फिल्म ''डेथ ऑफ प्रिंसेज़'' जिसमें दो सउदी अरब के प्रेमियों –– (शाही घराने की महिला तथा आम सउदी पुरुष) की 1977 में दी गई फाँसी की कहानी थी, उसको सउदी सरकार द्वारा ब्रिटिश शासन पर दबाव डालने के कारण ब्रिटेन के विदेश विभाग को इस फिल्म दिखाने के लिए क्षमा याचना करनी पड़ी तथा स्वयं ब्रिटेन के विदेश मंत्री लॉर्ड कैरिन्टन ने सउदी अरब के राजघराने को मानहानि तथा दुःख पहुँचाने से कसूरवार होने की क्षमा मांगी। (In the path of God -Islam & Political Power- by Daniel Pipes- page 292)

सन् 1970 से इस्लामिक स्पीरिट बढ़ने से नईं मुस्लिम नीतियों का दौर प्रारंभ हुआ। मुस्लिम जगत सोचने लगा कि उन्हें अल्लाह से रहमत मिली है तथा दो शताब्दियों के बाद अल्लाह ने फिर से सही इस्लाम स्थापित करने तथा उसी रास्ते का अनुसरण करने का शुभ अवसर दिया है।

कच्चे तेल की शक्ति से सउदी अरब तथा लीबिया मिलकर एक नईं शक्ति के केन्द्र बिन्दु बन गए। यह शक्ति थी इस्लाम – उनके पास आवश्यकतानुसार इस्लाम की उन्नति व विस्तार के सभी साधन उपलब्ध थे – फौजी शक्ति, आर्थिक दबाव तथा सामाजिक योग्यता। ये दोनों देश जो कट्टर इस्लामी थे, इस्लाम के मनसूबे पर निरंतर चल रहे थे। लक्ष्य स्पष्ट था – विश्व का इस्लामीकरण। परिणाम निकला कि सउदी अरब एवं लीबिया का प्रभुत्व अनेक देशों पर पड़ने लगा, कुछ पर अधिक तथा कुछ पर कम। यद्यपि इन दोनों की जनसंख्या कम थी, फिर भी

इन दोनों देशों की अन्य देशों को प्रभावित करने की परंपरा थी। उल्लेखनीय है कि विश्व के अनेक देश उस काल में इन दोनों (सउदी अरब तथा लीबिया) देशों की आंतरिक परिस्थिति से परिचित न थे क्योंकि इन दोनों देशों की सरकारें कट्टर इस्लामी विचारधारा की थीं। सउदी अरब एवं लीबिया कट्टर इस्लामी विचारधारा वाले देशों का समस्त मुस्लिम समाज पर प्रभाव था।

सउदी अरब के असीमित धन तथा प्रचार–प्रसार के माध्यम ने 1970 के दशक से विभिन्न अरबी देशों को पुरातन इस्लामी मान्यताओं, मूल्यों तथा आपसी बरताव का मापदण्ड बना दिया। सउदी लोग आपसी बोलचाल एवं बर्ताव में सदैव सतर्क एवं सावधान रहते ताकि वे तो एक शांत वातावरण में अपनी संपत्ति का आनंद ले सकें। वैसे भी असीमित तेल भण्डार होने के कारण, अपनी स्थिरता बनाए रखने तथा देश में अमन रखने के उद्देश्य से यह सोची समझी रणनीति थी; साथ–साथ सउदी अरब ने अमेरिका का हाथ पकड़े रखा।

सउदी अरब की नीति के विपरीत लीबिया के शासक कर्नल गद्दाफी का सिद्धांत था ''समस्त मुस्लिम समाज का दायित्व है कि गैर मुस्लिमों (काफिरों) से किसी भी प्रकार के संघर्ष में साझेदारी करें – बिना सोचे समझे या बिना किसी कूटनीतिक दावपेंच की चिंता करें''। स्पष्ट है कि परिस्थितियों को देखते हुए सउदी अरब तथा गद्दाफी का मिला–जुला कार्यकलाप अपनाया गया।

सउदी अरब विचारशील देश; मज़हबी राजनीति से प्रेरित तथा दूरगामी परिणाम–देखने में चिकना–चुपड़ा, नरम था तथा कर्नल गद्दाफी का था गरम तथा ध्येय तुरंत परिणाम पाना।

इन दोनों देशों का ध्येय समान था–इस्लाम में पूर्ण आस्था होने के कारण विश्व भर में अपने मज़हब का प्रभुत्व बढ़ाना। सउदी सफलता जिसमें मज़हबी जुनून तथा मध्यकालीन इस्लामी प्रणाली से सभी मुसलमान हटकर नवीनतम विचारधारा से साथ–साथ उलेमा भी, आश्रित तथा प्रभावित होने लगे। विभिन्न देशों में शरीया कानून के प्रति जागरूकता आई तथा इसे लागू करने की मांग बढ़ने लगी। इस प्रकार अपने देश की स्थिरता तथा शांति बनाए रखते हुए सउदी अरब तथा लिबिया ने इस्लामी नीतियों के प्रचार–प्रसार पर बल देना प्रारंभ कर दिया। विभिन्न देशों में शरीया कानून लागू करने तथा हज यात्रा पर जाने को बढ़ावा दिया जाने लगा। सउदी अरब ने अनेक इस्लामी सम्मेलनों को स्थापित करने की अगवाई की तथा उनकी अध्यक्षता करनी प्रारंभ की। कर्नल गद्दाफी ने विभिन्न देशों में इस्लामी गतिविधियों को धन देकर जिसमें आतंकवादियों को प्रशिक्षण देना, शत्रुओं का अपहरण कराना, आतंकवादी गतिविधियों को बढ़ावा देना शामिल थे, किया। यद्यपि इन दोनों देशों द्वारा अपनाई गई विधियां भिन्न थीं, परन्तु लक्ष्य एक ही था दोनों देशों द्वारा अपनी पूरी ताकत के साथ कट्टरवादी गतिविधियों को बढ़ावा देना।

सउदी अरब का कार्यकलाप था पर्दे के पीछे रहकर बढ़ावा देना तथा अदृश्य बने रहना तथा इसके विपरीत कर्नल गद्दाफी द्वारा खुल्लमखुल्ला कार्रवाई करना। सउदी अरब का विभिन्न देशों में ऐसी गतिविधियों में सहयोग था, डॉलर प्रदान करना – लीबिया का कार्य था हथियारों द्वारा गतिविधियां चलाना।

अरब देश इस्लाम की उन्नति के लिए नए–नए मित्र बनाने लगे। लिबिया अपने शत्रुओं को क्षति पहुँचाने लगा। सउदी अरब आर्थिक सुविधा देता था तथा लीबिया शत्रुओं के खिलाफ सहायता देता। ऐसा लगता था कि सउदी अरब की भागीदारी थी एनविल (बेस) आधार बनाना, लिबिया की थी लोहार की तरह हथौड़े से चोट। इस मिलेजुले कार्यकलाप के फलस्वरूप अनेक मुस्लिम देश इस्लामिक कट्टरवाद की ओर तेज़ी से झुके।

मिसाल के तौर पर सउदी अरब ने जॉर्डन, पाकिस्तान व बंगलादेश को इस्लामी कट्टरवाद अपनाने की शर्तों के साथ–साथ धन देना प्रारंभ कर दिया। कर्नल गद्दाफी ने इन्हीं देशों में अनेक आतंकवादी संगठनों को बढ़ावा देकर दूसरे देशों की स्थिरता को कमजोर करने के लिए षड्यंत्र रचाए। इस्लामी गतिविधियों को बढ़ाने में इन दोनों देशो के पास रुकावट थी – जनशक्ति की। उनके अपने देशवासियों की संख्या कम होने के साथ–साथ जनमानस कम पढ़े लिखे तथा नवीनतम योग्यता के अभाव से इनके पास विकल्प बचा – भरपूर पैसा दें तथा उन्हीं देशों के मानस द्वारा गतिविधियां चलाएं।

यूं तो सउदी अरब द्वारा विभिन्न देशों को दी गई आर्थिक सहायता की विस्तृत जानकारी उपलब्ध नहीं है फिर भी 1975 से 1977 के 3 वर्षों में दी गई सउदी अरब द्वारा आर्थिक योगदान निम्नलिखित था :–

प्राप्तकर्ता	**राशि (करोड़ डॉलर)**	**प्रतिशत**
अरब लीग देश	2,92.4	53
अन्य मुस्लिम देश	130.8	24
गैर मुस्लिम देश	127.6	23
योग	550.8	100

ऐसा माना जाता है कि लाभ बढ़ने से यह राशि निरंतर बढ़ाई गई।

कुछ देशों को दी गई धनराशि का विवरण

बंगलादेश – बंगलादेश बनने तथा मुजीबुर्ररहमान की लोकतांत्रिक सत्ता बनाने की घोषणा से सउदी अरब ने आर्थिक सहायता देना उचित न समझा। 1975 ई. में मुजीबुर्ररहमान की हत्या के पश्चात् जियाउर्ररहमान बंगलादेश का सर्वेसर्वा बना तथा उसका झुकाव इस्लामी विचारधारा की ओर था। देश की तरक्की के लिए

उसे अरबी देशों की ओर जाना पड़ा। सउदी अरब ने जिसने पहले शासक को सहायता न दी थी, तुरंत अपने कूटनीतिक रिश्ते बंगलादेश से स्थापित किए और शीघ्र ही बड़ी मात्रा में धनराशि उपलब्ध कराई। कुछ ही वर्षों में बंगलादेश सउदी अरब से सहायता पाने वाला चौथे नंबर का देश बना। यह आर्थिक सहायता तभी मिली जब बंगलादेश सरकार ने अपने देश में इस्लामी कानून लगाने की स्वीकृति दी। स्पष्ट है कि सहायता मिली जब शरीया कानून लगाने का न केवल आश्वासन दिया, बल्कि उस पर अमल भी किया। आज बंगलादेश आतंकवादी गतिविधियां चलाए जाने वाला विश्व का प्रमुख देश है। बंगलादेश में लाखों मदरसे स्थापित किए जा चुके हैं, जो कट्टरवाद फैला रहे हैं।

मोरक्को – सउदी अरब द्वारा मोरक्को को दी गई आर्थिक सहायता से किंग शाह हसन ने पश्चिमी सहारा से युद्ध किया जिसके बदले में मोरक्को ने अरब देशों के साथ मिलकर मिस्र – इज़राइल शांति संधि का विरोध किया। सउदी अरब द्वारा दी गई धनराशि केवल शर्तों के आधार पर थी।

पाकिस्तान – सउदी अरब की पाकिस्तान में अनेक कारणों से रुचि थी। पाकिस्तान न केवल फारस की खाड़ी से मिला देश था, साथ–साथ यह मज़दूर और फौजी युवक सउदी अरब को देता था। सन् 1970 के दशक में सउदी अरब ने पाकिस्तान के शासक जुलफिकार अली भुट्टो को कुछ आर्थिक सहायता दी, साथ–साथ पाकिस्तान के दूसरे कट्टरवादी संगठन जैसे अबुल अला मौदुदी की 'जमायत–ए–इस्लामी' को भी आर्थिक सहायता मिली। जमायत–ए–इस्लामी ने जो कट्टरवादी मुस्लिम संगठन है सउदी शासकों पर दबाव डाला कि वे पाकिस्तान को सहायता तभी दें जब वह सउदी अरब के प्रति अधिक दोस्ती का रुख अपनाए तथा कट्टरवादी इस्लाम पाकिस्तान में कायम करे। भुट्टो सउदी अरब की धनराशि पर इतना आश्रित था कि उसने पाकिस्तान के संविधान को 'जमायत–ए–इस्लामी' की नीतियों के अनुसार ढाला। फिर भी भुट्टो की इस नीति ने जमायते इस्लामी या सउदी अरब को तनिक भी प्रभावित न किया। जुलफिकार अली भुट्टो को फाँसी पर लटकाए जाने के पश्चात् जियाउल हक पाकिस्तान के राष्ट्रपति बने। राष्ट्रपति बनने के तुरंत बाद उन्होंने सउदी अरब जाकर मदद की माँग की। उन्हें सहर्ष आर्थिक सहायता मिली; परिणामस्वरूप वापिस पाकिस्तान लौटने पर उन्होंने अपने देश में कट्टर इस्लामी राज्य स्थापित किया। फलस्वरूप सउदी अरब पाकिस्तान के लिए विश्वसनीय आर्थिक सहायता देने वाला देश बन गया। **<u>स्पष्ट है कि इस्लाम को बढावा देने का आश्वासन देना ही अरब देशों से आर्थिक सहायता मिलने का एक मात्र ज़रिया था।</u>** सउदी अरब के शासकों तथा संयुक्त अरब अमीरात ने 12.5 करोड़ अमेरिकी डॉलर पाकिस्तान को ज़कात के रूप में दिए जिससे विधवाओं और ज़रूरत मंद मुस्लिमों की सहायता की जा सके।

बादशाह खालिद के निजी सलाहकार ने पाकिस्तान के कट्टर इस्लामीकरण की सूचना मिलने पर आश्वासन दिया कि ''सउदी अरब के डॉलर भण्डार पाकिस्तान में कट्टर इस्लामी सरकार बन जाने पर तुरंत खोल दिए जाएंगे।'' पाकिस्तान में इस्लामी शासन होने से पाकिस्तान के मज़दूरों को अरब देशों में जाने की विशेष रुचि बढ़ी। स्पष्ट है कि पाकिस्तान को सहायता केवल अपने देश में कट्टरवादी इस्लामिक कानून लाने पर दी गई। पाकिस्तान में कट्टरवाद सउदी अरब द्वारा दी गई सहायता से प्रारंभ हुआ। आज पाकिस्तान विश्व का सबसे प्रमुख जिहादी मुल्क बन चुका है। इस बीच पाकिस्तान में मदरसों की संख्या में विशेष वृद्धि हुई। फलस्वरूप पाकिस्तानी तालीबान विश्व के किसी भी देश में जिहाद के लिए सदैव तैयार है।

मलयेशिया – मलयेशिया के कट्टरवादी मुस्लिम संगठनों को लिबिया द्वारा वेतन प्रदान किया जाने लगा साथ–साथ उन्हें लिबिया में इस्लामी कानून की शिक्षा भी दी जाने लगी तथा लिबिया निवासी मलयेशिया जाने लगे ताकि वहाँ की लड़कियों को इस्लामी विचारधारा में प्रेरित किया जा सके और उनकी पश्चिम देशों की पोशाकों के बजाए बुर्का तथा काफतान पहनना सिखाएं। सउदी अरब के राजकुमार मोहम्मद अल फैज़ल ने दिसम्बर 1980 में मलयेशिया के अपने दौरे के दौरान दस करोड़ यू.एस.डॉलर जिस पर कोई ब्याज न था प्रदान किए। इस अनुदान राशि के मिलने से मलयेशिया के वित्त मंत्री ने ऐलान किया कि वे अपने देश में इस्लामिक अर्थ व्यवस्था लागू करने की संभावनाओं पर विचार करेंगे। दो वर्ष के पश्चात् सउदी अरब ने बैंक इस्लाम मलयेशिया स्थापित करने में धनराशि दी। इस्लामीकरण की प्रक्रिया शुरू कर दी गई। 25 वर्षों के बाद आज मलयेशिया में मंदिर तोड़े जाने लगे हैं, तथा हिन्दुओं के साथ भेदभाव बढ़ गया है।

भारत में मदरसों का दौर

1947 ई. में देश की स्वतंत्रता के बाद प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू ने अरब देशों के साथ मित्रता का हाथ बढ़ाया। नेहरू जी की सोच थी कि ऐसा करने से वे पाकिस्तान के प्रति अरब देशों के झुकाव को कम कर सकेंगे। (स्पष्ट है उन्हें इस्लाम की जानकारी न थी–लेखक) 1970 ई. के दशक में तेल उत्पादन में बढ़ोतरी होने के साथ–साथ संभावित किसी समय भी उन देशों द्वारा तेल के निर्यात पर प्रतिबंध लगाने के भय से नेहरू जी ने अरब देशों का हाथ पकड़े रखा। शीघ्र ही देश में अनेक हिन्दू–मुस्लिम समस्याएं सामने आने लगीं, विशेषतया जब अनेक स्थानों पर हिन्दू–मुस्लिम झगड़े तथा कश्मीर समस्या पर अरब देशों की भूमिका पर संदेह होने लगा। साथ–साथ देश के छोटे वर्ग के हिन्दुओं को लोभ देकर मीनाक्षीपुरम् में धर्म परिवर्तन किया गया। अनेक देशवासियों को स्पष्ट दिखने लगा, साथ–साथ शंका हुई कि बहुत बड़ी मात्रा में विदेशों से दी गई अनुदान राशि जो मस्जिद बनवाने तथा

मदरसे स्थापित करने के लिए थी, उसी का दुरुपयोग अलीगढ़, जमशेदपुर, इलाहाबाद, मुरादाबाद तथा अन्य स्थानों पर हिन्दुओं के खिलाफ दंगों में किया गया। (1 सितम्बर 1980 'इंडिया टुडे' : तथा 'कारवां अप्रैल 1981) अनेक राजनीतिज्ञों तथा केन्द्रीय मंत्री जिसमें ज़ैल सिंह (जो बाद में भारत के राष्ट्रपति बने), का मानना था कि झगड़ों में विदेशी धन का हाथ था। इस चर्चा ने इतना गंभीर रूप धारण किया कि साउदी अरब के नई दिल्ली स्थित दूतावास ने इसकी सफाई देते हुए अपने देश पर लग रहे संभावित आरोप को नकारा। विभिन्न अरब देशों पर इतना दबाव पड़ा कि मोरक्को के राजदूत ने उल्टा ही भारत के ऊपर टिप्पणी करते हुए कहा कि यह वास्तव में ''भारत के मुसलमानों को समाप्त करने का षड्यंत्र था''।

काश्मीर घाटी में पहली बार भारत विरोधी दंगों के समय, में उपद्रवियों ने निरंतर दो दिन तक पुलिस से मुठभेड़ की जिसकी जिम्मेदारी अरब देशों द्वारा प्रायोजित 'जमायत–ए–इस्लामी' ने अपने ऊपर ली। काश्मीर के तत्कालीन मुख्यमंत्री ने बताया कि (जमायत–ए–इस्लामी) और उसका युवा मोर्चा (जमायत–ए–तुलबा) घाटी के लिए बहुत बड़ी समस्या है। एक दूसरे सूत्र ने बताया कि जमायत–ए–इस्लामी को सात मुस्लिम देशों ने लगभग 50 करोड़ डॉलर विदेशों से भेजे। (In the path of God -Islam & Political Power- by Daniel Pipes- page 316-317)

दक्षिण भारत के मीनाक्षीपुरम् गांव में पिछड़े वर्गों के हिन्दुओं के धर्मान्तरण से भारत में विदेशी मुद्रा आने से घोर चिंता होने लगी। एक अधिकारी ने टिप्पणी की, ''स्पष्ट है कि मुद्रा शक्ति ही इस धर्मान्तरण के पीछे थी'' , और साथ–साथ प्रधानमंत्री इन्दिरा गांधी ने अपना दृष्टिकोण इस प्रकार रखा, ''अरब से बहुत मात्रा में रुपया भारत लाया जा रहा है जिसके द्वारा वे (अरब लोग) भारत के गरीब निवासियों का धर्मान्तरण करते हैं।'' कुछ नेताओं ने ज़ोर देकर कहा कि हमें ऐसे कानून बनाने चाहिए जिससे विदेशी मुद्रा का दुरुपयोग भारतवासियों के सामाजिक ढाँचे को कमज़ोर न कर सके।

स्पष्ट है कि सउदी अरब तथा दूसरे अरब देशों का भारत में भेजा गया रुपया हर प्रकार से देश को क्षति पहुँचाने में इस्तेमाल किया जाने लगा। साथ–साथ भारत, बंगलादेश तथा पाकिस्तान में यकायक बहुत अधिक संख्या में मदरसे तथा मख्तब बनाने आरंभ किए गए। यह मदरसे बनाने का सिलसिला निरंतर चल रहा है और स्थिति यह है कि बंगलादेश में 1 लाख से अधिक मदरसे स्थापित हो चुके हैं। **भारत की सरकार ने मदरसों की संख्या में निरंतर हुई बढ़ोतरी की ओर कभी ध्यान नहीं दिया। सरकार ने यह कभी जानना नहीं चाहा कि इन मदरसों में जो मज़हबी शिक्षा दी जाती है, आखिर उसका ध्येय क्या है?** इस ओर ध्यान जाना आवश्यक था क्योंकि देश में मुसलमान एक हजार साल से

रहते चले आ रहे हैं और किसी भी काल में इतने मदरसे क्यों नहीं स्थापित किए गए। डेढ़ सौ साल के अंग्रेजी शासन काल में इन मदरसों की संख्या क्यों नहीं बढ़ाई गई। आखिर स्वतंत्रता के बाद ऐसा क्या कारण बना जिससे मदरसों की संख्या में अपूर्व वृद्धि हुई। दूसरी ध्यान देने योग्य बात यह है कि खाड़ी के देश केवल मदरसे स्थापित करने में क्यों रुचि रखते हैं (आखिर आज देश में 5 लाख से अधिक मदरसों का क्या औचित्य है ?) जबकि इनसे निकले तालिबान किसी नौकरी के योग्य नहीं होते। क्यों नहीं यह पैसा आधुनिक स्कूलों को स्थापित करने में लगाया जाता, यदि खाड़ी के देशों को भारत के मुस्लिम बच्चों को शिक्षा देने में इतनी अधिक दिलचस्पी है। देश में प्राइमरी शिक्षा प्रत्येक बालक को निःशुल्क दी जाती है। साथ–साथ उन्हें किताबें, स्कूल के कपड़े व दिन का भोजन दिया जाता है। क्या कारण है कि मुस्लिम बच्चों को इस निःशुल्क शिक्षा का लाभ नहीं उठाने दिया जाता ? ये ऐसे प्रश्न हैं जिनके उत्तर जानना आवश्यक है।

इस्राइल : सउदी अरब ने 1967 ई. के खाड़ी युद्ध के बाद अहम भूमिका निभाई और अरबों डॉलर, जो अरब देश इस्राइल की सीमा के साथ स्थित हैं उन्हें अनुदान राशि के रूप में दिए। सउदी अरब ने पीएलओ को करोड़ों डॉलर अनुदान राशि में निरंतर दिए, जिससे वह इस्राइल से मुकाबला कर सकें।

फिलीपीन्स : दक्षिण फिलीपीन्स में मोरों द्वारा किए गए उपद्रव को 1972 के तुरंत बाद दबा दिया गया होता यदि उस संगठन को अरब देशों द्वारा आर्थिक सहायता न मिलती। इसके विपरीत मनीला सरकार पर निरंतर दबाव डाला गया और मोरों उपद्रव को जीवित रखा। कर्नल गद्दाफी ऐसे पहले मुस्लिम नेता थे जिन्होंने इस मोरों द्वारा किए गए उपद्रव में 1971 से निरंतर सहायता दी तथा धन, हथियार व लड़ाकू भेजे। सउदी अरब ने बंगला मोरों मुक्ति मोर्चा को आर्थिक सहायता प्रदान की। फिलीपीन्स की सरकार ने सउदी अरब की इच्छाओं पर विवश होकर ध्यान दिया क्योंकि वह सउदी अरब पर आश्रित थी। सन् 1982 में 40 प्रतिशत कच्चा तेल फिलीपीन्स में सउदी अरब से ही मंगाया जाता था तथा उसके 1,50,000 मज़दूर सउदी अरब में काम करते थे। मार्च 1982 में फिलिपींस के राष्ट्रपति मारकॉस ने सउदी अरब का विवश होकर दौरा किया तथा तीन दिन सउदी अरब से संबंध पुनः मज़बूत करने में बिताए। साथ–साथ मोरों सवाल पर भी कई मुद्दों पर छूट देना स्वीकार किया। फलस्वरूप मनीला को पचास करोड़ डॉलर का कर्ज सउदी अरब ने दिया। सउदी अरब ने यह भी प्रस्ताव रखा कि वह अपने देश के दक्षिण में मोरों समस्या सुलझाए, जो सउदी अरब को स्वीकार हो, तो सउदी अरब उसे 40 करोड़ डॉलर अनुदान राशि देगा। इस प्रकार स्पष्ट है कि सउदी अरब की विभिन्न देशों को दी गई धनराशि के साथ उन देशों में, इस्लाम को पुनर्जीवित करने की शर्तें जुड़ी रहती थीं।

<u>थाइलैंड</u> : थाइलैंड में मुस्लिम जेहादी उपद्रवियों को लीबिया से मदद सन् 1974 ई. से मिलनी शुरू हुई जो 1978 तक निरंतर बढ़ी, तथा 1.8 करोड़ डॉलर प्रतिवर्ष देने प्रारंभ किए गए। साथ–साथ उन उपद्रवियों के लिए सैनिक शिक्षा तथा हथियार देना प्रारंभ किया गया। दक्षिणी थाइलैण्ड में अब यह एक जटिल मुस्लिम समस्या बन चुकी है।

<u>युगाण्डा</u> : युगाण्डा के राष्ट्रपति ईदी अमीन पर अरब देशों ने दबाव डाला और उसे अपनी इस्राइली समर्थक नीति को बदलने पर विवश किया। सउदी अरब ने युगाण्डा को भारी संख्या में डॉलर अनुदान राशि के रूप में दिए तथा कर्नल गद्दाफी ने डॉलर दिए तथा फौजी लोग भेजे। ईदी अमीन के युगाण्डा में आखरी काल के दौरान लीबिया के 2000 सैनिक वहाँ पर मौजूद थे जिनका कार्य था : ''युगाण्डा में इस्लाम की रक्षा''। जब तंजानिया की फौजों ने ईदी अमीन को घेरना चाहा, तब लीबिया ने अपने हवाई जहाज भेज कर ईदी अमीन को देश से बाहर निकाला। अरब देशों से सहयोग प्राप्त करने के लिए ईदी अमीन ने युगाण्डा में मुस्लिम शासन की स्थापना की, यद्यपि युगाण्डा में मुसलमान आबादी केवल 10 प्रतिशत थी। ईदी अमीन ने अरब देशों द्वारा धनराशि का इस्तेमाल देशवासियों के धर्मान्तरण में लगाया। स्पष्ट है कि इस देश को भी आर्थिक सहायता केवल इस्लाम को दृढ़ करने के आश्वासन पर दी गई।

यह बताना आवश्यक है कि जिन–जिन मुस्लिम देशों को सउदी अरब द्वारा आर्थिक सहायता मिली, उन देशों को इस्लाम को पुनर्गठित किए जाने की शर्त जुड़ी थी। उदाहरण के तौर पर सउदी अरब ने 25 करोड़ डॉलर युगोस्लाविया के सरजेवो नगर में एक इस्लामिक केन्द्र स्थापित करने के लिए दिए यद्यपि एक कम्युनिस्ट देश युगोस्लाविया को दी गई धनराशि का यह एक बेमिसाल उदाहरण है।

कच्चे तेल के यकायक थोक उत्पादन ने मध्य एशियाई देशों विशेषतया सउदी अरब की तिजोरियां डॉलरों से भर दीं। इस विपुल धनराशि की प्राप्ति ने इन देशों द्वारा अन्य सब मुस्लिम देशों को दी कि वे अपने देश में कट्टर इस्लामीकरण करेंगे। फलस्वरूप इन देशों ने मदरसों की संख्या बढ़ाई और मदरसे दिन दूने रात चौगुने बढ़े। सन् 1970–1980 के दशक के अंत में एक तीसरी मुख्य घटना घटी तथा जिसने इस्लाम जगत को और तेजी से पर्दे पर उतारा – यह थी ईरान में इमाम अयातुल्ला खुमैनी का आगमन।

अयातुल्ला खुमैनी की ईरान में सफलता ने विभिन्न देशों के उलेमाओं को प्रोत्साहित किया तथा उनका आत्मविश्वास बढ़ा जिससे वे सोचने लगे, ''अयातुल्ला खुमैनी यदि क्रांति ला सकते हैं तो वे क्यों नहीं।'' (पृ. 324–वही) इस बदलाव ने मुस्लिम देशों की राजनैतिक मनोकामना को उभारा। ईरान के तेल उत्पादन ने खुमैनी को यूरोपीय देशों में प्रसिद्धी दिलाई जिससे समस्त इस्लामी जगत उत्साहित

हुआ और उनका मनोबल बढ़ा। खुमैनी की सफलता के कारण ईरान के बाहर इस्लामी जगत के पुनरुत्थान ने मुख्यतः निम्न प्रकार प्रभाव डाला–

1. विश्व भर के उलेमाओं में एक नई जागृति और जोश पैदा हुआ
2. सीधे–सीधे मुसलमानों द्वारा हस्तक्षेप करने की इच्छाशक्ति बढ़ीं

इन दोनों में से पहले का अधिक महत्व था। खुमैनी का ईरान की राजगद्दी पर बैठना मुस्लिम जगत् ने ''शताब्दियों'' में एक बार होने वाली घटना मानी, जिससे विश्व के समस्त मुस्लिम देशों में एक नई जान पड़ी तथा वे विचारने लगे कि इस्लामिक कार्यकलाप सफल हो सकता है। इसी बीच मदरसों की संख्या में भी भारी वृद्धि हुई। मदरसे इस्लाम की आत्मा हैं तथा इन्हीं के द्वारा इस्लाम का विस्तार सदैव संभव हो सका। भारत में मदरसों की संख्या में बेहिसाब वृद्धि इसी ओर संकेत करती है। अनेक मुस्लिम नेताओं, उलेमाओं तथा मुस्लिम विद्वानों ने स्पष्ट किया है कि भारत, जो इस्लाम की सुखद छाया में रह चुका है, उसे कैसे त्यागा जा सकता है। भारत के भावी इस्लामीकरण में ये मदरसे अहम भूमिका निभाने वाले हैं। **प्रश्न उठता है कि क्या देश के दूसरे लोग इस खतरे से चिंतित हैं?**

बंगलादेश में इस्लामी छात्र संघ (इस्लामी छात्र सिबीर) ने विचारा कि केवल ईरान एक सच्चा इस्लामी देश बना है। काहिरा (मिस्र) में मुस्लिम ब्रदरहुड संगठन ने एक रैली आयोजित की जो खुमैनी के ईरान में इस्लामिक नेता के रूप में शक्तिशाली होने तथा पाकिस्तान में लगभग उसी समय शरिया कानून लागू होने के समर्थन में थी। इसी बीच मिस्र के राष्ट्रपति अनवर सादात का वध किया गया। इस वध के पश्चात् राष्ट्रपति हुसनी मुबारक ने एक टिप्पणी में खुलासा किया कि राष्ट्रपति अनवर सदात के हत्यारे मिस्र देश में ईरान जैसी क्रांति को अंजाम देना चाहते थे। (पृ0 325–वही)। स्पष्ट है कि पिछले 25 वर्षों में विभिन्न मुस्लिम देशों के मनोबल में अतुलनीय वृद्धि हुई जिसे अपने देश में भी आसानी से अनुभव किया जा सकता है।

◆◆◆

अध्याय-६

तबलीगी ज़मात – जिहादी कार्य प्रणाली

समस्त मुस्लिम शासन काल में – मुहम्मद बिन कासिम (712 ई) से लेकर टीपू सुल्तान के मैसूर काल, सिकन्दर बुत शिकन कश्मीर में, महमूद बेगड़ा गुजरात से जलालुद्दीन बंगाल तक, हिन्दुओं को जबरन तलवार द्वारा मुसलमान बनाया गया। भारत में यह जिहादी प्रक्रिया न केवल महमूद गजनवी, तैमूर या औरंगज़ेब द्वारा बल्कि समस्त मध्यकालीन युग में हिन्दुओं का लगातार मुसलमान बनाना चलता रहा। भारत के इस्लामिकरण में मुस्लिम बादशाहों, शाही परिवारों, राजदरबारियों, सिपाहियों, मौलवियों, व्यापारियों, जिहादी फौजियों ने किसी न किसी प्रकार भाग लिया।

यद्यपि अनेकानेक हिन्दू जबरन तलवार के ज़ोर पर मुसलमान बनाए गए, परन्तु **ये नए हिन्दुस्तानी मुसलमान अपना हिन्दूपन एक साथ कैसे छोड देते? निःसंदेह ये नए हिन्दुस्तानी मुसलमान अलग बस्तियों में बसाए गए जिससे उन्हें हिन्दुओं के पुनः दबाव से बचाया जा सके, फिर भी इन नए हिन्दुस्तानी मुसलमानों द्वारा पुराने हिन्दू रीति–रिवाज अपनाए जाते रहे।**

उत्तर–पश्चिम भारत में इस्लामी खोजा मूल रूप से आगा खां के अनुयायी थे। वे आगा खां को ज़कात तो देते, परन्तु अली को विष्णु का दसवां अवतार मानते थे। गुजरात में यद्यपि इस्लाम मध्यकाल के प्रारंभिक भाग में पहुँचा, वहाँ भी अनेक हिन्दुस्तानी मुसलमान जैसे सिद्धि, मोलीस्लाम (मोला–इ–इस्लाम) कस्बाती राठौड़, धन्ची, हुसैनी ब्राह्मण, शेख तथा कमालिया थे जिनके रीति–रिवाज़ इस्लाम से मेल न खाते थे। मौलीस्लाम, राठौड़ जो कस्बाती राठौड़ राजपूतों से बने थे तथा ये सब अपने हिन्दू देवी–देवताओं को पूजते रहे और हिन्दू त्यौहारों को भी मनाते रहे। राठौड़ अपने को सुन्नी मुसलमान तो मानते थे, परन्तु नमाज़ अदा न करते तथा कुरआन भी न पढ़ते। घन्ची लोग जो गोधरा (गुजरात) के आस–पास के निवासी हैं, बाकी सब मुसलमानों से घृणा करते और उनका झुकाव सदा हिन्दुओं की ओर बना रहता। अहमदाबाद के निकट रहने वाले शेख ज़ादे लोग शादियों में, दोनों हिन्दुओं व

मुसलमानों के रीति–रिवाज़–एक पंडित तथा एक फकीर की सेवाएं लेकर पूरा करते थे। इसी प्रकार गुजरात के सुन्नी राठौड़ हिन्दू व मुसलमान आपस में रोटी–बेटी का व्यवहार करते थे। राजस्थान के पश्चिमी तथा सीमावर्ती भागों में हुसैनी ब्राह्मण अपने आपको अथर्ववेदी ब्राह्मण मानते थे व साथ–साथ इमाम हुसैन के अनुयायियों जैसे नाम रखते थे। ये लोग गाय का मांस भी नहीं खाते थे। वस्त्र तो मुसलमानों जैसे पहनते, साथ–साथ माथे पर तिलक लगाते। वे अपने लड़कों की सुन्नत भी न करवाते, परन्तु रोज़े रखते थे तथा मुस्लिम रीति–रिवाज़ भी अपनाते थे। ये हुसैनी ब्राह्मण अजमेर के ख्वाजा मुइनुद्दीन चिश्ती को विशेष रूप से मानते थे। कच्छ के मोमना लोग अपने आपको शिया मज़हब के मानते थे, परन्तु मांस नहीं खाते थे, न सुन्नत कराते, न नमाज़ पढ़ते तथा रमज़ान में रोज़े भी न रखते।

मध्यप्रदेश के निमाड़ ज़िले में एक समुदाय था जो पीरज़ादा नाम से जाना जाता था। उनका इष्ट देवता विष्णु का दसवां अवतार था। यद्यपि इस पीरज़ादा समुदाय के लोग मुसलमान थे परन्तु उनके सब रीति–रिवाज़ तथा कार्यशैली हिन्दू थी। बुलडाना (मध्य प्रदेश) के कुछ देशमुख और देशपाण्डे मुसलमान बने परन्तु चोरी–चोरी पंडितों को बुलाकर अपने हिन्दू देवी–देवताओं का पूजन करते।

उत्तर प्रदेश तथा मध्य बिहार के भागों में भी बहुत बड़ी संख्या में ऐसे आधे परिवर्तित मुसलमान थे। करनाल (हरियाणा) ज़िले के मुसलमान किसान अपने गाँव के पुराने देवता को निरंतर 1865 ईसवी तक पूजते रहे। यद्यपि वे कलमा पढ़ते तथा अपने लड़कों की सुन्नत करवाते थे। भरतपुर तथा अलवर में मियो तथा मीना वर्ग के लोग हिन्दू नाम रखकर साथ में 'खान' लगाते थे परन्तु वे भी अपने पूर्वजों के त्यौहार जैसे दीपावली, दशहरा तथा जन्माष्टमी भी मनाते। मेवात क्षेत्र मथुरा, वृन्दावन श्रीकृष्ण जन्मभूमि के निकट होने के कारण स्वाभाविक था कि उनके मनों में जन्माष्टमी का विशेष महत्व था। ये लोग अपने निकट परिवारजनों या गोत्र में शादी–ब्याह नहीं रचते थे, जो कि इस्लामी मान्यताओं के विरुद्ध था।

मध्यभारत में मुस्लिम किसान शादी–ब्याह में अनेक हिन्दू रिवाज़ रखते थे, शीतला माता को भी पूजते थे। इस प्रकार भारत के विभिन्न स्थानों पर हिन्दुस्तानी मुसलमान पूर्ण रूप से मुसलमान (कट्टर मुसलमान) नहीं बन पाए थे तथा उन सबका सातवीं शताब्दी वाला कट्टर इस्लामीकरण होना शेष था। भारत में तो ऐसा करना और भी अधिक आवश्यक था क्योंकि उलेमा जिन्हें पूरे इस्लाम की ज़िम्मेदारी है, सदैव डरते थे कि ये हिन्दुस्तानी मुसलमान फिर से घर न लौट जाएं (पुनः हिन्दू न बन जाएं)।

मदरसों में पढ़े उच्च वर्ग के मुसलमानों का एक ऐसा संगठन बनाया गया जो

निरंतर इन हिन्दुस्तानी मुसलमानो को कट्टर मुसलमान बनाने में लगा रहता है। **इस विशेष संगठन को तबलीग जमात के नाम से जाना जाता है।** इस संगठन का केन्द्र निज़ामुद्दीन (दिल्ली) में है। मदरसों से निकले अनेक स्नातक इस तबलीग कार्यक्रम में लगे हैं। **यह कार्य 19वीं शताब्दी में मुगल शासन कमज़ोर पड़ने पर ज़ोरोखरोश से शुरू किया गया। इस संदर्भ में शाह मुहम्मद रमज़ान (1769–1825) हरियाणा में एक उच्च कोटि का तबलीगी था।** उसने पाया कि हरियाणा के मेवात क्षेत्र में हिन्दुस्तानी मुसलमान केवल नाम मात्र ही मुसलमान थे। उनमें से अनेक अपना मुस्लिम नाम भी न रखते थे। उनके नाम थे – 'रामसिंह, रामदीन, जयसिंह आदि'। ये सब राजपूत या जाट थे तथा हिन्दुओं के समस्त रीति–रिवाज़ अपनाए हुए थे। उलेमाओं का डरना स्वाभाविक था कि कहीं ये फिर से हिन्दू न बन जाएं। इसी कारण तबलीग जमात ने उन्हें कट्टर मुसलमान बनाने के प्रयत्न जारी रखे। शाह मुहम्मद रमज़ान इस मेवात क्षेत्र में डेरा डाले रखता था, इन हिन्दुस्तानी मुसलमानों पर हिन्दू रीति–रिवाज़ त्याग देने पर बल देता, तथा मुस्लिम परंपरा के अनुसार चचेरे भाई–बहनों में शादी रचवाता था, जिसको ये हिन्दुस्तानी मुसलमान न अपनाते थे। वे गाय का मांस भी न खाते। इसी कारण उन्हें पूर्ण रूप से मुसलमान मानना संभव न था। मेवात के लोगों को गाय का मांस खिलाने के लिए शाह मुहम्मद रमज़ान ने नए त्यौहार मनाने प्रारंभ किए। एक था मरीयम का रोज़ा और 'रोट–वोट'। इस दिन भुना हुआ गाय का मांस रोटी पर रखकर परिवार के सभी संबंधियों में बांटा जाता। उसने बड़ी संख्या में मस्जिद बनवाने पर ज़ोर दिया ताकि वहाँ के लोग आसानी से नमाज़ अदा कर सकें। परन्तु उसका दुर्भाग्य था कि **इस तबलीगी को वोहरा समुदाय के मुसलमानों ने मन्दसौर में कत्ल कर दिया।** (लिगेसी ऑफ मुस्लिम रूल इन इंडिया, पृ. 316)। K.S. Lal

एक दूसरा तबलीगी था मुहम्मद अब्दुल शकूर जो मुसलमान हिन्दू रीति–रिवाज़ अपनाए हुए थे, उसका घोर निन्दक था। हिन्दुओं द्वारा जो–जो वस्त्र पहने जाते जैसे धोती, घाघरा और अंगिया के स्थान पर कुर्ता–पजामा और लंबी चादर का समर्थक था। हिन्दुओं के रीति–रिवाज़ जो मुसलमान अपनी शादियों में अपनाते थे, वे उनका भी कट्टर विरोधी था। मुस्लिम औरतों को बुरका पहनाना अनिवार्य समझता था। उसको बड़ा आश्चर्य होता था कि मुसलमानों का एक हज़ार वर्ष पहले धर्म परिवर्तन के बावजूद वे निरंतर हिन्दू रीति–रिवाज़ अपनाए हुए थे। उसने निरंतर प्रयास किए और वहाँ के मुसलमानों को तुरंत हिन्दू रिवाज़ों को छोड़ने पर बल दिया।

इन प्रयत्नों के बावजूद मेवात क्षेत्र में 19वीं शताब्दी के अंत तक मुसलमानों में इस्लामी कट्टरता नहीं आ सकी। इसका मुख्य कारण उलेमाओं द्वारा दी गई

तालीम की कमी माना गया।

ब्रिटिश शासनकाल मे 1878 ई. में मेजर पाउलेट द्वारा लिखित अलवर के गज़ेटियर में वर्णित सूचना के अनुसार एक क्षेत्र जो दिल्ली के दक्षिण में स्थित है, इसमें मेव लोग बसे हैं और यह क्षेत्र मेवात नाम से प्रसिद्ध है। इस क्षेत्र में कुछ गुड़गांव की तहसील, राजस्थान का कुछ भाग जिसमें अलवर तथा भरतपुर शामिल है मिलकर मेवात क्षेत्र कहलाता है। **आयन–ए–अकबरी में दिए गए वर्णन के अनुसार जटाऊ वर्ग के राजपूत जो मुसलमान बन गए थे, मेवाती नाम से जाने जाते हैं।**

''लाइफ एण्ड मिशन ऑफ मौलाना मोहम्मद इल्यास'' लेखक–एस.अबुल हसन अली नदवी (अली मियां) पृ. 30)

सन् 1878 के अलवर गजट के अनुसार '' सब मेवाती मेव लोग मुसलमान तो हैं परन्तु केवल नाम मात्र ही। उनके गाँव के देवी–देवता हिन्दुओं जैसे ही हैं, तथा ये लोग अनेक हिन्दू त्यौहार मनाते हैं। होली का त्यौहार मेवातियों में विशेष हास–उल्लास का प्रतीक है, जैसे वे मुहर्रम, ईद व शब–ए–बरात मनाते हैं। जन्माष्टमी, दशहरा व दीपावली मनाने की भी वही स्थिति है। ये लोग अपने बच्चों की शादी रचाने के लिए ब्राह्मणों की सेवा लेते हैं। इनके अधिकांश नामों में ''सिंह'' लगा होता है तथा अहीर तथा गुर्जर समुदाय की तरह मेवाती मुस्लिम अमावस्या के दिन अवकाश रखते हैं। जब वे कुँआ खोदते हैं, सर्वप्रथम चबूतरे का नाम 'बिरजी' या 'हनुमान' रखते हैं ... अधिकांश मेवाती अपने इस्लामी मज़हब से अपरिचित ही हैं उनमें से केवल कुछ ही को ''कलमा'' आता है तथा चंद लोग ही नमाज़ अदा करते हैं।''

गुड़गांव क्षेत्र की स्थिति कुछ बेहतर है क्योंकि वहाँ मदरसे बन चुके हैं। एक अन्य स्थान पर मेजर पाउलेट लिखते हैं कि 'अपनी आदतों में मेवाती लोग आधे हिन्दू ही हैं। तिजारा तहसील के 50 गाँवों में केवल 8 मदरसे ही हैं।''

इसी प्रकार 1910 ई. के गुड़गांव गज़ेटियर में लिखा है ''मेवाती (मेव वर्ग के मुसलमान लोग) मज़हब के प्रति बहुत ही कम दिलचस्पी रखने वाले तथा लापरवाह प्रकार के मुसलमान हैं। उनका मनोरंजन का नियम हिन्दुओं व मुसलमानों दोनों के त्यौहारों को मनाने का है। परन्तु कुछ समय से मेवात क्षेत्र में कुछ मुस्लिम जमात के लोग यहाँ आने लगे हैं जिससे कुछ मेवाती रोज़े रखने लगे हैं तथा मस्जिद बनाने लगे हैं। मुस्लिम महिलाओं ने भी हिन्दुओं के घाघरे की जगह पजामे पहनना शुरू कर दिया है।

इसी प्रकार भरतपुर का गज़टियर भी मेवाती वर्ग के लोगों का कुछ इसी प्रकार

का वर्णन करता है।

मेवाती वर्ग के लोगों को कट्टर मुसलमान बनाने का कार्य सफलता से केवल 20वीं शताब्दी में ही संभव हो पाया। इस मज़हबी कार्य का श्रेय पश्चिमी उत्तर प्रदेश के निवासी मौलाना मोहम्मद इल्यास (1885–1944) को जाता है, जिसने इस क्षेत्र के मुसलमानों में 7वीं शताब्दी वाली मुस्लिम कट्टरता ला दी। मौलाना मोहम्मद इल्यास ने महसूस किया कि मेवात के मेव लोगों को इस्लाम में पूर्ण रूप से लाने का सरल उपाय उनमें मज़हबी तालीम देकर तथा शरियत के नियमों से अवगत कराकर ही आवश्यक बदलाव ला सकता है। इस कारण बड़े पैमाने पर मेवात क्षेत्र में मख्तब व मदरसे स्थापित करने शुरू किए जाने लगे। इस क्षेत्र के मुसलमानों की सर्वप्रथम कठिनाई थी कि उन्हें मज़हब से तनिक भी लगाव न था जिससे मख्तब स्थापित करना भी पूर्ण इलाज साबित न हुआ। इस अभियान का ध्येय मुस्लिम समाज का सुधार अर्थात् उनके धर्म परिवर्तन के पहले से काफिर संस्कारों तथा उनके रीति–रिवाज़ों को जड़ से मिटा कर पक्का मज़हबी मुसलमान बनाना था।

मौलाना इल्यास ने इस क्षेत्र का दौरा करना प्रारंभ किया जिसके दौरान उसने मेवाती लोगों के आपसी झगड़ों का निपटारा करना भी प्रारंभ किया, साथ–साथ मख्तब व मदरसे स्थापित होते रहे। मौलाना इल्यास की लगन तथा मज़हबी निष्ठा के अच्छे परिणाम आने शुरू हुए। मेवाती लोग कहने लगे यह मौलाना इतना पतला–दुबला है परन्तु इसके पास हमारी प्रत्येक समस्या का संतोषजनक इलाज है। परिणाम निकला कि जिद्दी लोग भी उसके निर्णयों का सम्मान करने लगे। इसी बीच मौलाना हज की यात्रा पर चला गया तथा वापिस आते ही मेवात क्षेत्र का दौरा करना पुनः शुरू किया। अब उसके साथ अनेक तबलीगी टोलियां भी क्षेत्र के प्रत्येक गाँव का दौरा करने लगीं।

मौलाना इल्यास ने विचार कर निर्णय लिया कि इन गरीब मेवातियों के लिए मज़हबी तालीम लेना वास्तव में कठिन है। परन्तु उन्हें कट्टर इस्लामी बनाना भी आवश्यक था जिससे वे लोग अंधकार से निकल कर इस्लामी बनें। मौलाना इल्यास ने प्रयास किया तथा इन लोगों में से छांट–छांट कर टोलियां बनाकर देश के विभिन्न मज़हबी केन्द्रों में कुछ दिनों के लिए, कलमा तथा नमाज अदा करने तथा मज़हबी ज्ञान पाने के लिए भेजने की योजना बनाई। मौलाना ने पश्चिमी उत्तर प्रदेश के मुजफ्फरनगर तथा सहारनपुर ज़िले जो सर्वदा से इस्लाम के गढ़ रहे हैं, इस कार्य के लिए उपयोगी स्थान पाया। निरंतर प्रयास से आखिरकार दस मेवातियों की एक टोली दिल्ली से कांधला (पश्चिमी उत्तर प्रदेश) ले जायी गई। फलस्वरूप सफलता मिलने लगी।

मौलाना इल्यास ने मेवात क्षेत्र का नक्शा बनाकर एक सुनियोजित कार्यक्रम के अनुसार दिल्ली से तबलीगी टोलियां भेजना शुरू किया। इन टोलियों को अपनी

प्रतिदिन की गतिविधियों का लेखा–जोखा रखना आवश्यक कहा गया। मौलाना अपने प्रयासों से मेवातियों में इतना मज़हबी जोश इन तबलीगी टोलियों द्वारा पैदा करना चाहते थे कि वे लोग मज़हब के कार्य को अपनी रोज़ी के कार्य से अधिक महत्व देने लगें। मौलाना के निरंतर कठोर प्रयासों ने मेवाती लोगों में यह चमत्कार कर दिखाया। कुछ ही वर्षों में यह पूरा क्षेत्र अपनी अंधकारमयी दुनिया से निकलकर सच्चे मज़हब की ओर आकर्षित हो गया तथा मज़हब को निष्ठापूर्वक कठोरता से अपना लिया। यह मौलाना इल्यास की सफलता का एक अद्भुत नमूना है। अब स्थिति यह है कि मेवाती क्षेत्र में हज़ारों मख्तब तथा बड़े मदरसे तथा मस्जिदें स्थापित हो चुकी हैं।

मौलाना मोहम्मद इल्यास द्वारा प्रारंभ किया गया तबलीगी कार्यक्रम आज विश्व के सभी देशों में चलाया जा रहा है। मलयेशिया, इण्डोनेशिया तथा यूरोप के अनेक देशों में पिछले दशकों में मुस्लिम कट्टरवाद बढ़ा है। तबलीग का विशेष कार्यक्षेत्र प्रजातंत्र देश हैं जिनमें मुसलमान अल्पसंख्यक हैं। इन देशों में रहने वाले मुसलमानों को कट्टर मजहबी बनाना आवश्यक है ताकि वे लोग सहयोग देकर आगे अपना जिहादी कार्यक्रम चला सकें। प्रजातंत्र देशों के कानून के दायरे में रहते हुए अनेकानेक तबलीगी कार्यक्रम तथा शांतिप्रिय जेहादी तरीकों से इस्लाम को बढ़ाना सरल है। जनसंख्या बढ़ाना भी इसका विशेष कार्यक्रम है।

मौलाना मोहम्मद इल्यास का मस्जिदों के बारे में कहना था कि ''विभिन्न देशों में बनाई गईं मस्जिदें पैगम्बर मोहम्मद द्वारा मदीने में बनाई 'मस्दिज–ए–नव्वी' की बेटियां हैं। इसी कारण पैगम्बर ने जो–जो कार्य अपनी मस्जिद–ए–नव्वी से 622 ई से 632 ई. तक किए, वे सब मुसलमानों द्वारा मस्जिदों में किए जाने चाहिए। इसी कारण तबलीग का कार्य, यहाँ तक कि सैनिक योजनाओं की कार्रवाई को भी पैगम्बर अपनी मस्जिद में तय किया करते थे।'' मौलाना इल्यास कहता था **''मैं चाहता हूँ कि इन सभी कार्यप्रणालियों को उसी प्रकार से हमें अपनी मस्जिदों में अंजाम देना चाहिए।''**

''लाइफ एण्ड मिशन ऑफ मौलाना मोहम्मद इल्यास'' लेखक–एस.अबुल हसन अली नदवी (अली मियां) पृ. 230–231)

उपरिवर्णित पैगम्बर मोहम्मद का स्वयं किया कार्य (सुन्ना) को प्रत्येक मज़हबी मुसलमानों द्वारा अपनाना आवश्यक है। कश्मीर घाटी मे अनुभव हुआ है कि जिहादी आतंकवादी मस्जिदों में शरण लेते रहे हैं। इसमे तनिक भी आश्चर्य नहीं होना चाहिए।

तबलीगी कार्यक्रम में निम्नलिखित चारों इस्लामी स्तंभों का निष्ठापूर्वक पालन करना –

1. दिन में पाँच बार नमाज़ अदा करना
2. साल में एक महीने रोज़े रखना
3. गरीबों को ज़कात देना
4. अपने जीवनकाल में एक बार मक्का हज करने जाना

कुरआन स्वयं अपने अनुयायियों को आदेश देती है।

''निश्चित समय पर नमाज़ अदा करो, और उसका डर रखो, नमाज़ का आयोजन करो, अल्लाह का सांझी ठहराने वालों में से न होना'' (कुरआन 30:31)

फिर जब तुम नमाज़ अदा कर चुको तो खड़े, बैठे, लेटे अल्लाह को याद करते रहो। फिर जब तुम्हे इत्मीनान हो जाए तो विधिवत् रूप से नमाज़ पढ़ो। निःसंदेह ईमान वालों पर समय की पाबंदी के साथ नमाज़ पढ़ना अनिवार्य है। (कु. 4: 103)

..... अब जितना कुरआन आसानी से हो सके, पढ़ लिया करो .... और नमाज़ कायम करो और ज़कात देते रहो और अल्लाह को ऋण दो, अच्छा ऋण। तुम जो भलाई भी अपने लिए (आगे) भेजोगे उसे अल्लाह के यहाँ अतिउत्तम और प्रतिदिन की दृष्टि से बहुत बढ़ कर पाओगे और अल्लाह से क्षमायाचना करते रहो। निःसंदेह अल्लाह क्षमाशील, दयावान है। (कु. 73 : 20)

जुम्मे की नमाज व खुतबा

इसी प्रकार जुम्मे (शुक्रवार) की सामूहिक नमाज़ अदा करने का मुसलमानों को कुरआन में आदेश है।

''ऐ ईमानवालों, जब जुम्मा का दिन नमाज़ के लिए पुकारा जाए तो अल्लाह की याद की ओर दौड़ पड़ो और क्रय–विक्रय छोड़ दो। यह तुम्हारे लिए अच्छा है, यदि तुम जानो। (कुरआन 62 : 9)

यह प्रथा इस्लाम के प्रारंभिक काल से निरंतर चली आ रही है। जुम्मे की नमाज़ समाप्त होने पर समस्त आए अनुयायियों के समक्ष चुनिंदा इस्लामी विद्वान मस्जिद में विभिन्न समस्याओं पर भाषण देते हैं, जिसे ''खुतबा'' कहते हैं; खुतबा देने वाले को ''खातीब'' कहते हैं।'' खुतबा मुस्लिम जगत में जादू का काम करता है। यह विचारों के प्रचार–प्रसार का अद्भुत माध्यम है। इसके द्वारा विश्वभर में किसी कोने में घटी घटना की जानकारी उन्हें मिल जाती है। इसी माध्यम से मुसलमानों को कट्टर मज़हबी भी बनाया जाता है।

विश्व में लाखों मस्जिदें हैं जिससे खुतबा सुनने वालों का आसानी से अनुमान लगाया जा सकता है। साधारण तौर पर यह संख्या करोड़ों में है। एक अन्य विशेष बात यह है कि इसे सुनने वाले बुजुर्ग, जवान तथा कम आयु वर्ग के भी होते हैं।

किसी भी अन्य प्रकार के प्रसार–प्रचार माध्यम जैसे टी.वी., रेडियो, पत्रिकाओं आदि द्वारा इतनी बड़ी संख्या में श्रोता/पाठक नहीं होते। साथ–साथ खातीब प्रभावशाली तरीके अपनाकर अपने विचार प्रस्तुत करता है जिसका प्रभाव अधिक होता है। मदरसों में भावी खातीबों को विशेष शिक्षा दी जाती है। बड़े मदरसों में तबलीग का अलग विभाग होता है जिसमें उच्च कोटि के तालीबानों को इस कला में निपुण किया जाता है, जिससे वे तबलीगी जमात के कार्यक्रम को कुशलता से अंजाम दे सकें। यह खुतबा ही है जिसमें एक बार यदि ऐलान किया गया कि ''**इस्लाम खतरे में है**'' तो मुसलमान किसी भी प्रकार के जेहाद करने के लिए तैयार हो जाते हैं। यह जान लेना आवश्यक है कि खातीब तो अपना मज़हबी फर्ज पूरा कर इस्लाम की सेवा करता है। **ह्यूजेज द्वारा लिखित 'डिक्शनरी ऑफ इस्लाम' के अनुसार भारत में इस खुतबे का चलन हर मुसलमान को प्रति सप्ताह याद दिलाता है कि वह दारुल हरब में रह रहा है।** पृ. 277

उपरिवर्णित चारों इस्लामी स्तंभों को मुस्तैदी से अमल करने पर धीरे–धीरे वे निष्ठावान् मुसलमान बन जाते हैं, और उनमें न केवल अपने मज़हब के प्रति कट्टरता आ जाती है, साथ–साथ मूर्तिपूजकों के लिए घृणा भी पैदा होने लगती है।

मदरसों में शिक्षा पाने वाले तालिबानों में से कुछ को विशेषतया तबलीग के कार्यक्रमों में लाया जाता है। इस्लाम की मान्यता है कि तबलीग या इस्लाम के प्रचार की जिम्मेदारी, प्रत्येक मज़हबी मुसलमान की है। इस कार्य में उलेमाओं (मदरसों में पढ़े ज्ञानी) का विशेष कर्तव्य है। उनका मानना है कि इस्लाम न केवल मुसलमानों, बल्कि समस्त मानवता के लिए है। इसी कारण उलेमाओं द्वारा सारे देशवासियों (हिन्दुओं) को अपनी बिरादरी में लाना आवश्यक है तथा यह उनका परम कर्तव्य भी है। उनकी मान्यता तो यह है कि यदि सब गैर–मुसलमान इस्लाम स्वीकार नहीं करते तो वे नरक में जाएंगे और उलेमाओं को इन काफिरों को इस्लाम स्वीकार कराकर उन्हें नरक में जाने से बचाना है। साथ–साथ उनका मानना यह भी है कि इन ''गैर मुसलमानों में उलेमाओं के मार्गदर्शन की तीव्र इच्छा है।''

उलेमाओं व मौलानाओं द्वारा मेवात क्षेत्र में किए गए प्रयासों का परिणाम यह निकला कि न केवल मेवाती क्षेत्र के लोग कट्टर मुस्लमान बन चुके हैं, साथ–साथ अब वे स्वयं हिन्दुओं का जबरन धर्म परिवर्तन कराने के कार्य में लगे हैं। अलवर से प्रकाशित 07 अप्रैल 2007 के 'राजस्थान टाइम्स' में एक ऐसी घटना का, जिसमें जबरन धर्म परिवर्तन करा रहे 7 मुसलमानों को पुलिस ने गिरफ्तार किया, ब्यौरा था। पुलिस उप–अधीक्षक रघुबीर सैनी ने बताया कि रामगढ़ थाना क्षेत्र के नानचपुर गाँव में एक जाटव परिवार के रामसिंह जाटव (उम्र 40 वर्ष) पुत्र जगदू राम, पत्नी चमेली देवी, पुत्र–जयसिंह, अर्जुन व पुत्रियां–संगीता, मनीषा व पिंकी को जबरन दीन मोहम्मद के घर बैठा रखा था, तथा घर पर पहरा दिया जा रहा था। मौके पर

150 से अधिक लोग उपस्थित थे तथा मीठा चावल (जर्दा) व मीट पकाया जा रहा था। सुन्नत करने के बाद इस्लामी परम्परा के अनुसार करीब 500 लोगों को भोजन कराए जाने की तैयारी चल रही थी। पुलिस ने छापा मार कर जाटव परिवार के इन 7 लोगों को वहाँ से मुक्त कराकर उन्हें सुरक्षा प्रदान की तथा अपने घेरे में ले लिया। जबरन धर्म परिवर्तन करा रहे असलम व अकरम पुत्र नियामत मेव, नसरू पुत्र मेहताब, नक्कू उर्फ नवाब पुत्र दीना मेव, इमरान पुत्र दीन मोहम्मद, जैतुनी पत्नी इनायत तथा जैतूनी पत्नी दीन मोहम्मद को पुलिस ने भा.द.सं. की धारा 342, 365, 153, 295 में गिरफ्तार कर लिया।

यह समझना आवश्यक है कि कट्टरता आ जाने के पश्चात् कोई भी मुसलमान स्वयं इस धर्म परिवर्तन के जेहादी कार्य में भागीदार बन जाता है। ऊपर वर्णित मिसाल केवल सांकेतिक है।

बड़े मदरसों में दी जाने वाली शिक्षा में अनेक बदलाव लाना आवश्यक समझा जाने लगा है ताकि मदरसों से निकले उलेमा प्रभावशाली इस्लाम के प्रचारक बनें। यदि मुसलमानों को विश्व का नेतृत्व करना है तो उनमें विशेष ज्ञान होना आवश्यक है जिससे गैर–मुसलमान उनका नेतृत्व स्वीकारें तथा उनके मार्गदर्शन पर चलकर उनके अनुयायी बनें – यथासंभव इस्लाम स्वीकारें। नईं शिक्षा प्रणाली अपनाकर तथा विशेष ज्ञान प्राप्त करने पर वे गैर मुसलमानों को प्रभावित करने में सक्षम होंगे कि ''इस्लाम स्वीकारना तो मानव की समस्त समस्याओं का हल दे सकता है जिससे वे प्रभावित होकर उनमें से कुछ इस्लाम स्वीकार करेंगे। इस कार्यशैली को इस्लाम के प्रसिद्ध उलेमाओं ने भूतकाल में भी अपनाया था। मिसाल के तौर पर 11वीं शताब्दी में इस्लाम के प्रसिद्ध ज्ञाता इमाम अल–गज़ाली ने यह शैली अपनाई थी। माना जाता है कि गज़ाली ने ग्रीक दर्शनशास्त्र का अध्ययन किया तथा ज्ञान प्राप्त होने पर दूसरे मतावलम्बियों के विचारों का खण्डन करके इस्लाम की श्रेष्ठता साबित की थी। प्रो. मोन्टगोमरी वॉट के अनुसार अल–गज़ाली को पैगम्बर मोहम्मद के बाद एक श्रेष्ठ मुसलमान माना जाता है। (व्हाइ आई एम नॉट ए मुस्लिम – इब्नवरक, पृ. 300)

अल–गज़ाली की मिसाल के मद्देनज़र बड़े मदरसों में पढ़े, भावी उलेमाओं को गैर इस्लामी ''दर्शन'' तथा नए विषयों की शिक्षा, मुसलमानों के भले के लिए नहीं, बल्कि गैर–इस्लामी (हिन्दुओं) के लिए प्राप्त करना है जिससे वे तर्क द्वारा, जो मीठे शब्दों में प्रस्तुत कर सकें तथा उनके मज़हबी ग्रंथों में दर्शाए मार्ग का चतुराई से विधिवत् खण्डन करते हुए, ''इस्लाम की श्रेष्ठताओं पर बल दे सकें''। इसी कारण नए प्रकार की इस्लामी शिक्षाशैली अपनाई जा रही है जिसके अंतर्गत उलेमा इस्लामी मान्यताओं को चिकने–चुपड़े अन्दाज़ में नईं युवा पीढ़ी के सामने प्रस्तुत करें ताकि उनके मस्तिष्क को प्रभावित किया जा सके। यह कार्यक्रम स्वयं

अपने में जिहाद का ही अंग है। **स्मरण होगा कि जिहाद का एक मात्र ध्येय है ''विश्व का इस्लामीकरण''।** इस्लाम के अच्छे प्रचारक तैयार करने के लिए, ताकि वे दूसरे धर्मों की मान्यताओं का तर्क द्वारा खण्डन कर सकें, नए–नए विषयों को मदरसों में पढ़ाए जाने पर ज़ोर दिया जाने लगा है। ऐसे प्रचारकों की आवश्यकता न केवल हिन्दुस्तान में है बल्कि विश्व भर के प्रजातांत्रिक देशों में चाहे यूरोप हो या अमेरिका, सब में है। यह तबलीगी ज़मात का विधिवत् कार्यक्रम है तथा यह जमायत विश्व के अनेक देशों में सक्रिय हो चुकी है। इस कार्य के लिए पर्याप्त धन खाड़ी के अनेक देश ज़कात के रूप में दे रहे हैं। यह एक सोची–विचारी चुपचाप धर्मान्तरण करने की तथा मुसलमानों को कट्टर बनाने की कार्यप्रणाली है जिसको आसानी से समझना संभव नहीं। इसका प्रभाव यूरोप के देशों एवं अमेरिका में भी साफ दिखने लगा है।

जहाँ तक भारत का प्रश्न है, इसे मुसलमान अपनी बपौती मानते हैं। अनेकानेक मुस्लिम विचारकों एवं उलेमाओं ने इसको दोहराया है। हिन्दुस्तान का इस्लामीकरण इस्लाम के लिए बहुत महत्व रखता है। यहाँ के लहराते खेत, पचास प्रतिशत से अधिक उपजाऊ भूमि, दस लाख से अधिक सुसज्जित सेना, यहाँ का शिक्षित समाज, विशेष जलवायु, इस्लाम जगत् को निरंतर मोहता है। उनका यह भी मानना है कि जिस देश (भारत) पर उनके पूर्वजों ने खून बहाकर तथा जीत कर एक हज़ार वर्ष तक राज किया उसे कैसे त्यागा जा सकता है। **पाकिस्तान का बनना तो महज़ एक पड़ाव था – मंज़िल नहीं : मंज़िल है समस्त भारत का इस्लामीकरण।**

◆◆◆

अध्याय–७

मुसलमानों की बढ़ती जनसंख्या व पिछड़ापन

पिछले कुछ दशकों से सारे संसार में एक दुष्प्रचार विशेषतया विकासशील देशों में फैलाया जा रहा है कि आबादी बढ़ना उस देश के विकास में बाधक है। वास्तव में सच इसके विपरीत है। मानव शक्ति ही उन्नति में सहायक है और वास्तव में यह उन्नति के लिए आवश्यक है, केवल आवश्यकता है कि लोग शिक्षित हों और उनमें तकनीकी गुण हों। इसलिए आर्थिक उन्नति में केवल अशिक्षित होना ही बाधक है। युवा शक्ति, यदि पढ़ी–लिखी और तकनीकी गुण वाली हो, तो उन्नति निश्चित है।

हमारे देश के मध्यमवर्गीय लोग इस दुष्प्रचार के दोषी हैं कि जनसंख्या की अधिक वृद्धि दर देश की उन्नति और खुशहाली में बाधक हैं; वास्तव में सच यह है कि जनसंख्या की वृद्धि दर कम हो जाने से उन्नति कम होगी। यह एक ऐसा तथ्य है जिसके अनेक देशों में जनसंख्या के घटने के दुष्परिणाम सीधे देखे जा सकते हैं। संसार भर में गर्भ निरोधक साधन उपलब्ध होने से सन् 1972 के बाद, जबकि प्रत्येक स्त्री के औसतन 6 बच्चे होते थे यह संख्या सन् 1990 तक घट कर 2.9 रह गई परन्तु इसके विपरीत मुस्लिम देशों में इन गर्भ निरोधक साधनों को नहीं अपनाने दिया गया जिसका मदरसों के उलेमाओं से सीधा संबंध है।

संयुक्त राष्ट्र संघ की जनसंख्या रिपोर्ट 2002 के अनुसार समस्त यूरोप में जनसंख्या वृद्धि दर 2.1 से भी कम हो चुकी है। यह बताना आवश्यक है कि 2.1 वृद्धि दर होने से आबादी केवल स्थिर रह सकती है– न घटेगी न बढ़ेगी। पाठकों को बता दें कि रूस की आबादी प्रतिवर्ष 75,00,000 कम हो रही है। रूस के तत्कालीन राष्ट्रपति ब्लादीमिर पुतिन ने इसे देश के लिए बड़ा भारी संकट कहा है। इसी प्रकार जर्मनी की आबादी अगले 40 वर्षों में आज की आबादी का 5वां हिस्सा कम हो जाएगी, बल्गारिया की 38 प्रतिशत और रुमानिया की 27 प्रतिशत कम हो जाएगी। इसके बिल्कुल विपरीत मुस्लिम देश इसके अपवाद हैं। यूरोप के मुस्लिम देश तथा मध्य एशिया के समस्त मुस्लिम देशों में आबादी की दर खूब बढ़ रही है। इसका लेखा–जोखा पृष्ठ 109 पर देखें। दुर्भाग्य यह है कि देश के शिक्षित लोग देश के निर्माण में बिना मांगे अपनी राय देते हैं, शायद वे परिचित नहीं हैं कि इस

जनसंख्या के असंतुलन ने किस प्रकार लेबनान, कोसोवो तथा बोस्निया जैसे देशों के पंथनिरपेक्ष ढाँचे को बदल कर उन्हें इस्लामिक देश बना दिया। यूरोप में इस समय मेसीडोनिया और फ्रांस इसके शिकार शीघ्र ही हो सकते हैं। जान लेना चाहिए कि 1970 और 1990 के बीच फ्रांस में ईसाई जनसंख्या 4,25,58,000 से घटकर 4,06,27,000 हुई और इसके विपरीत इसी काल में फ्रांस में रहने वाले मुसलमानों की जनसंख्या तीन गुना बढ़ी, 13,53,000 से बढ़कर 38,50,000 हुई। इसका परिणाम–विश्वभर ने सन् 2005 के अंत में मुस्लिम युवकों द्वारा कारों को जलाए जाने का नज़ारा अच्छी प्रकार देखा जिसके अंतर्गत मुसलमानों ने तीस हज़ार कारों को जलाया, 200 सार्वजनिक भवनों में तोड़फोड़ की जिसमें कई स्कूलों की ईमारतें भी थी। तत्पश्चात् फ्रांस सरकार ने कड़े कदम उठाए। इसके पश्चात् 3200 लोगों को गिरफ्तार किया और 400 से अधिक को जेलों में डाल दिया।

आइए अब हिन्दुस्तान की ओर नज़र डालें, और निम्नलिखित तथ्यों के बारे में विचार करें :–

1. स्वतंत्रता के बाद से केवल मुसलमानों की जनसंख्या की वृद्धि दर में विशेष बढ़ोतरी हुई। सन् 1981 के बाद इसमें और अधिक तेजी आई।

2. सन् 2001 के जनसंख्या के आँकड़ों से विदित हुआ कि मुसलमानों की वृद्धि दर 36 प्रतिशत थी और इसके विपरीत हिन्दुओं की जनसंख्या वृद्धि दर 23 प्रतिशत से घटकर 20 प्रतिशत रह गई।

   जनवरी 2000 में पीएन मारी भट्ट तथा ए.जे. फ्रांसिस जेवियर ने जो आबादी संतुलन के विशेषज्ञ हैं, अपने एक लेख में दर्शाया : स्वतंत्रता से पहले जबकि मुसलमानों की वृद्धि दर हिन्दुओं के अनुपात में 10 प्रतिशत अधिक थी, अब 25 से 30 प्रतिशत अधिक है। (रोल ऑफ रिलिजन इन फर्टिलिटी डिक्लाइन–द केस ऑफ इंडियन मुस्लिम्स, इकॉनोमिक और पॉलिटिकल वीकली, दिनांक 29 जनवरी 2005)

3. जनगणना 2001 के आँकड़ों में तालिका–7 में धर्मानुसार 0–6 वर्षीय बच्चों के आंकड़ें दिए हैं।

इन आँकड़ों से स्पष्ट है कि मुस्लिम समाज की उत्पादकता दर हिन्दुओं से 21 प्रतिशत अधिक है। स्मरण रहे कि सन् 2001 की जनसंख्या के अनुसार हिन्दुस्तान में मुसलमान कुल आबादी का 13.4 प्रतिशत हैं परन्तु 0–6 साल तक के बच्चों की वृद्धि दर 21 प्रतिशत हिन्दुओं से अधिक है जिससे आने वाले वर्षों में जनसंख्या की वृद्धि दर और बढ़ेगी। सन् 2001 की जनगणना की तालिका–**7** का

गहन अध्ययन करना और इससे आगे बढ़ने वाली जनसंख्या पर विचार करना अति आवश्यक है क्योंकि जो बालक/बालिकाएं जन्म ले चुके हैं, वे स्वयं कुछ वर्षों बाद युवा होकर अपना परिवार बढ़ाने में लग जाएंगे जिससे वृद्धि दर निरंतर 30–40 वर्षों तक बढ़ती जाएगी।

ईसाई जगत् के अन्य देशों में इस आबादी के असंतुलन का गहन अध्ययन किया गया जिसके फलस्वरूप इंग्लैंड के तत्कालीन प्रधानमंत्री टोनी ब्लेयर ने अपने देश के लोगों को पाँच बच्चे प्रति परिवार होने की सलाह दी। पिछले कुछ वर्षों में यूरोप के देशों तथा आस्ट्रेलिया में जनसंख्या वृद्धि दर को बढ़ाने में विशेष प्रोत्साहन दिया जैसे ऑस्ट्रेलिया के वित्त मंत्री पीटर कॉस्टेलो ने प्रति बालक के जन्म पर 2000 आस्ट्रेलियन डॉलर की राशि देने की घोषणा की। कॉस्टेलो ने अपने देशवासियों को सलाह दी कि प्रत्येक दंपति के कम से कम तीन बालक होने चाहिए। (एक पिता के लिए एक माता के लिए तथा एक देश के लिए) (हिन्दुस्तान टाइम्स, दिल्ली दिनांक 13 मई 2004, पृष्ठ–1) इसी प्रकार जर्मनी ने भी लोगों को प्रोत्साहित करने के लिए नई योजनाओं की घोषणा की। इसी प्रकार पोप बैनेडिक सोलह ने अपने कैथोलिक अनुयायियों को परिवार बढ़ाने पर जोर दिया। क्या यह आवश्यक नहीं कि हिन्दुस्तान के मध्यमवर्गीय हिन्दू ओपिनियन मेकर्स, प्रगतिशील देशों से जो जनसंख्या कम होने के दुष्परिणाम से जाग उठे हैं, कुछ शिक्षा लें।

विश्व के अनेक विचारकों जैसे नेल फरग्यूसिन, बर्नड लियूस तथा मार्क स्टेन ने विश्व भर में खास वर्ग विशेष (मुसलमानों) की बढ़ती जनसंख्या को यूरोप को दर्शाकर जगा दिया है। यह भी जान लेना आवश्यक है कि सन् 1900 में मुसलमान विश्व भर की जनसंख्या के 12 प्रतिशत थे जो बढ़कर 1992–93 में 18 प्रतिशत हुए तथा 2003 में 20 प्रतिशत हो गए। अनुमान किया जाता है कि 2025 में, केवल 16 वर्षों के बाद विश्व में मुसलमानों की जनसंख्या 30 प्रतिशत हो जाएगी। (स्पैन्गलर दि डिक्लाइन ऑफ दि वेस्ट, सेमुअल हंटिंगटन)। कुछ अन्य विशेषज्ञों के अनुसार सन् 2100 तक मुसलमानों की जनसंख्या विश्व में 37 से 40 प्रतिशत हो जाएगी।

संसार के विभिन्न देशों में, गत बीस वर्षों के दौरान मुसलमानों की इस बढ़ती जनसंख्या के परिणामस्वरूप जिहादी आंतकवाद में अपूर्व वृद्धि हुई है।

अमरीका को अपनी भौगोलिक स्थिति के कारण बड़ा गर्व था कि वहाँ पर कोई जिहादी आतंकवाद संभव नहीं। परन्तु 9/11 की घटना ने उनकी आंखें खोल दीं कि दुनिया का कोई भी देश जिहादी आतंकवाद से अपने को सुरक्षित होने का भुलावा न करे।

जनसांख्यिकीय बदलाव के सामाजिक–राजनीतिक निहितार्थ

देश का भाग्य बनाने में जनसांख्यिकीय बहुत अहम भूमिका अदा करती है।

लोकंतत्र में तो इसकी भूमिका अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है। सामान्यतया देश का धर्म सभ्यता का चरित्र निर्धारित करता है। भारतीय सभ्यता के संबंध में इससे भी अधिक कहा जा सकता है। स्वामी विवेकानंद और महर्षि अरविंद जैसे विद्वानों ने ज़ोरदार ढंग से इसको स्पष्ट किया है। यद्यपि हम आधुनिक भारतीय सभ्यता को सर्वधर्म समन्वय के रूप में परिभाषित करते है, लेकिन इस देश की संस्कृति सनातन धर्म के ताने–बाने में ही बुनी है। देश के अधिकांश समुदायों की धार्मिक बनावट में निरंतर भारी बदलाव आया है, जो कि भारत सरकार की जनगणना–2001 रिपोर्ट के विवरण तालिका –7 में दर्शाया गया है। इसलिए यह बहुसांस्कृतिक, पंथनिरपेक्ष भारत के प्राचीन समाज पर प्रतिकूल प्रभाव डाल रही है और वृहत रूप में भारतीय सभ्यता की एकता पर भी प्रतिकूल प्रभाव आगे आने वाले वर्षों में डालेगी। इस विषय में कुछ तथ्य प्रस्तुत हैं :–

जनगणना के आँकडें

वर्ष	कुल आबादी	भारतीय धर्मावलम्बी	मुस्लिम	ईसाई
1951	36,10,88,000	31,49,37,000,	3,76,61,000	84,26,000
1961	43,92,35,000	38,15,67,000,	4,69,40,000	1,07,28,000
1971	54,81,60,000	47,25,16,000,	6,14,18,000	1,42,25,000
1981	68,33,29,000	58,63,34,000,	8,00,33,000	1,66,45,000
1991	84,63,03,000	71,99,44,000,	10,65,52,000	1,96,51,000
2001	1,02,87,37,000	86,63,51,000,	13,81,88,000	2,41,98,000

भारतीय धर्मावलम्बियों की घटती जनसंख्या (प्रतिशत में)

1951	87.219
1961	86.871
1971	86.201
1981	85.806
1991	85.069
2001	84.215

उपर्युक्त तालिका स्पष्ट बताती है कि हिन्दुस्तान में हिन्दुओं की जनसंख्या गत पचास वर्षों में तीन प्रतिशत घटी है। साथ–साथ मुख्यतः बढ़ोतरी मुसलमानों की जनसंख्या में और कुछ ईसाइयों में दर्ज हुई।

सन् 2001 के जनगणना के आँकड़ों से देश के प्रमुख भाग जिसमें से उत्तर प्रदेश, बिहार. प.बंगाल आते हैं, इन सभी में भारतीय धर्मावलम्बियों पर अत्यधिक

दबाव है। देश का यह भूमि खण्ड सबसे अधिक उपजाऊ है तथा इसमें 37 प्रतिशत आबादी केवल 19 प्रतिशत भूमिखण्ड में रहती है। इन क्षेत्रों में भारतीय धर्मावलम्बियों की जनसंख्या का अनुपात 80 प्रतिशत से कम हो गया है और इस भाग में 4 प्रतिशत से अधिक भारतीय धर्मावलम्बियों की जनसंख्या में कमी आई। इस क्षेत्र में दूसरे मुख्यतः मुसलमान ही हैं जिनका आबादी का भाग लगभग 20 प्रतिशत है। इन क्षेत्रों में भी विशेषतः मुसलमानों की जनसंख्या उत्तरी सीमा क्षेत्रों से जो पूर्वी उत्तर प्रदेश के बहराइच जिले से प्रारंभ होकर गोंडा, बस्ती, गोरखपुर और देवरिया प्रान्त के जिलेः से चम्पारन, मुज़्ज़फ्फरपुर, दरभंगा, सहरसा, पूर्णिया और बिहार का संथाल परगना : पश्चिमी दिनाजपुर, मालदा, वीरभूम, पश्चिमी बंगाल के मुर्शिदाबाद जिले और असम के ग्वालपाड़ा, कामरूप, दारंग और नागौण ज़िलों में मुसलमानों की आबादी 28 प्रतिशत से अधिक है। ध्यान देने योग्य बात यह है कि ये सब ज़िले देश के सीमावर्ती जिले हैं और इनका बहुत अधिक महत्व है। मिलाजुलाकर मुसलमानों की जनसंख्या देश के इन प्रांतीय क्षेत्रों में 28 प्रतिशत हो चुकी है तथा इनमें मुसलमानों की जनसंख्या की वृद्धि दर जुड़कर 7 प्रतिशत, पिछले 5 दशकों में बढ़ चुकी है।

इन उत्तरी प्रान्तीय क्षेत्रों के अतिरिक्त मुसलमानों की जनसंख्या निरंतर उत्तर प्रदेश के मुज़फ्फरनगर जिले के चारों तरफ जिसमें सहारनपुर, हरिद्वार, नजीबाबाद, मुरादाबाद, मेरठ इत्यादि शामिल हैं, अत्यधिक बढ़ी है। इसी प्रकार पश्चिमी बंगाल के कोलकाता, और असम के कछार जिले में मुस्लिम जनसंख्या में अत्यधिक वृद्धि दर्ज हुई।

उत्तर प्रदेश, बिहार, पश्चिमी बंगाल और असम, विशेषतया इन ज़िलों के सीमावर्ती क्षेत्रों में मुसलमानों की जनसंख्या में विशेष बढ़ोतरी हुई। भारतीय धर्मावलम्बी इन क्षेत्रों में विशेषतया दबाव में हैं और यह स्थिति भविष्य में और बिगड़ेगी। इन क्षेत्रों में मुसलमानों की जनसंख्या का हिस्सा लगभग 45 प्रतिशत हो चुका है, यदि हम ईसाइयों की भी जनसंख्या इसमें जोड़ें, फलस्वरूप भारतीय धर्मावलम्बी इन क्षेत्रों में अल्पसंख्यक हो चुके हैं। नौ ज़िलों में मुस्लिम जनसंख्या भारतीय धर्मावम्बियों से अधिक हो चुकी है और दो अन्य ज़िलों में बहुसंख्यक होने वाले हैं।

सन् 2001 की जनगणना के द्वारा स्पष्ट हुआ कि कश्मीर घाटी की जनसंख्या में भी बहुत बदलाव आया है। स्मरण होगा कि सन् 1991 में जम्मू–कश्मीर में जनगणना नहीं हुई थी। इस कारण पिछले दो दशकों में 1991–2001, भारतीय धर्मावलम्बियों की जनसंख्या बहुत घटी है जबकि घाटी की कुल जनसंख्या में 75 प्रतिशत की बढ़ोतरी हुई। इस जनसंख्या सर्वेक्षण के अनुसार घाटी में केवल कुछ ही हिन्दू परिवार बचे हैं जिनमें अधिकांश सब वृद्ध, पढ़े–लिखे काम करने वाले हैं।

स्पष्ट है कि घाटी में हिन्दुओं का पूर्णतया सफाया कर दिया गया है।

1991–2001 के दशक में कुछ अन्य प्रान्तों में, जिनमें हरियाणा, महाराष्ट्र, उड़ीसा शामिल हैं, भारतीय धर्मावलम्बियों की जनसंख्या खतरनाक ढंग से कम हुई है और हरियाणा में एक पृथक मुस्लिम बहुल ज़िला बना दिया गया है। इसी प्रकार महाराष्ट्र के कुछ क्षेत्रों में मुसलमानों की अत्यधिक वृद्धि हुई है।

संकेत यह मिलता है कि मुस्लिम जनसंख्या वृद्धि एक सुनियोजित कार्यक्रम के अन्तर्गत की जा रही है।

देश का एक तीसरा क्षेत्र जो सीमावर्ती भाग है, जिसमें जम्मू–कश्मीर उत्तर में, गोवा पश्चिमी और केरल दक्षिणी भाग में, लक्षद्वीप और निकोबार द्वीप समूह सीमावर्ती तट और उत्तर–पूर्वी ज़िले ऐसे हैं जिनमें मुसलमानों की जनसंख्या बहुत अधिक है।

1. पिछले दस वर्षीय वृद्धि दर : जनगणना 2001, भारत सरकार

	1991	2001
हिन्दू	23 प्रतिशत	20 प्रतिशत
मुस्लिम	34.5 प्रतिशत	36 प्रतिशत

सभी हिन्दू धर्मावलम्बियों, (सिख, जैन, बौद्ध) यहां तक कि स्वतंत्रता के बाद जनसंख्या की प्रतिशतता में नियमित कमी हुई।

इस आँकड़े में असम तथा जम्मू–कश्मीर में रहने वाले 3.6 करोड़ भारतीयों को शामिल नहीं किया गया जिससे अब इस वृद्धि दर को 29 प्रतिशत के रूप में दर्शाया गया ताकि आँकड़ों में कमी दिखने लगे। यह भी देशवासियों के साथ धोखा है।

2. जनगणना 2001 की तालिका–7 (धार्मिक डाटा रिपोर्ट के – पृ. 13), 0–6 आयु वर्ग में मुस्लिम समूह का प्रतिशत (जननीय आयु समूह को निर्दिष्ट करने के लिए सामान्यतः प्रयोग होने वाला शब्द) हिन्दुओं से 21 प्रतिशत अधिक था।

(टिप्पणी : मुस्लिम जनसंख्या द्वारा परिवार नियोजन अपनाने के कम चलन के कारण मुस्लिम समाज की 25 प्रतिशत वृद्धि हुई, जो कि 21 प्रतिशत अधिक समूह जनसंख्या है। जब वे 2011 में और 2016 में जननीय आयु समूह के बीच पहुँचेंगे तो अगले 30–40 वर्षों तक बढ़ोतरी निरंतर होगी। इससे देश में मुस्लिम जनसंख्या की अत्यधिक वृद्धि होगी।)

3. राष्ट्रीय स्वास्थ्य सर्वेक्षण –1 (1998–99) के अनुसार औसतन प्रत्येक मुस्लिम महिला ने हिन्दू महिला से 1.1 अधिक बच्चों को जन्म दिया।

4. दिल्ली में सन् 1960 से 2001 के बीच मुस्लिम जनसंख्या में 10.5 गुणा

वृद्धि हुई

5. हरियाणा में पिछले 30 वर्षों के दौरान मुस्लिम जनसंख्या में 3 गुना वृद्धि हुई; 4,05,723 (1971) से 12,22,916 (2001 तक)

6. पश्चिम बंगाल के जिला कोलकाता में पिछले दस वर्ष में मुस्लिम जनसंख्या की 18 प्रतिशत वृद्धि दर की तुलना में हिन्दू जनसंख्या वृद्धि दर मात्र 0.7 प्रतिशत थी। कोलकाता शहर में एक हिन्दू महिला केवल 1 शिशु को जन्म देती है जबकि अन्यों की जनसंख्या में यह वृद्धि दर 2.1 प्रतिशत हैं।

7. असम के बोंगाई गांव में दस वर्षों में हिन्दू जनसंख्या की वृद्धि दर 2.3 प्रतिशत थी जबकि मुस्लिम वृद्धि दर 31.8 प्रतिशत थी।

8. स्वतंत्रता के बाद भारत के उत्तर–पूर्वी भाग में हुई चमत्कारी जनसख्या वृद्धि संबंधी परिवर्तन को केवल ''जनसांख्यिकी अतिक्रमण'' के रूप में कहा जाएगा।

9. विश्व जनसंख्या में मुस्लिम जनसंख्या इस प्रकार है

1900	1993	2004	2025 (संभवतया)
12 प्रतिशत	18 प्रतिशत	20 प्रतिशत	30 प्रतिशत

(स्रोत 5 स्पेंगलर, दि डिक्लाइन ऑफ दि वेस्ट, सेम्यूल हंटिंगटन द्वारा उद्धृत)

तालिका

मुस्लिम देश जिनमें मुस्लिम जनसंख्या 85 प्रतिशत से अधिक है

देश	मुस्लिम जनसंख्या का अनुपात (प्रतिशत)
अफगानिस्तान	99
अल्जीरिया	97
बहरीन	91
बांग्लादेश	85
डिबूटी	94
मिस्र	91
जाम्बिया	86
गिनी	85

इंडोनेशिया	90
ईरान	96
ईराक	95
जॉर्डन	93
कुवैत	96
लीबिया	98
मालद्वीप समूह	99
माली	90
मॉरितानिया	96
मोरक्को	95
नाइजर	85
ओमान	99
पाकिस्तान	97
कतर	99
सउदी अरब	99
सेनेगल	86
सोमालिया	99
सीरिया	87
ट्यूनिशिया	98
तुर्की	98
संयुक्त अरब अमीरात	92
पश्चिम सहारा	99
उत्तरी यमन	99
दक्षिणी यमन	99

देश जिनमें मुसलमानों की प्रतिशत जनसंख्या 85 और 25 प्रतिशत के बीच है :–

अल्बानिया	70
ब्रुनेई	70

चाड	50
कुमारो द्वीप समूह	80
इथोपिया	48
गिनी–बिसाउ	49
लेबनान	47
नाइजीरिया	47
सियरे लोन	30
सूडान	72

ये आँकड़े सन् 1982 के हैं "In the path of God-Islam and Political Power" लेखक Daniel Pipes पृ. 338

विभिन्न मुस्लिम देशों में जनसंख्या संबंधित आँकडे

देश	स्त्री की प्रजनन दर	वृद्धि दर
सऊदी अरब	6.15	3.38
यमन	6.82	3.42
अफगानिस्तान	5.6	3.38
नाइजीरिया	5.4	2.53
पाकिस्तान	4.1	2.01
सीरिया	3.72	2.45
बांग्लादेश	3.17	2.01

यूरोप और अन्य देशों में जनसंख्या से संबंधित आँकडे

देश	स्त्री की प्रजनन दर	वृद्धि दर
युनाइटेड किंग्डम	1.66	0.3
फ्रांस	1.85	0.42
इटली	1.26	1.37
जर्मनी	1.37	0.04
स्पेन	1.26	0.16
रूस	1.33	–0.3 (आत्मघाती घटती दर)

आस्ट्रेलिया	1.41	0.22
भारत	2.91	1.47 (मुसलमानों की दर भी शामिल है)
चीन	1.66	0.

(टिप्पणी : जिन देशों में प्रजनन दर 2.1 से कम है, उन सब देशों की जनसंख्या घटने की ओर है)

देश में मुसलमानों का जीवन–स्तर

देश के अंदर ऐसा वातावरण पैदा कर दिया गया कि मुसलमानों की हालत दूसरे देशवासियों से अधिक गिरी हुई है। इसका इतना प्रचार किया गया कि सरकार ने एक समिति का गठन किया जिसके अध्यक्ष भूतपूर्व न्यायमूर्ति श्री राजेन्द्र सच्चर बने। इसके अधिकांश दूसरे सदस्य मुस्लिम जगत् से नियुक्त किए गए। इस समिति ने अपनी रिपोर्ट प्रधानमंत्री कार्यालय को दी जिसको लोकसभा में पेश किया गया। इस रिपोर्ट का विश्लेषण करने से स्पष्ट लगने लगा कि इसमें अनेक तथ्यों को तोड़मरोड़ कर पेश किया गया है। साथ–साथ समिति ने जो निष्कर्ष व्यक्त किए वे मुस्लिम समाज में शैक्षणिक विकास को प्रोत्साहित करने तथा उन्हें मुख्य धारा में लाने के लिए हैं। उनके घोषित इरादे ऐसे थे जो सही प्रतीत नहीं होते। एक वरिष्ठ स्तंभकार श्री ए.सूर्यप्रकाश का एक लेख 8.12.2006 के दिल्ली से प्रकाशित 'दैनिक जागरण' में छपा। उनका मानना है कि समता और समानता को प्रोत्साहित करने के सरकार के प्रयास बेशक सराहनीय है, लेकिन इस समिति के कामकाज में एक बड़ी खामी है, क्योंकि वह मुस्लिम समाज के भीतर के उन विषयों का विश्लेषण नहीं कर सकी, जिसका सीधा संबंध इस समाज के राष्ट्रीय धारा में जुड़ने से है। समिति के अनुसार देश ने काफी प्रगति की है, लेकिन इसमें शामिल 13.40 प्रतिशत मुस्लिम मानव विकास संकेतकों के लिहाज़ में बहुत पीछे हैं। इसके बाद यह रिपोर्ट मुस्लिमों की परेशानियों के लिए हर किसी दूसरे को दोष देने में लग जाती है। मिसाल के तौर पर समिति के अनुसार बिल्डर और मकान मालिक मुस्लिमों को मकान नहीं बेचते तथा किराए पर नहीं देते, स्कूलों में वातावरण इतना असहज है कि मुस्लिम बच्चों के माता–पिता को ऐसा अहसास होता है कि उनके बच्चों का वहाँ स्वागत नहीं किया जाता, मुस्लिम स्नातकों को निजी या सार्वजनिक क्षेत्र में नौकरी नहीं मिलती और यही कारण है कि वे स्वरोज़गार की ओर उन्मुख होते हैं।

सच्चर समिति अपनी रिपोर्ट में आगे भी मुस्लिमों की खराब दशा के लिए दूसरों को ही दोष देना जारी रखती है, लेकिन उसने इस पर विचार करना ज़रूरी नहीं समझा कि देश में रहने वाले दूसरे अल्पसंख्यक समुदाय; ईसाई, सिख या पारसी – को मानव जीवन के किसी भी क्षेत्र में ऐसी कोई शिकायत क्यों नहीं है ? चूंकि समस्याएं अनेकानेक हैं और केवल मुस्लिम समुदाय से संबंधित हैं, इसलिए यह

अपेक्षा थी कि समिति इनकी तह तक जाने का प्रयत्न करेगी लेकिन ऐसा लगता है कि वह अपने अध्ययन को लेकर सब कुछ पहले ही तय कर चुकी थी। सच्चर कमेटी को यह देखना चाहिए था कि जहाँ राष्ट्र–राज्य पर समुदायों के बीच समता और समानता सुनिश्चित करने का दायित्व है वहीं कुछ जिम्मेदारियां समुदायों की भी हैं। यदि हम इस तथ्य को समझने से इंकार करते हैं तो समस्या का कोई स्थायी और तर्कसंगत समाधान नहीं निकलेगा। क्या यह नहीं सोचा जाना चाहिए कि ईसाई, पारसी समुदाय भारत के ताने–बाने में इतने स्वाभाविक ढंग से कैसे सम्मिलित हो गए ? क्या किसी नियोक्ता के गले में ऐसा कोई कानूनी फंदा डालने की ज़रूरत है जिससे इन समुदायों के लोगों को कार्य स्थल पर पर्याप्त प्रतिनिधित्व मिले ? वास्तव में सच्चर समिति को स्वयं से यही सवाल करना चाहिए था और फिर मुस्लिम समुदाय की समस्याओं के समाधान की राह तलाश करनी चाहिए थी। सच्चर समिति ने किस प्रकार आधारहीन तथ्यों पर आँखमूंद कर भरोसा किया है जिसके उदाहरण रिपोर्ट में मिलते है। रिपोर्ट कहती है मुस्लिम बहुल इलाकों में पोलियो उन्मूलन अभियान की सफलता की खराब दर इस भय का परिणाम है जिसके तहत मुसलमानों में यह माना जा रहा है कि यह अभियान मुस्लिमों की जन्मदर कम करने की एक साजिश है। (क्या यह तर्क संगत नहीं कि देश के अधिकांश लोग बच्चों को पोलियो की दवा देते हैं परन्तु उन्हें इस प्रकार का कोई भय नहीं– लेखक) सच्चर समिति ने इसकी निंदा करने की ज़रूरत तक महसूस न की। इस आरोप को अपनी किसी प्रतिक्रिया के बिना प्रस्तुत कर समिति ने एक तरह से इस आरोप को आगे बढ़ाने पर अपनी मोहर लगा दी।

विशेषतया उत्तर प्रदेश तथा दूसरे क्षेत्रों में इस तरह का प्रचार किया जाता रहा है कि पोलियो उन्मूलन के लिए दी जाने वाली दवा मुस्लिमों में जन्म दर घटाने की साजिश है। इसका परिणाम यह निकला कि देश के पोलियो प्रभावित बच्चों में 70 प्रतिशत मुस्लिम बच्चे हैं। क्या सच्चर कमेटी को इन आँकाड़ों की जानकारी नहीं? उपरिवर्णित तथ्यों से यह स्पष्ट है कि जो मुस्लिम समाज के लिए सिफारिशें रिपोर्ट में दी गईं हैं, वे पहले ही निश्चित कर दी गईं थीं।

विश्व भर के मुसलमानों के पिछड़ेपन की विस्तृत जानकारी डॉक्टर फारूख सलीम ने जो इस्लामाबाद (पाकिस्तान) में एक स्वतंत्र पत्रकार हैं, अपने लेख में प्रस्तुत की है।

1. यद्यपि विश्व में मुसलमानों की जनसंख्या 22 प्रतिशत है, उनका विश्वभर की आय में योगदान 5 प्रतिशत है। वह लिखते हैं कि कुल 57 मुस्लिम देशों को मिलाकर उनकी (जी.डी.पी. 2 ट्रिलियन डॉलर) जी.डी.पी. 2,000,000,000,000 (20 खरब) डॉलर है।

2. अमेरिका की उत्पादकता 10.4 ट्रिलियन डॉलर है। चीन की 5.7 ट्रिलियन डॉलर है। जापान की 3.5 ट्रिलियन डॉलर तथा जर्मनी 2.1 ट्रिलियन डॉलर है। भारत की जीडीपी संभावित 3 ट्रिलियन डॉलर है।

3. इसके विपरीत समस्त मध्य एशियाई अरबी देश जिनमें सउदी अरब, संयुक्त अरब अमीरात, कुवैत और कतार मिलकर उत्पादक क्षमता 430 बिलियन डॉलर है यानि 0.4 ट्रिलियन डॉलर है। यूरोप के छोटे से देश नीदरलैण्ड की जीडीपी इन सब अरब देशों से अधिक है, तथा थाइलैण्ड जैसे देश की जीडीपी 429 बिलियन डॉलर है।

4. इससे भी ज़्यादा चिंता की बात यह है कि मुस्लिम जगत् की जीडीपी विश्व के अुनपात में निरंतर घटती जा रही है।

5. संयुक्त राष्ट्र की मानव विकास रिपोर्ट के अनुसार अरब का आधा स्त्री जगत् निरक्षर है। केवल 1 प्रतिशत के पास निजी कंप्यूटर है तथा केवल .5 प्रतिशत इंटरनेट सेवा का उपयोग करते हैं। आज कल 15 प्रतिशत अरब के लोग बेरोज़गार हैं और अनुमान है कि इनकी संख्या 2010 तक दुगुनी हो जाएगी।

6. विश्वभर के गरीब देशों में इथोपिया, अफगानिस्तान, सिअरालिओन, कंबोडिया, सोमालिया, नाइजीरिया, पाकिस्तान तथा मुज़ाम्बिक हैं। विश्व के 6 दूसरे गरीब देशों में भी मुस्लिम बहुमत में हैं।

कुछ अन्य जानकारियां डॉ. फारूख सलीम ने दी हैं जो निम्नलिखित हैं।

57 मुस्लिम बहुल देशों में 600 विश्वविद्यालय हैं जो लगभग 1.4 बिलियन लोगों के लिए हैं। स्पष्ट है कि प्रति देश औसत के अनुसार 10 विश्वविद्यालय हैं। इसके बिल्कुल विपरीत भारत में विश्वविद्यालयों की संख्या 8407 तथा अमेरीका में 5758 है। गत 150 वर्षों में मुस्लिम जगत ने 8 नोबेल पुरस्कार प्राप्त किए हैं। इसके विपरीत छोटी सी यहूदियों की आबादी ने जिसकी कुल जनसंख्या विश्व भर में 1 करोड़ 40 लाख है 167 नोबेल पुरस्कार प्राप्त किए हैं।

विश्व के 1.4 बिलियन मुसलमानों में तीन लाख वैज्ञानिक हैं जिसका अनुपात 230 वैज्ञानिक प्रति दस लाख मुस्लिम बना, इसके विपरीत अमेरिका में 4099 वैज्ञानिक प्रति दस लाख आबादी के तथा जापान में 7 लाख वैज्ञानिक हैं जिनका अनुपात 5059 प्रति दस लाख आबादी है। 1.4 बिलियन मुस्लिम आबादी में 800 मिलियन निरक्षर हैं और इसके विपरीत ईसाई जगत् में निरक्षरता दर शून्य है।

उपरिवर्णित जानकारी से स्पष्ट है कि मुसलमानों का पिछड़ापन एक विश्वव्यापी समस्या है। सच तो यह है कि भारत वर्ष के मुसलमानों का दूसरे देशों के मुसलमानों की तुलना में स्तर बहुत ऊँचा है। ◆◆◆

अध्याय-८

जिहादी संगठन तथा बुद्धिजीवियों के विचार

देशवासी इस्लामी जिहाद को पिछली दस शताब्दियों से भुगत रहे हैं। देश के विभाजन और स्वतंत्रता के बाद यह आशा की जाती थी कि इस्लामी जिहाद से मुक्ति मिल जाएगी। वास्तव में ऐसा नहीं हुआ और स्वतंत्रता के तुरंत बाद उलेमाओं ने मिलकर योजनाबद्ध कार्यक्रम के अंतर्गत खंडित भारत के इस्लामीकरण की प्रक्रिया शुरू कर दी। इसी प्रक्रिया के अंतर्गत निरंतर मदरसे स्थापित किए जाने लगे। गत बीस वर्शों में इस जिहादी प्रक्रिया ने अधिक ज़ोर पकड़ा है। इसका प्रमुख केन्द्र कश्मीर बनाया गया। जहाँ यह निरंतर जारी है। साथ–साथ देश के कोने–कोने में कट्टरवादी मुस्लिम संगठनों का जाल बिछाया जा चुका है, जिससे जिहाद को आगे बढ़ाया जा सके।

अन्य देशों तथा यूरोप के देशों एवं अमेरिका को इस जिहादी स्वरूप की न तो स्पष्ट समझ आई और न इसके निवारण के बारे में सोचा गया। परन्तु 11 सितम्बर 2001 का दिन जब जेहादी आतंकवाद ने अमेरिका के समक्ष अपना चेहरा बेनकाब किया तो विश्व की इकलौती सुपर शक्ति भी थर्रा गई और उस दिन से इस्लामी जिहाद को विश्वव्यापी समझा जाने लगा। जिहादी आतंकवाद ने समस्त विश्व के सभ्य देशों में जिनमें इस्ताम्बुल, मेड्रिड, लंदन, दिल्ली, बाली (इण्डोनेशिया), मुम्बई तक विनाश लीला दिखाकर अपनी उपस्थिति सभी स्थानों पर सिद्ध कर दिखाई। आप इन जिहादियों को चाहे अल–कायदा, लश्करे–तैयबा, हुजी, जैश–ए–मोहम्मद के नाम से पुकारो, वे सभी एक–दूसरे के पूरक हैं। सभी का जिहादी लक्ष्य एक ही है : 'विश्व का इस्लामीकरण'। सच तो यह है कि यह विश्व स्तर का युद्ध शुरू हो चुका है और ऐसा प्रतीत होता है कि यह युद्ध आर–पार की लड़ाई होकर रहेगा। कुछ जिहादी संगठनों की जानकारीः–

अल कायदा

लश्करे तैयबा जैश–ए–मोहम्मद हूजी

अल कायदा :– सन् 1988 में अमेरिका द्वारा सोवियत रूस की शक्ति पर अंकुश लगाने के लिए लड़ाकों का एक दल गठित किया गया, जिसका नाम था अल कायदा। इसका सरगना ओसामा–बिन लादेन बना। इस संगठन के द्वितीय

पायदार के अधिकारी है मिस्र निवासी आएमन–अल–जवाहिरी। जॉर्डन का इस्लामी अबु मूसब अल ज़रकावी अल कायदा में सन् 2004 में शामिल हुआ। अलकायदा के अब 100 देशों में, जिनमें इंग्लैंड, अमेरिका, इटली, फ्रांस, स्पेन, जर्मनी, अलबायनिया, युगाण्डा शामिल हैं, इस संगठन का जिहादी नेटवर्क चल रहा है।

लश्करे तैयबा : यह संगठन 1990 में सोवियत रूसी सेनाओं से लड़ने के लिए अफगानिस्तान में स्थापित किया गया। यह संगठन मरकज़ उद दावा वल इरशाद को जो कि पाकिस्तान में एक इस्लामी कट्टरपंथियों का संगठन है, हिस्सा है। इस संगठन ने अलकायदा से मिलकर अमेरिका की फौजों से अफगानिस्तान में लड़ाई की। परन्तु इस संगठन पर अमेरिका ने सन् 2001 में रोक लगा दी। कश्मीर में इस संगठन का नेतृत्व मौलाना हफीज़ मोहम्मद सईद करता है। 13.12.2001 को संसद पर जिहादी हमले में इस संगठन का हाथ माना जाता है।

हमारे देश को लश्करे तैयबा से विशेष खतरा है। कभी–कभी इस संस्था को जमायत–उद–दवा नाम से भी जाना जाता है। जम्मू–कश्मीर में यह बहुत सक्रिय है। इसका ध्येय हिन्दुस्तान में इस्लामी शासन स्थापित करना है। एक और संस्था अल–उमर मुजाहिद्दीन भी जम्मू कश्मीर में सक्रिय है। इस संस्था का मुख्य ध्येय जम्मू–कश्मीर को पाकिस्तान में मिलाना है।

भाग्यवश देश के राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार ने गत सितम्बर 2006 को अपनी नौकरी की चिन्ता न करते हुए टी. वी. की एक भेंट वार्ता में पहली बार जानकारी दी कि लश्करे तैयबा के जिहादी देश के परमाणु ठिकानों पर आक्रमण कर सकते हैं। यह जानकारी देने से राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार ने अपनी देशभक्ति का परिचय दिया, साथ–साथ चेतावनी दी कि देश को जिहादी आतंकवादियों से भीषण खतरा है। देश के सामने ऐसी गंभीर स्थिति होते हुए देशवासियों को सच बोलकर सावधान करना तथा चुनौतियों का मुकाबला करने को सचेत करना उनका देश प्रेम दर्शाता है।

देश के समक्ष मंडरा रहे इन खतरों व आतंकवादियों के मन्सूबों का खुलासा स्वयं तत्कालीन गृहमंत्री शिवराज पाटिल ने बुधवार 22 नवम्बर 2006 को किया है। उन्होंने कहा कि आतंकवादियों की तैयारियां देश की प्रगति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाले तेल एवं प्राकृतिक गैस, रक्षा, संचार व सूचना प्रौद्योगिकी पर भी निशाना साधने की है। इन खतरों से निबटने के लिए देश की खुफिया व सुरक्षा ऐजसिंयों ने तैयारियां की हैं और सरकार भी इस काम में उनको किसी तरह की वित्तीय कमी नहीं आने देगी। गृहमंत्री ने कहा कि अमेरिका के साथ नाभिकीय ऊर्जा समझौते के बाद भारत के परमाणु ऊर्जा संयंत्र आतंकियों के निशाने पर हैं। आतंकी अब देश के सामरिक, वाणिज्यिक व देश की प्रगति से जुड़े महत्वपूर्ण ठिकानों को निशाना बनाने की जुगत में है। उन्होंने कहा कि देश की समुद्री सीमा पर भी खतरे बढ़ गए

हैं। लश्करे तैयबा अब समुद्री रास्ते से आतंकियों व हथियारों को देश में भेजने की तैयारी में है, वही आईएसआई समुद्री तटों के नज़दीक स्थित रिफाइनरियों की जानकारी जुटा रही है। गृहमंत्री ने इस बात का रहस्योद्घाटन भी किया कि आतंकी संगठन समुद्र में निर्जन पड़े छोटे द्वीपों पर कब्ज़ा कर वहाँ से अपनी गतिविधियो को अंजाम देने की फिराक में हैं। (दैनिक जागरण, दिल्ली, 23 नवम्बर 2006) उल्लेखनीय है कि जिहादियों ने अपने इरादे 26 नवम्बर 2008 को मुंबई में आक्रमण करके पूरे कर दिखाए।

टिप्पणी – इतने वर्षों से जेहादी आतंकवाद से जूझने के बाद भी भारत सरकार की नीति केवल आतंकी पेड़ की टहनी–पत्तियां काटने की ही रही है, जब तक जड़ सही सलामत है तब तक आतंकी पेड़ का बालबांका नहीं होगा।

पाठकों को याद होगा कि संसद पर 13 दिसम्बर 2001 के आक्रमण के बाद तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी ने दो महत्वपूर्ण बातें आतंकवाद के विषय में कहीं थीं :–

1. आतंकवाद के खिलाफ लड़ाई अब अंतिम चरण में पहुंच गई है।
2. अब इससे आर–पार की लड़ाई लड़नी होगी।

निःसंदेह ये दोनों ही निष्कर्ष बिल्कुल सही दिशा की ओर संकेत करते हैं। कोई भी सफल लड़ाई उस समय तक नहीं लड़ी जा सकती जब तक शत्रु के मंतव्यों की सही–सही जानकारी तथा पहचान न कर ली जाए। उसकी शक्ति का पूरा आंकलन कर लिया जाना तथा लड़ाई में इस्तेमाल किए जाने वाले हथियारों की जानकारी भी आवश्यक है। शत्रु की मानसिकता, शत्रु का संकल्प, शत्रु की मान्यताएं भी जानना अति आवश्यक हैं। इस्लाम की एक निश्चित विचारधारा है जिसका एक वैश्विक आधार है। जिन जिहादी आतंकवादियों ने संसद् पर दुस्साहसिक आक्रमण किया वे किस विचारधारा से प्रेरित थे ? क्या उनकी विचारधारा किसी एक देश अथवा क्षेत्रीय समुदाय तक ही सीमित थी, इस पर शोध आवश्यक है। विचार करने पर स्पष्ट हो जाता है कि इस्लाम में आस्था रखने वालों का दृढ़ विश्वास है कि समस्त धरती अल्लाह की होने के कारण उन्हीं की है और यह उनका दायित्व बनता है कि जिन देशों ने उनकी धरती का अपहरण किया हुआ है, उनसे वे धरती छीन लें अर्थात् दारुल–हरब को दारुल–इस्लाम बनाएं। इस जद्दोजहद में जिहाद करना और उनसे पृथ्वी का भाग वापिस लेना अनिवार्य है। जिहाद को जो लोग मुसलमानों द्वारा निरंतर चलाए जाने वाले संघर्ष के रूप में देखते हैं और उसे अपना पवित्र मज़हबी फर्ज मानते हैं, उनकी इन मान्यताओं से संसार के सभी भागों में टकराव उत्पन्न होना स्वाभाविक है। हमारे देश को आज उसी मान्यता से भरे जिहादियों से जूझना पड़ रहा है। लश्करे तैयबा के एक नेता से जब यह पूछा गया

कि एक आतंकवादी संगठन के रूप में यदि पाकिस्तान की सरकार आपके संगठन पर प्रतिबंध लगा दे तो आपकी क्या प्रतिक्रिया होगी? उसका बड़ा स्पष्ट उत्तर था – पाकिस्तान की सरकार हम पर कोई रोक नहीं लगा सकती क्योंकि हमारा संगठन कोई आतंकवादी संगठन नहीं है। हम तो 'मुजाहिद्दीन' हैं और हम 'जिहाद' कर रहे हैं। ऐसी विचारधारा यह भी मानती है कि इस्लाम के लिए राष्ट्र अथवा देश की सीमाएं कोई महत्व नहीं रखतीं। पिछली शताब्दी के इस्लामी विद्वान् सैयद कुत्ब ने स्वयं यह स्पष्ट किया जिसका वर्णन आगे है। यह बताना आवश्यक है कि जिहाद का लक्ष्य केवल कश्मीर तक सीमित नहीं है। वह उस सर्व इस्लामी अवधारणा से प्रेरित हैं जिसमें संसार के वे सभी देश आ जाते हैं जहां गैर–इस्लामी शासन हैं और उस शासन से मुसलमानों के स्वार्थ कहीं न कहीं टकराते हैं। इनका समाधान करने के लिए जिहाद करना आवश्यक है और प्रत्येक मुसलमान इसके लिए बड़ी से बड़ी कुर्बानी करने को सदैव तत्पर रहता है। खण्डित भारत गत तीन दशकों से इसी प्रकार के जिहाद से जूझ रहा है और आने वाले लंबे समय तक आशा की जाती है कि यह चलता रहेगा। आज भी स्थिति यह है कि देश की सरकार स्पष्टतः उस शत्रु का नाम लेने को तैयार नहीं है। इस कारण जनसाधारण का यह कर्तव्य है कि वे ऐसे प्रतिनिधियों को चुनें जो जिहादी आतंकवाद को जड़ से उखाड़ें। साथ–साथ देश की सरकार को झिंझोड़ें और सच बताने को बाध्य करें। यह तभी संभव होगा जब देश के नेता वोट बैंक की नीति छोड़ने पर मजबूर किए जाएंगे।

जैश–ए–मोहम्मद : यह संगठन मौलाना मसूद अज़हर ने सन् 2001 में जमायत–ए–उलेमा इस्लाम के फजरूल रहमान के संगठन के साथ मिलकर बनाया। जैश–ए–मोहम्मद का भी अलकायदा तथा तालिबान के साथ घनिष्ठ संबंध है। इस संगठन पर भी अमेरिका ने सन् 2001 में रोक लगाई। दिसम्बर 2003 में पाकिस्तान ने जैश–ए–मोहम्मद द्वारा खुद्दम–उल–इस्लाम जो अज़हर के संरक्षण में थी तथा जमायत उल फरगान जो मौलाना जब्बर के नेतृत्व वाली संस्था पर जनरल मुर्शरफ पर आत्मघाती हमले के कारण रोक लगाई।

हरकत–उल–अंसार : पाकिस्तान के दो संगठन हरकत उल जिहाद–ई–इस्लामी और हरकत–उल–मुजाहिद्दीन को मिलाकर 1993 में सदातुल्ला खान ने हरकत–उल –अंसार का गठन किया। यह संस्था पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर में निर्मित हुई तथा जम्मू–कश्मीर से लेकर बर्मा, तजाकिस्तान और बोस्निया इसके कार्यक्षेत्र में आ गए। सन् 1997 में इस संस्था पर अमेरिका द्वारा रोक लगा दी गई। इस रोक से बचने के लिए संस्था को दो भागों में बांट दिया गया :–

1. हरकत–उल–मुजाहिद्दीन 2. हरकत–उल–जिहाद–ई–इस्लामी

हरकत–उल–मुजाहिद्दीन के आतंकवादियों ने इंडियन एयरलाइन्स की उड़ान आईसी 814 का काठमाण्डु से चलने के बाद अपहरण किया तथा उसे कंधार

हवाई अड्डे पर उतरने के लिए मजबूर किया जिससे उड़ान के सभी यात्रियों को बंधक बना लिया गया। बंधकों को छोड़ने के लिए अनेक शर्तें रखी गईं जिसमें मौलाना मसूद अज़हर (हरकत उल मुजाहिद्दीन का सरगना) को जो भारत में कैद था, छुड़ाना था। मज़बूरन भारत सरकार को यह शर्त माननी पड़ी तथा मसूद अज़हर तथा अन्य साथियों को हिन्दुस्तान के विदेश मंत्री जसवंत सिंह स्वयं लेकर कंधार गए। मौलाना मसूद अज़हर का कंधार पहुंचने पर तालिबानों ने अतिविशिष्ट मेहमान की तरह स्वागत किया। यह मौलाना मसूद अज़हर मदरसों में पढ़ा अति उच्च श्रेणी का इस्लामी विद्वान् है तथा कश्मीर तथा भारतवर्ष में जिहादी आतंकवाद की जिम्मेदारी इस पर है।

अलकायदा के इन संगठनों का विश्व के अनेक स्थानों पर जिहादी गतिविधियों का लेखाजोखा :–

दिल्ली, मुम्बई (भारत)

1. 13 दिसम्बर 2001 को पाँच जिहादी आतंकवादियों ने देश की संसद् पर आक्रमण किया, 14 व्यक्ति मारे गए।
2. 29 अक्टूबर, 2005 को दिल्ली के महत्वपूर्ण बाजारों में बम विस्फोट कराए गए जिसमें 61 लोगों की जानें गई तथा सैंकड़ों गंभीर रूप से घायल हुए। ये विस्फोट ऐसे समय पर कराए गए जब सड़कों पर मुसलमानों का होना संभव न था। (रोज़े चल रहे थे)
3. 11 जुलाई, 2006 को मुम्बई की लोकल रेल गाड़ियों में प्रथम श्रेणी के डिब्बों में विस्फोट कराए गए जिसमें 187 लोगों की जानें गई तथा सैंकड़ों गंभीर रूप से घायल हुए। प्रथम श्रेणी के डिब्बे चुनने का कारण मुख्यतः था कि इनमें अधिकांश उच्च वर्ग के हिन्दू ही सफर करते हैं।
4. मुंबई में 26 नवम्बर 2008 को 12 जिहादी आतंकवादियों ने जो संभवतः समुद्र के रास्ते से आए थे, होटल ताज, नरीमन हाउस, छत्रपति शिवाजी टर्मिनस (रेल) पर ऐके 47 राइफलों से ताबड़तोड़ गोलियां बरसाईं। ताज होटल और नरीमन हाउस की मुठभेड़ें तीन दिनों तक चलती रहीं। लगभग 160 लोग मारे गए और सैंकड़ों घायल हुए।

उपरिवर्णित जिहादी गतिविधियों की जिम्मेदारी जैश–ए–मोहम्मद तथा लश्करे तैयबा जैसे संगठनों की थी।

कोलकाता :

22 जनवरी 2002 को मोटर साइकिलों पर सवार (यू.एस.आई.एस) अमेरिकी दूतावास के एक हिस्से पर गोलियां बरसाईं जिससे पाँच सुरक्षाकर्मी मारे गए।

आसिफ रज़ा कमाण्डो फोर्स ने जो पाकिस्तान स्थित हरकत–उल–जिहादे इस्लामी का भाग है, उसकी जिम्मेदारी ली।

अयोध्या (भारत)

सितम्बर 2004 को श्रीरामजन्मभूमि अयोध्या पर जिहादी आतंकवादियों ने हमला किया। हमारा देश इस आक्रमण का जिम्मेदार जैश–ए–मोहम्मद को मानता है।

विश्व के दूसरे नगर

11 सितम्बर 2001 को अमेरिका में तीन अपहृत हवाई जहाजों द्वारा अमेरिका की आर्थिक रीढ़ वर्ल्ड ट्रेड सेंटर, अमेरिका का रक्षा मुख्यालय पेंटागन पर सीधा हवाई जहाजों द्वारा हमला किया गया जिसमें 3000 लोगों की जानें गईं। 6 मुख्य आरोपियों, जिनका सरगना खालिद शेख मुहम्मद था, पाकिस्तान में गिरफ्तार किया गया। ये व्यक्ति पाकिस्तान स्थित कराची और फैसलाबाद में निवास करते थे।

बाली इण्डोनेशिया

12 अक्टूबर 2002 को एक कार द्वारा जो बमों से लैस थी बाली के होटल पर विस्फोट किया गया। इसमें 202 लोगों की जानें गईं तथा 300 से अधिक घायल हुए।

मुम्बासा (केनिया)

28 नवम्बर 2002 को कार में बैठे तीन फिदायीन जिहादियों ने पैराडाइज़ होटल पर आक्रमण किया जिसमें 15 लोगों की जानें गई तथा 40 घायल हुए। अलकायदा ने इस हमले की जिम्मेदारी ली तथा 6 पाकिस्तानी गिरफ्तार किए गए।

रूस

23 अक्टूबर 2002 को 42 बंदूकधारियों ने जिनमें एक महिला आतंकवादी भी थी मास्को थियेटर पर आक्रमण किया। इन बंदूकधारियों ने चेतावनी दी कि वे सभी को मार देंगे यदि रूस की सेना चेचनिया से तुरंत नहीं हटाई जातीं। रूस सरकार ने तीन दिन बंधक रहने के पश्चात् उस थियेटर में ऐसी गैस छोड़ी जिससे सभी आतंकवादी मारे गए और अनेक दर्शकों को गंभीर स्थिति में बचा लिया गया।

1 सितम्बर 2004 को बेसलन स्थित (रुस) स्कूल पर 32 फिदायिन जिहादियों ने आक्रमण किया जिसमें 1200 बच्चे और अभिभावक थे। इसमें रूस की सेनाओं द्वारा कार्रवाई की गई परन्तु 326 व्यक्ति जिसमें 156 बच्चे थे, मारे गए और 700 से अधिक घायल हुए इसमें 26 जिहादी आतंकवादी भी मारे गए जिनमें से संभवतः बाकी बच कर भाग निकले।

स्पेन

स्पेन की राजधानी मैड्रिड में 11 मार्च 2004 को रेलगाड़ियों पर बमों द्वारा जिहादियों ने हमला किया जिसके फलस्वरूप 191 लोगों की जानें गईं तथा 1500

से अधिक लोग घायल हुए। इसकी जिम्मेदारी संभवतः अलकायदा की है।

लेबनान

14 फरवरी 2005 को आतंकवादियों द्वारा लेबनान के प्रधानमंत्री रफीक हरारी और 20 अन्य को बेरूत (Beirut) में मार डाला गया।

लंदन

7 जुलाई 2005 को एक डबलडेकर बस में तथा अंडरग्राउंड चलने वाली तीन रेलगाड़ियों में बमों के धमाके कराए गए जिनसे 56 लोगों की जानें गईं।

10 अगस्त 2006 को हवाई जहाजों को गिराने की साजिश को पुलिस द्वारा नाकामयाब कर दिया गया। इसमें अनेक लोगों को गिरफ्तार किया गया। यह पाया गया कि इसके मुख्य आरोपी, रशीद रउफ समेत सभी पाकिस्तान से संबंधित थे।

ऑन्टेरियो, कनाडा

3 जून 2006 को अलकायदा से संबंधित 17 आरोपियों को गिरफ्तार किया गया जिन्होंने वहाँ की संसद् तथा कनाडा के गुप्तचर विभाग के मुख्यालय को बमों से उड़ाने की साजिश रची थी। गिरफ्तार आरोपियों में 12 पाकिस्तान और बांग्लोदश के मूल निवासी थे।

बुद्धिजीवियों के विचार

इस्लाम के जन्म का एकमात्र ध्येय है – संसार से अल्लाह प्रेरित इस्लाम मज़हब के अतिरिक्त दूसरे सभी धर्मों, मज़हबों को नष्ट कर उनके स्थान पर इस्लाम स्थापित करना, तथा विभिन्न देशों के मनुष्यों द्वारा बनाए संविधानों के स्थान पर शरिया कानून स्थापित करना। एम.आर.ए.बेग अपनी पुस्तक ''मुस्लिम डायलेमा इन इंडिया'' में स्पष्ट रूप से पुष्टि करते हैं कि इस्लाम का जन्म अन्य मतों को समाप्त करने के लिए हुआ है। इसी विषय में पिछली शताब्दी के प्रसिद्ध उलेमाओं (आलिमों) के विचार जानना आवश्यक है, क्योंकि इनका सीधे–सीधे मदरसों की पढ़ाई पर असर पड़ता है।

सैयद कुत्ब

मिस्र के शहीद सैयद कुत्ब 20वीं शताब्दी के एक प्रमुख आलिम माने जाते हैं। अन्य हैं – हिन्दुस्तान में जन्में हुसैन अहमद मदनी, सैयद अबुल आला मौदुदी, लखनऊ के अबुल हसन अली नदवी तथा ईरान के अयातुल्ला खुमैनी प्रसिद्ध हैं।

सैयद कुत्ब का मानना है कि मुसलमान के नाते–रिश्तेदार, उसके माता–पिता, भाई, पत्नी और कबीले के लोग नहीं हैं, यदि उनकी प्राथमिक रिश्तेदारी अल्लाह से नहीं है। उसकी मार्फत ही वह रिश्ता खून के रिश्तेदारों में आता है।

इसी प्रकार कुरान की आयत ''मज़हब में कोई ज़ोर ज़बरदस्ती नहीं'' (कु. 2:

256) के विषय में हिन्दुस्तान में 18वीं शताब्दी में जन्में विश्वविख्यात आलिम शाह वली–उल्ला का मत है कि इस्लाम की घोषणा (इस्लाम स्वीकार करो) के बाद बल प्रयोग वास्तव में बल प्रयोग नहीं है। (क्योंकि आप निमंत्रण ठुकराकर अपराधी बन गए–लेखक) सैयद कुत्ब इसी बात को दूसरी प्रकार से कहते हैं। उनका कहना है कि सत्य मत की स्वतंत्रता तो तभी होगी जब जोरजबरदस्ती को (समस्त पृथ्वी अल्लाह की है – अर्थात् पैगम्बर की है, परन्तु जिसके कुछ हिस्सों को काफिरों ने अल्लाह के राज्य का बलात् अपहरण कर रखा है।) पहले बल पूर्वक निर्मूल कर दिया जाए, जिससे मानव हृदय और मस्तिष्क को कुफ्र की जंजिरों से मुक्त कर सीधे–सीधे संबोधित किया जा सके। (सैयद कुत्ब – एम.आलिम, पृ. 90)

सैयद कुत्ब जिहाद को एक व्यावहारिक सिद्धांत मानते हैं जिसे मुसलमानों द्वारा कभी भी त्यागा नहीं जाना चाहिए। सैयद कुत्ब जिहाद को व्यावहारिक सिद्धांत मानते हुए उन आधुनिक मुसलमानों की भर्त्सना करते हैं जो जिहाद को ''केवल रक्षात्मक'' सिद्ध करने के लिए लंबे–लंबे लेख लिखते हैं। सैयद कुत्ब ऐसे व्यक्तियों को ''आध्यात्मिक और बौद्धिक पराजयवादी'' कहते हैं क्योंकि ऐसे लोग समझते हैं कि जिहाद को ''रक्षात्मक'' सिद्ध करने से वे इस्लाम की सेवा कर रहे हैं। वास्तव में वे इस्लाम के ऐसे सिद्धांत को नकारने का प्रयास करते हैं जो कि सभी आधुनिक गैर–इस्लामी राजनीतिक दर्शनों को नष्ट करने में विश्वास करता है। निश्चय ही इस्लाम कुफ्र के विरुद्ध निरंतर युद्धरत है। सैयद कुत्ब यह भी फरमाते हैं : ''असत्य और सत्य का सहअस्तित्व पृथ्वी पर संभव नहीं है। इस्लाम पृथ्वी पर अल्लाह के शासन को स्थापित करने की घोषणा करता है और मानवता को उसके अतिरिक्त दूसरों की पूजा करने से रोकता है। उसका विरोध उन लोगों द्वारा किया जाता है जिन्होंने अल्लाह की पृथ्वी पर शासन का अपहरण कर लिया है। वह कभी शांति स्थापित नहीं होने देंगें। तब इस्लाम मानव को उसके पंजे से मुक्त कराने के लिए उनको नष्ट करने लगता है। **यह एक निरंतर चलने वाली क्रिया है और जिहाद की यह स्वतंत्रता की लड़ाई तब तक चलती रहेगी जब तक अल्लाह का मज़हब पूर्णतया समस्त पृथ्वी पर स्थापित नहीं हो जाता।**

बाबा साहब डॉ. भीमराव अम्बेडकर (1891–1956)

बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर भारत के विभाजन के संबंध में लिखित पुस्तक ''थॉटस् ऑन पाकिस्तान'' में जो स्वतंत्रता से सात वर्ष पूर्व सन् 1940 में लिखी गई, लिखते हैं :–

मुस्लिम भ्रातृत्व भाव केवल मुसलमानों के लिए :– ''इस्लाम एक बंद निकाय की भाँति है, जो मुसलमानों और गैर–मुसलमानों के बीच भेद करता है। इस्लाम का भ्रातृत्व समस्त मानवता के लिए नहीं है, केवल मुसलमानों का मुसलमानों से ही भ्रातृत्व है। यह बंधुत्व है, परन्तु इसका लाभ अपने ही निकाय के

लोगों तक ही सीमित है और जो इस निकाय से बाहर है, उनके लिए इसमें सिर्फ घृणा और शत्रुता ही है। इस्लाम का दूसरा अवगुण यह है कि यह सामाजिक स्वशासन की एक पद्धति है और स्थानीय स्वशासन से मेल नहीं खाता, क्योंकि मुसलमानों की निष्ठा जिस देश में वे रहते हैं, उसके प्रति नहीं होती, बल्कि वह उस मज़हबी विश्वास पर निर्भर करती है, जिसका कि वे एक हिस्सा हैं। किसी मुसलमान के लिए इसके विपरीत या उल्टा सोचना अत्यंत दुष्कर है। जहाँ कहीं इस्लाम का शासन है, वहीं उसका अपना विश्वास है। दूसरे शब्दों में इस्लाम सच्चे मुसलमानों को भारत को अपनी मातृभूमि और हिन्दुओं को अपना निकट संबंधी मानने की इजाजत नहीं देता। संभवतः यही कारण था कि **मौलाना मुहम्मद अली जिसे एक महान भारतीय माना जाता था, सच्चे मुसलमान होने के नाते उन्होंने अपने शरीर को हिन्दुस्तान की बजाए यरुशलम में दफनाया जाना अधिक पसंद किया।**

एक साम्प्रदायिक और राष्ट्रीय मुसलमान में अन्तर देख पाना कठिन है

मुस्लिम लीग को बनाने वाले साम्प्रदायिक मुसलमानों और राष्ट्रवादी मुसलमानों के अन्तर को समझना कठिन है। यह अत्यंत संदिग्ध है कि राष्ट्रवादी मुसलमान किसी वास्तविक जातीय भावना, लक्ष्य तथा नीति से कांग्रेस के साथ रहते हैं, जिसके फलस्वरूप वे मुस्लिम लीग से पृथक् पहचाने जाते हैं। यह कहा जाता है कि अधिकांश कांग्रेस जनों की धारणा है कि इन दोनों में वास्तव में कोई अंतर नहीं है, और **कांग्रेस के अंदर राष्ट्रवादी मुसलमानों की स्थिति सांप्रदायिक मुसलमानों की सेना की एक चौकी की तरह है।** यह धारणा असत्य प्रतीत नहीं होती। जब कोई व्यक्ति इस बात को याद करता है कि राष्ट्रवादी मुसलमानों के नेता स्व. डॉ. अंसारी ने सांप्रदायिक निर्णय का विरोध करने से इंकार किया था, यद्यपि कांग्रेस और राष्ट्रवादी मुसलमानों द्वारा पारित प्रस्ताव का घोर विरोध होने पर भी मुसलमानों को पृथक निर्वाचन उपलब्ध हुआ।''

हिन्दू और मुसलमान दो विभिन्न प्रजातियां

डॉ. अम्बेडकर का मानना है कि आध्यात्मिक दृष्टि से हिन्दू और मुसलमान केवल ऐसे दो वर्ग या संप्रदाय नहीं हैं जैसे ईसाइयों में प्रोटेस्टेंट्स और कैथोलिक या शैव और वैष्णव, बल्कि वे तो दो अलग–अलग प्रजातियां हैं।

इस्लामी कानून समाज–सुधार के विरोधी हैं

भारत के मुसलमानों में समाज सुधार का ऐसा कोई संगठित आन्दोलन नहीं उभरा जो इन बुराइयां का सफलतापूर्वक उन्मूलन कर सके। हिन्दुओं में भी अनेकानेक सामाजिक बुराइयाँ हैं परन्तु संतोषजनक बात यह है कि उनमें से अनेक इनकी विद्यमानता के प्रतीक सजग हैं और उनमें से कुछ उन बुराइयों के उन्मूलन हेतु सक्रिय तौर पर आन्दोलन भी चला रहे हैं। दूसरी ओर, मुसलमान यह महसूस

ही नहीं करते कि ये बुराइयां हैं। परिणामतः वे उनके निवारण हेतु सक्रियता भी नहीं दिखाते। इनके विपरीत वे अपनी मौजूदा प्रथाओं में किसी भी परिवर्तन का विरोध करते हैं। यह उल्लेखनीय है कि मुसलमानों ने केन्द्रीय असेम्बली में सन् 1930 में पेश किए गए बाल विवाह विरोधी विधेयक का भी विरोध किया था, जिसमें लड़की की विवाह योग्य आयु 14 वर्ष और लड़के की 18 वर्ष करने का प्रावधान था। मुसलमानों ने इस विधेयक का विरोध इस आधार पर किया कि ऐसा किया जाना मुस्लिम मज़हबी उसूलों द्वारा निर्धारित कानून (शरीया) के विरुद्ध होगा। उन्होंने इस विधेयक का हर चरण पर विरोध ही नहीं किया, जब यह कानून बन गया तो उसके खिलाफ सविनय अवज्ञा अभियान भी छेड़ा।

मुस्लिम कानून की मान्यताओं के अनुसार हिन्दुस्थान हिन्दुओं और मुसलमानों की समान मातृभूमि नहीं हो सकती :–

मुस्लिम मज़हब की मान्यताओं के अनुसार विश्व दो हिस्सों में विभाजित है

1. दार–उल–हरब 2. दार–उल–इस्लाम

मुस्लिम शासित देश दारुल इस्लाम हैं। वे देश जिनमें मुसलमान दूसरे धर्मावलम्बियों के साथ रहते हैं, न कि उस पर शासन करते हैं, वे हैं दार–उल–हरब। मुस्लिम मज़हबी कानून का ऐसा होने के कारण हिन्दुस्तान हिन्दुओं तथा मुसलमानों दोनों की मातृभूमि नहीं हो सकती है। यह मुसलमानों की धरती हो सकती है – किन्तु यह हिन्दुओं और मुसलमानों की धरती, जिसमें दोनों समानता से रहें, नहीं हो सकती फिर, जब इस पर मुसलमानों का शासन होगा तो यह मुसलमानों की धरती हो सकती है। इस समय सन् 1940 में यह देश गैर–मुस्लिम सत्ता के प्राधिकार के अंतर्गत है, इसलिए मुसलमानों की धरती नहीं हो सकती। यह देश दार–उल–इस्लाम होने की बजाए दार–उल–हरब बन जाता है। हमें यह समझ लेना चाहिए कि यह मुसलमानों का दृष्टिकोण केवल कहने भर के लिए नहीं है, बल्कि यह व्यवहार में लाया जाता है। यह सिद्धांत मुसलमानों को प्रभावित करने में बहुत कारगर कारण हो सकता है।

दार–उल–हरब हिन्दुस्तान को दार–उल–इस्लाम बनाने के लिए जिहाद आवश्यक – यह उल्लेखनीय है कि जो मुसलमान अपने आपको दार–उल–हरब में पाते हैं, उनके बचाव के लिए केवल हिजरत ही उपाय नहीं है। मुस्लिम मज़हबी कानून की दूसरी आज्ञा जिहाद है, जिसके तहद हर मुस्लिम शासक का यह कर्तव्य हो जाता है कि इस्लाम के शासन का तब तक विस्तार करता रहे, जब तक कि सारी दुनिया मुसलमानों के नियंत्रण में नहीं आ जाती। संसार को दो खेमों में बांटने की वजह से सारे देश या तो दार–उल–इस्लाम या दार–उल–हरब की श्रेणी में आते हैं। हर मुस्लिम शासक का कर्तव्य है कि वह दार–उल–हरब को दार–उल–इस्लाम में बदल दे; और हिन्दुस्तान में जिस तरह मुसलमानों के

हिजरत का रास्ता अपनाने के उदाहरण हैं, वहाँ ऐसे भी उदाहरण हैं कि उन्होंने जिहाद की घोषणा करने में संकोच नहीं किया। (19वीं शताब्दी में सइद अहमद ने अपने 600 मौलवियों को साथ लेकर महाराजा रणजीत सिंह की फौज से जिहाद किया – लेखक)

<u>विभाजन के बाद भी हिन्दुस्थान में अल्पसंख्यक–बहुसंख्यक की समस्या बनी ही रहेगी</u>: डॉ. अम्बेडकर लिखते हैं कि यह बात स्वीकार कर लेनी चाहिए कि पाकिस्तान बनने से हिन्दुस्तान सांप्रदायिक समस्या से मुक्त नहीं हो जाएगा। सीमाओं से पुनर्निर्धारण करके पाकिस्तान को तो एक सजातीय देश बनाया जा सकता है, परंतु हिन्दुस्तान एक मिश्रित देश ही बना रहेगा। मुसलमान समूचे हिन्दुस्तान में बिखरे हुए हैं – यद्यपि वे मुख्यतः शहरों और कस्बों में केन्द्रित हैं। **चाहे किसी भी ढंग से सीमांकन की कोशिश की जाए, उसे सजातीय देश नहीं बनाया जा सकता। हिन्दुस्तान को सजातीय देश बनाने का एक मात्र तरीका है, जनसंख्या की पूर्ण अदला–बदली की व्यवस्था करना। यह अवश्य विचार कर लेना चाहिए, कि जब तक ऐसा नहीं किया जाएगा, हिन्दुस्तान में बहुसंख्यक बनाम अल्पसंख्यक की समस्या और हिन्दुस्तान की राजनीति में असंगति पहले की ही तरह बनी ही रहेगी।** पाठक डॉ. अम्बेडकर की दूरदर्शिता स्वयं जान सकते हैं : यह पुस्तक सन् 1940 में स्वतंत्रता से 7 वर्ष पूर्व लिखी गई थी। (हिन्दू–मुस्लिम समस्या बरकरार है – लेखक)

<u>मौलाना हुसैन अहमद मदनी</u>

मौलाना हुसैन अहमद मदनी हिन्दुस्तान में मुत्तहिदा कौमियत (हिन्दू मुसलमानों की संयुक्त) के समर्थक थे। वे दार–उल–उलूम देवबंद (उ.प्र.) मदरसा के प्रसिद्ध रेक्टर रहे। उनको एक बड़ा राष्ट्रीय मुसलमान माना जाता है, तथा वे कांग्रेस पार्टी के संसद सदस्य भी रहे।

मौलाना मदनी ने पैगम्बर मोहम्मद का हवाला देते हुए बताया कि जिस प्रकार मदीना पहुँचने पर सन् 623 में पैगम्बर मोहम्मद ने मदीना के यहूदियों से मिलकर संयुक्त कौम और संयुक्त उम्मद (सोसायटी) बनाई और इस संबंध में एक विस्तृत इकरारनामा किया जिसमें यह स्पष्ट कर दिया कि शत्रुओं के विरोध में वे मिलकर काम करेंगे, पर हरेक अपने–अपने मजहब का पाबन्द होगा। उन्होंने कहा कि संयुक्त राष्ट्रीयता (हिन्दुस्तान में–लेखक) से हमारा मतलब उसी संयुक्त राष्ट्रीयता से है जिसकी बुनियाद रसूल (पैगम्बर मोहम्मद) ने मदीना में डाली थी, यानि हिन्दुस्तान के सब रहने वाले चाहे वे किसी धर्म के मानने वाले हों, एक कौम हो जाएं और परदेशी कौम से युद्ध करके अपने अधिकार हासिल करे और उसे निकालकर गुलामी की जंजीरों को तोड़–फोड़ डालें और हरेक किसी दूसरे के

धार्मिक मामलों में, हस्तक्षेप न करें, बल्कि सब हिन्दुस्तानी अपने धार्मिक मामलों में, सिद्धांतों आदि में आज़ाद रहें और अपने धार्मिक रस्मो–रिवाज़ पर आज़ादी से अमल करते हुए, जहाँ तक उनका धर्म इजाजत देता है, शांति और व्यवस्था रखते हुए अपने धर्म का प्रचार करें तथा अपने पर्सनल लॉ तथा कल्चर को महफूज़ रखें। न बहु–संख्यक अल्प–संख्यकों को अपने अंदर हज़म करें और न कोई अल्प–संख्यक किसी दूसरे अल्पसंख्यक या बहु–संख्यक को परेशान करे।

मौलाना मदनी जमायते उल्माए हिन्द के 15 साल तक प्रधान रहे। यह संस्था एक महत्वपूर्ण कांग्रेसी और राष्ट्रीय मुस्लिम संस्था मानी जाती है। जमायते–उल्माए **हिन्द के सालाना अधिवेशन जो लाहौर में सन् 1942 में हुआ, उसमें उसी मौलाना मदनी ने अपने अध्यक्ष पद से बोलते हुए कहा था : ''अत्यंत आवश्यक है कि इस निज़ामे खुदाबन्दी (इस्लामी हुकूमत) को मज़बूती से कायम किया जाए। उलमाए–हिन्द ने सदैव इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए कोशिश की है। परन्तु हाय दुर्भाग्य! वास्तविक उद्देश्य पूरा न हो सका बस .... ज़रूरी प्रतीत हुआ कि दो मुसीबतों में से छोटी मुसीबत के नियम को चुना जाए और हिन्दुस्तान की आजादी के लिए संयुक्त जद्दोजहद में हिस्सा लिया जाए।** ..... और **यद्यपि संयुक्त जद्दोजहद से प्राप्त होने वाली आजादी निजामे इस्लामी (इस्लामी हुकूमत) न कहला सकेगी, फिर भी बहुत सी कठिनाइयों और सख्त रुकावटों के दूर हो जाने से वास्तविक उद्देश्य के लिए रास्ता खुल जाएगा।''**

मदनी साहब सदैव हिन्दुस्तान को इस्लाम के अनुसार दार–उल–हरब मानते रहे। विभाजन के पश्चात भी 1950 में अपने पत्र में उन्होंने अपनी इस भावना को बल पूर्वक स्पष्ट किया। ''हिन्दुस्तान दार–उल–हरब'' है। वह उस वक्त तक दार–उल–हरब रहेगा, जब तक कि इस देश में कुफ्र को गल्बा हासिल रहेगा।'' अर्थात् जब तक इसमें गैर–मुस्लिमों की हुकूमत रहेगी। हिन्दुस्तान जब से इकतदारे–इस्लाम (इस्लामी सत्ता) खत्म हुआ तब से ही दार–उल–हरब है। ..... जुमा (जुमे की नमाज़) दार–उल–हरब में यकीनन होता है और फर्ज है। (ब्रजभूषण भटनागर : धर्म परिवर्तन : पृ. 5)

दार–उल–हरब में रहते हुए मुसलमानों का क्या कर्तव्य होता है, वे उसको भी स्पष्ट करते हैं : ''जब सल्तनत हासिल न हो, अहाद (मुस्लिम व्यक्तियों) का फरीज़ा (कर्तव्य) सिर्फ यह होगा कि अपनी ताकत के अनुसार सिर्फ इसकी जद्दोजहद करें कि इस्लामी हुकूमत कायम हो (अल–जमीयत जनवरी 1972)

1940 में जमीयते–उल्माये हिन्द के सालाना अधिवेशन में उन्होंने पाकिस्तान के बारे में अपने विचार प्रस्तुत किए। उन्होंने कहा ''अगर इसका (पाकिस्तान का) मतलब हुकूमत अली मिनहाज़–उल–नबूबत जिसमें तमाम अहकम इस्लामी हदूद

व किसास वगैरह जारी हों, मुस्लिम अक्सरियत वाले सूबों में कायम करना है तो माशाअल्लाह निहायत मुबारिक स्कीम है। कोई भी मुसलमान इसमें गुफ़्तगू नहीं कर सकता, मगर मौजूदा हालत में इस चीज़ की कल्पना नहीं की जा सकती'' (ब्रजभूषण भटनागर : धर्म परिवर्तन : पृ. 6)

स्पष्ट है कि मौलाना हुसैन अहमद मदनी सिद्धांतः पाकिस्तान के विरोधी नहीं थे, उनका विरोध इस कारण था कि वह उसका निर्माण कल्पना से भी बाहर समझते थे। उनके विरोध का दूसरा कारण यह था कि वह पूरे भारत का इस्लामीकरण और उस पर शरीयत शासन स्थापित करना मुसलमानों का अधिकार समझते थे। **उनको भय था कि विभाजन के बाद हिन्दुस्तान का इस्लामीकरण असंभव हो जाएगा। उन्हें क्या पता था कि यहाँ हमारे पंथनिरपेक्ष जनतांत्रिक हिन्दुस्तान में इस्लाम की जड़ें पाकिस्तान से भी अधिक गहरी होंगी तथा इस्लाम हिन्दुस्तान में फूले फलेगा।**

मौलाना मदनी दूसरे राष्ट्रीय मुस्लिम नेताओं के साथ बोलते यह थे कि एक मिलीजुली कौमियत भारत में स्थापित हो सकती है और इसके लिए पैगम्बर मोहम्मद ने जो मदीना में यहूदियों के साथ सन् 623 में संधि की थी उसकी याद दिलाते रहे। उसी संधि को वह भारत में हिन्दू–मुसलमानों की संगठित राष्ट्रीयता के उदाहरण के रूप में पेश करते थे। शायद उन्हें यह भरोसा था कि हिन्दू तो इस्लाम के इतिहास से अपरिचित हैं। मौलाना मौदूदी ने इस संधि के बारे में स्पष्ट किया हुआ है तथा मदनी साहब द्वारा इस प्रकार इस्लामी इतिहास को तोड़ना मरोड़ना उन्हें सहन नहीं हुआ। उन्होंने मदनी साहब के विरोध में लिखा : ''मदीने के इकरार नामे को आजकल की राजनीतिक भाषा में ज़्यादा से ज़्यादा मिलिट्री एलाएन्स कह सकते हैं।'' उन्होंने लिखा कि ''इकरार नामे के अनुसार यहूदी अपने दीन पर और मुसलमान अपने दीन पर बने रहेंगे। दोनों की राजनीतिक हैसियतें अलग रहेंगी। 2–3 साल के अन्दर ही इस इकरार–नामे का खातमा हो गया। (पृष्ठ 205–206 देखें) मौलाना मौदूदी ने लिखा कि क्या इसी का नाम संयुक्त राष्ट्रीयता है ?'' उन्होंने पूछा कि '' क्या वहाँ कोई संयुक्त स्टेट बनायी गई थी ?

मौलाना मदनी जानते थे कि इस्लाम के वास्तविक स्वरूप से अनभिज्ञ हिन्दुओं को तो बहकाया जा सकता है, परन्तु मौलाना मौदूदी जैसे इस्लाम के विद्वान को नहीं। उन्होंने इस विवाद के हानिकारक प्रचार से बचने के लिए यही उत्तम समझा कि वास्तविकता को स्वीकार कर लिया जाए। उन्होंने मौदूदी के उत्तर में स्वीकार किया कि ''मिश्रित कौमियत अर्थात् आज़ादी तथा समृद्धि के लिए मिलजुल कर कोशिश करना एक विशेष मामला है, जिसका ताल्लुक सिर्फ सर ज़मीने हिन्द और उसके बसने वालों से है और सांसारिक जीवन में केवल एक अस्थायी और अवास्तविक चीज़ है और जब तक किसी मुल्क में भिन्न कौमें और मज़हब बसते

हैं, तभी तक उसकी ज़रूरत है। **सब के सब मुसलमान हो जाने के बाद जो सबसे पहला और असली ध्येय है यह बाकी नहीं रहती।**'' (मुकुट बिहारी लाल : भारत का राष्ट्रीय आन्दोलन भाग–2, पृ. 569) (असली लक्ष्य हुआ – हिन्दुस्तान का इस्लामीकरण – लेखक)

सैयद अबू आला मौदूदी

मौलाना सैयद अबू आला मौदूदी भारत में जन्मे तथा **बीसवीं शताब्दी के सर्वश्रेष्ठ इस्लामी आलिम माने जाते हैं। स्वतंत्रता के बाद वह पाकिस्तान चले गए।** मौलाना मौदूदी ने सन् 1933 में एक लेख लिखा जिसमें देश, नस्ल और भाषा पर आधारित कौमियत (मिश्रित कौमियत–लेखक) को इस्लाम मज़हब के विरुद्ध बताते हुए मज़हबी विश्वासों पर आधारित इस्लामी कौमियत को प्रतिपादित किया था।

मौलाना मौदूदी ने बताया कि जिन अर्थों में आजकल कौमियत शब्द का प्रयोग होता है उन अर्थों में काफिरों (हिन्दुओं–लेखक) मशरिकों और मुसलमानों का एक कौमियत में जमा होने की बात कुरान शरीफ में कहीं भी ठीक नहीं बताई गई। मौदूदी साहब ने लिखा कि कौमियत के मौजूदा सिद्धांत की पुष्टि में कौम के पुराने प्रयोगों को प्रस्तुत करना महज़ (केवल) एक मुगालता (भ्रांति) है और इसके सिवा कुछ नहीं।

अपने मार्च, सन् 1939 के लेख में मौलाना मौदूदी यह भी फरमाते हैं कि इस्लाम और नेशनलिज़्म (राष्ट्रवाद) दोनों स्पिरिट और अपने मकासद (उद्देश्यों) के लिहाज़ से एक दूसरे की ज़िद (विरोधी) हैं। उन्होंने कहा कि जहाँ नेशनलिज़्म है वहाँ इस्लाम कभी फल–फूल नहीं सकता। जहाँ इस्लाम है, वहाँ नेशनलिज़्म के लिए कोई जगह नहीं। नेशनलिज़्म की तरक्की के मायने (अर्थ) यह है कि इस्लाम के फैलने का रास्ता बंद हो जाए और इस्लाम के मायने यह हैं कि नेशनलिज़्म जड़ बुनियाद से उखड़ जाए। अब यह ज़ाहिर है कि एक शख्स एक वक्त में इन दोनों में से किसी एक की ही तरक्की का हामी हो सकता है। यह किसी तरह मुमकिन नहीं कि वे एक वक्त दोनों किश्तियों पर सवार रह सकें। एक मसलक (प्रथा) की पैरवी का दावा करना और फिर साथ ही उसके मुखालिफ (विरुद्ध) मसलक की वकालत या हिमायत (समर्थन) करना साफ तौर पर नज़र के उलझावों और जहन की परागन्दी (घबराहट) का पता देता है और जो लोग ऐसी बातें करते हैं उनके मुतअल्लिक (संबंध में) मजबूरन हमें यह राय कायम करनी पड़ती है कि वे या तो इस्लाम को नहीं समझते या नेशनलिज़्म को या दोनों से नावाकिफ (अनभिज्ञ) हैं।

काफी विस्तार के साथ हिन्दुस्तानी नेशनलिज़्म पर अपने विचार व्यक्त करते हुए **मौलाना मौदूदी ने कहा कि हिन्दुस्तान में राजनीतिक राष्ट्रीयता है, पर सांस्कृतिक राष्ट्रीयता नहीं है,** और यह यहाँ कायम भी नहीं हो सकती,

क्योंकि हिन्दुस्तानी राष्ट्रीयता के समर्थक न तो सब कौमों पर विजय प्राप्त कर किसी एक कौम की संस्कृति को सारे हिन्दुस्तान की राष्ट्रीय संस्कृति का स्वरूप दे सकते हैं और न वे सब संस्कृतियों की विशेषताओं से एक मुश्तरका तहजीब (संयुक्त संस्कृति) कायम कर सकते हैं।

अप्रैल, सन् 1939 में मौलाना मौदूदी ने इस्लामी कौमियत पर एक और लेख लिखा। उसमें उन्होंने कहा कि कुरआन सारे संसार की पूरी आबादी में केवल दो ही पार्टियां देखता है, अल्लाह की पार्टी (हज़बेअल्लाह) और दूसरी शैतान की पार्टी (हज़बे–उल–शैतान) शैतान की पार्टी में ख्वाह (चाहे) बाहम उसूल (पारस्परिक सिद्धांत) और मसलक (प्रथा) के एतबार से कितने ही इखतिलाफ (मतभेद) हों, कुरआन इन सबको एक समझता है, क्योंकि उनका सोचने के ढंग और काम करने का ढंग बहरहाल इस्लाम नहीं है और जुजई इखतिलाफात (आंशिक भेदों) के बावजूद बहरहाल वे सब शैतान की आज्ञा मानने वाले हैं।

मौलाना मौदूदी ने सन् 1941 में कांग्रेस के मुसलमान नेताओं और मुस्लिम लीग के दृष्टिकोण और गतिविधि की बहुत कड़ी आलोचना करते हुए ''जमायते इस्लामी'' स्थापित की जिसका उद्देश्य ''हुकूमते इलाहिया'' का कयाम और आखिरत में रजाए इलाही का हसूल (प्राप्ति) करार दिया। इस जमायत के लक्ष्य का विश्लेषण करते हुए बताया गया कि हुकूमते इलाहिया से अभिप्राय अल्लाह की शरीय हुकूमत (शरीया पर आधारित) का कायम करना है जिसका संबंध सिर्फ इंसान से और इंसान की जिन्दगी के भी उस हिस्से से है जिसमें अल्लाह ने इंसान को अधिकार प्रदान किया है। मोमिन (मुसलमानों) की जिन्दगी का मिशन यह है कि जिस तरह खुदा का कानूने तकबीनी (सृष्टि के नियम) तमाम विश्व में चालू हो, इसी तरह खुदा का कानूने शरयी (विधान) भी आलम इंसानी से नाफिज़ हो। **उन्होंने कहा कि यह काम फिलहाल तो नसीहत, फहमायश (उपदेश, चेतावनी) तरगीब (प्रेरणा, प्रलोभन) तबलीग (प्रचार) से ही करना होगा, लेकिन जो मुल्के खुदा के नजायज मालिक बन बैठे हैं और खुदा के बंदों को अपना सेवक बना लेते हैं, वे अमूमन अपनी खुदा बन्दी (प्रभुत्व) से महज़ नसीहतों की बिना (आधार) पर अलग नहीं हो जाया करते और न वह इसको सहन करते हैं कि जनता में हकीकत का इल्म फैले, क्योंकि इससे उनको खतरा होता है कि उनकी खुदा बंदी (प्रभुत्व) स्वयं खत्म हो जाएगी। इसलिए मोमिन को मजबूर जंग (जिहाद) करना पड़ता है ताकि हुकूमते इलाहिया की स्थापना में जो चीज़ रास्ते में बाधा हो उसे रास्ते से हटा दें।**

पाठकों को विदित है कि पैगम्बर मोहम्मद ने मदीना पहुँचने पर वहाँ के यहूदियों के साथ एक इकरारनामा किया था। मौलाना मौदूदी इस इकरारनामे के

संबंध में फरमाते हैं कि उसको आजकल की राजनीतिक भाषा में ज़्यादा से ज़्यादा फौजी अलाएन्स कह सकते हैं। उन्होंने लिखा कि इकरारनामें के अनुसार यहूदी अपने दीन (धर्म) पर रहेंगे और मुसलमान अपने दीन पर रहेंगे, दोनों की राजनीतिक हैसियतें अलग रहेंगी, अलबत्ता एक पार्टी पर जब कोई हमला करेगा, तब दोनों पार्टियां मिल कर लड़ेंगी और दोनों इस जंग में अपना–अपना माल मिलाकर खर्च करेंगे। **दो–तीन साल के अंदर ही इस इकरारनामे का खातमा हो गया और मुसलमानों ने कुछ यहूदियों को जलावतन (देश निकाला) और कुछ को हलाक कर दिया (मार डाला)।** वह मौलाना हुसैन अहमद मदनी के विचारों को खण्डित करते हुए पूछते हैं कि क्या इसी का नाम संयुक्त राष्ट्रीयता है ? क्या वहाँ कोई विधानसभा बनाई गई थी और यह निश्चय हुआ था कि यहूदी और मुसलमान एक समूह होंगे और इस समूह में से जिसकी बहुसंख्या होगी, वही मदीने पर हुकूमत करेगा और उसके मंजूर किए हुए कवानीन (निर्णय) मदीने में लागू होंगे? क्या वहाँ मुश्तरका अदालते कायम हुई थीं, जिनमें यहूदियों और मुसलमानों के विवादों का एक ही मुल्की कानून के अंतर्गत फैसला होता था। मौलाना मौदूदी ने अपने विचार व्यक्त करते हुए फरमाया कि मौलाना हुसैन अहमद मदनी को अपनी बात के लिए **इकरारनामा या संघ या इसी किस्म का कोई मुनासिब लफज़ इस्तेमाल करना चाहिए था।**

मोहम्मद अली जिन्ना

2 मार्च 1940 को मोहम्मद अली जिन्ना की अध्यक्षता में लाहौर में मुस्लिम लीग का वार्षिक अधिवेशन संपन्न हुआ। अपने अध्यक्षीय भाषण में उन्होंने कहा कि हज़ारों वर्षों के निकट संपर्क के बावजूद जो कौमें आज भी सदा की तरह भिन्न हैं उन्हें लोकतांत्रिक संविधान के अधीन रखकर या ब्रिटिश कानूनों के अप्राकृतिक और कृत्रिम तरीकों से जबरदस्ती साथ रखकर किसी भी समय एक राष्ट्र में बदला नहीं जा सकता। जिस कौम को 150 वर्षों में एकात्मक सरकार नहीं कर पायी, उसे केन्द्रीय संघीय सरकार के आरोपण से प्राप्त नहीं किया जा सकता। यह सोचा नहीं जा सकता कि इस तरह की संगठित सरकार के आदेश या आज्ञा सारे उपमहाद्वीप में विभिन्न कौमों की, सैनिक सहायता के बिना, कभी भी स्वैच्छिक या निष्ठायुक्त आज्ञाकारिता प्राप्त कर सकती है।

जिन्ना साहब ने कहा कि इस्लाम और हिन्दुत्व वास्तव में दो धर्म नहीं बल्कि भिन्न और सुस्पष्ट सामाजिक व्यवस्थाएं हैं। हिन्दू और मुसलमान, दो भिन्न धार्मिक दर्शनों, सामाजिक प्रथाओं और साहित्य से संबंध रखते हैं। वे निःसंदेह दो भिन्न सभ्यताओं से संबंधित हैं, जो प्रधानतः परस्पर विरोधी तत्वों और धारणाओं पर आधारित हैं। जीवन के संबंध में उनके दृष्टिकोण भिन्न हैं। हिन्दू और मुसलमान इतिहास के दो भिन्न स्रोतों से अपनी प्रेरणा प्राप्त करते हैं। उनकी वीर गाथाएं भिन्न

हैं। उनके वीर भिन्न हैं। उनके उपासना स्थान भिन्न हैं। बहुधा एक का वीर दूसरे का शत्रु है। ऐसे दो राष्ट्रों को एक राष्ट्र में जोत देना, एक अल्पसंख्यक और एक बहुसंख्यक बढ़ते हुए असंतोष का तथा उस ढाँचे के आखरी विनाश का कारण होगा, जिसे ऐसे राज्य की सरकार के लिए निर्माण किया गया है।

जिन्ना साहब ने कहा कि मुसलमान अल्पसंख्यक नहीं हैं; मुसलमान तो राष्ट्र की प्रत्येक परिभाषा के अनुसार राष्ट्र हैं और उन्हें अपना स्वदेश, राज्य क्षेत्र और राज्य मिलना चाहिए।

24 मार्च 1940 को मुस्लिम लीग ने अपनी कौंसिल और नेता के पुराने निर्णयों को अनुमोदित करते हुए तथा अखिल भारतीय संघ के सिद्धांत को नामंजूर करते हुए मुसलमानों के लिए पृथक स्वदेश और स्वतंत्र राष्ट्रीय राज्यों की स्थापना की मांग की। इस प्रस्ताव के साथ–साथ मुस्लिम लीग ने धर्म को राष्ट्रीयता का आधार स्वीकार करते हुए, मुस्लिम राष्ट्र के सिद्धांत को पुष्ट किया।

धीरे–धीरे देश के बंटवारे तथा पाकिस्तान बनाने का निर्णय ले लिया गया। डॉ. अम्बेडकर का हिन्दू–मुस्लिम आबादी की अदला–बदली का भी सुझाव आया किन्तु हिन्दू नेतृत्व ने इसे अस्वीकार किया और गाँधी जी ने आमरण उपवास के द्वारा यह सुनिश्चित किया कि मुसलमान इस देश में न केवल समान नागरिक बन कर रहेंगे बल्कि उन्हें अपने मत प्रचार द्वारा हिन्दुओं के धर्मान्तरण का भी मूल अधिकार होगा और वे अपने बच्चों को अबाध रूप से मज़हब के नाम पर ऐसी शिक्षा देने को स्वतंत्र होंगे जिससे उसी मानसिकता का निर्माण होता है जिसने पाकिस्तान बनवाकर भारत के 1/3 भाग का इस्लामीकरण किया। इस निर्णय के गंभीर परिणाम आज 62 वर्ष के बाद स्पष्ट देखे जा सकते हैं।

डॉ. मोहम्मद इकबाल

डॉ. इकबाल जाने–माने उर्दू के शायर थे। साथ–साथ वे उन व्यक्तियों में से थे जिन्होंने भारत की राजनीति में जमकर भाग लिया। वे इस्लामियत और यूरोपियन दर्शन शास्त्र के विद्वान् तथा फारसी और उर्दू के प्रतिष्ठित शायर थे। अपने जीवन के प्रारंभिक काल में वे सच्चे राष्ट्रवादी थे। इस काल में उन्होंने जो नज़्में लिखीं, वे भारतीय राष्ट्रीयता की भावना से प्रेरित थीं। उन्होंने हिन्दुस्तानी भावनाओं से अनुप्रमाणित एक नज़्म में लिखा था कि

हिन्दी हैं हम, वतन है हिंदोस्तां हमारा,

यूनान मिस्र रोमां सब मिट गये जहाँ से,

कुछ बात है कि हस्ती मिटती नहीं हमारी।

यह इतनी मुख्य नज़्म है जिसे सारा हिन्दुस्तान दिन–रात दोहराकर मोहम्मद इकबाल की प्रशंसा निरंतर करता है। सन् 1906 से उन्होंने इंग्लैण्ड और यूरोप का

दौरा किया जहाँ वे लगभग 3 वर्ष भ्रमण करते रहे। वहाँ उन्होंने देखा कि यूरोप के विभिन्न राष्ट्र अपने आधिपत्य के विस्तार के लिए एक–दूसरे के खून के प्यासे हो रहे हैं। इन तीन वर्ष के यूरोप में रहने पर उनकी राजनीतिक धारणाओं में भारी तबदीली हो गई। वे स्वयं कहते हैं, यूरोप की आबोहवा ने मुझे मुसलमान कर दिया। इस्लामियत के गूढ़ अध्ययन ने उनकी इस भावना को पुष्ट किया। **सन् 1908 में भारत में लौटते–लौटते डॉ. इकबाल भारतीय राष्ट्रीयता के कट्टर विरोधी और इस्लामी भ्रातृत्व के प्रचारक बन गए।**

जहाँ पहले वे कहते थे ''हिन्दी हैं हम वतन है हिंदोस्तां हमारा'' अब कहने लगे ''मुस्लिम हैं हम, वतन सारा जहाँ हमारा'' (कुलयात इकबाल, पृ. 130) इन्हीं इकबाल महाशय ने सबसे पहले (पाकिस्तान की कल्पना की तथा उसकी रूपरेखा बनाने में अग्रणी रहे। बाद में उन्होंने लिखा –

चीनों अरब हमारा, हिन्दोस्ताँ हमारा।

मुस्लिम हैं हम, वतन हैं सारा जहाँ हमारा।।

तौहीद की अमानत, सीनों में है हमारे।

आसाँ नहीं मिटाना, नामों निशां हमारा।।

तेगों के साये में हम, पल कर जवाँ हुए हैं।

खंजर हलाल का है, कौमी निशाँ हमारा।।

इस प्रकार इकबाल जैसे 'राष्ट्रवादी शायर' कहे जाने वाले मुस्लिमों ने अन्दर ही अन्दर मुस्लिम कट्टरवाद पनपाने में पूरी शक्ति लगाई। उन्हीं इकबाल की पंडित जवाहरलाल नेहरू प्रशंसा करते हुए नहीं थकते थे।

उन्होंने कौमी विभिन्नताओं की आलोचनाआ करते हुए फरमाया कि इस्लाम का लक्ष्य केवल मिल्लते आदम अर्थात् मानव मात्र की एकता है। उन्होंने मुसलमानों को संबोधित करते हुए फरमाया कि उनसे दुनिया की इमामत (मज़हबी नेतृत्व) का काम लिया जाएगा। (उपरिवर्णित उनके बदले हुए विचारों को पाठकों ने किसी से न सुना होगा–लेखक)

इस्लाम पर उनकी दृढ़ आस्था थी। उनकी धारणा थी कि मज़हब जीवन के किसी एक विभाग तक सीमित नहीं है, वह तो मानव की अभिव्यंजना है। सर सैयद अहमद खां की तरह डॉ. इकबाल भी तकलीद (अनुसरण) और तकदीर (भाग्य) के विरोधी और तदवीर (प्रयत्न) के समर्थक थे।

डॉ. इकबाल की दृढ़ धारणा थी कि ज़मीन बादशाहों की नहीं, अल्लाह की है। जावेदनामा में इकबाल फरमाते हैं कि खुदा ने ज़मीन हमें मुफ्त दी है और हम सब की वह सामूहिक जायदाद है। वास्तव में हम सब इसके ट्रस्टी हैं। उससे रोज़ी

प्राप्त की जा सकती है। उस पर कब्र बनाई जा सकती है। पर कोई व्यक्ति उस पर मिल्कियत का दावा नहीं कर सकता। जो ऐसा करता है, वह काफिर है और संसार में विनाश की जड़ है। (जावेदनामा, पृ. 80–81)

डॉ. इकबाल का राजनीतिक दृष्टिकोण

दिसम्बर 1930 में मुस्लिम लीग का प्रयाग अधिवेशन डॉ. इकबाल की अध्यक्षता में संपन्न हुआ। अपने अध्यक्षीय भाषण में उन्होंने मांग की कि पंजाब, उत्तर–पश्चिम सीमा प्रांत, सिंध और बलुचिस्तान को एक राज्य में सम्मिलित कर दिया जाए। उन्होंने कहा कि उनकी दृष्टि में ब्रिटिश साम्राज्य के अंदर हो या ब्रिटिश साम्राज्य के बाहर, स्वशासित सम्मिलित उत्तर–पश्चिम भारतीय राज्य का निर्माण ही कम से कम उत्तर–पश्चिम भारत के मुसलमानों की अंतिम भवितव्यता है। (शामलू, स्पीचेज एण्ड स्टेटेमेंट्स आव्र इकबाल, पृ. 12) इसी विचारधारा से पाकिस्तान की नींव पड़ी।

डॉ. इकाबल ने राष्ट्रीयता के संबंध में अपने विचार रखे। उनकी धारणा थी कि हमारे लिए भारतीय राष्ट्रीयता के हित में अपने राष्ट्रीय भाग्य को मोहरबंद कर देना आने वाली नस्लों के प्रति कपट, अपने मुस्लिम इतिहास के प्रति विश्वासघात और मानव समाज के विरुद्ध अपराध है जिससे कोई छुटकारा नहीं है। (वही) **इस प्रकार डॉ. इकबाल ने भारतीय राष्ट्र के विचार को अस्वीकार करते हुए मुस्लिम मिल्लत के सिद्धांत की पुष्टि की।** मुस्लिम बहुसंख्यक देशों में इस्लाम राष्ट्रीयता को समायोजित (अकोमोडेट) कर सकता है, क्योंकि वहाँ इस्लाम और राष्ट्रीयता एक ही हैं। उन देशों में जहाँ मुसलमान अल्पसंख्यक हैं (जैसे भारत–लेखक) एक सांस्कृतिक ईकाई के रूप में आत्मनिर्णय मांगने में यह न्यायसंगत है। दोनों हालतों में यह बिल्कुल सुसंगत (कनसिस्टेन्ट) है। स्पष्ट है कि डॉ. इकबाल के विचारों में जहाँ गैर–मुस्लिमों की संख्या बहुत थोड़ी है वह वतनियत के आधार पर संयुक्त राष्ट्रीयता का समर्थन करने को तैयार थे क्योंकि उन्हें विश्वास था कि वहाँ पर इस्लामी संस्कृति और सभ्यता ही छाई रहेगी। उसी के संदर्भ में सब निर्णय होंगे। इसके विपरीत उन मुल्कों में जहाँ मुसलमान अल्पसंख्यक हैं (भारत में–लेखक), वतनियत की बुनियाद पर मुसलमानों और गैर–मुस्लिमों की संयुक्त राष्ट्रीयता उन्हें इस्लामी संस्कृति और सभ्यता के लिए घातक दिखाई देती थी और वे उसके लिए तैयार नहीं थे चाहे उस संयुक्त राष्ट्रीयता से कितनी ही राजनीतिक और आर्थिक उपलब्धियां संभव हों। उनके विचार में इन मुल्कों के मुसलमानों को यह याद रखना चाहिए कि इस्लाम कौमियत की बजाए इस्लामी मिल्लत का समर्थक है। (स्वतंत्रता के बाद पाकिस्तान, बांग्लादेश तथा वर्तमान भारत की राजनीतिक परिस्थितियों के परिप्रेक्ष्य में पाठक स्वयं डॉ. इकबाल के विचारों की सत्यता की पुष्टि कर सकते हैं– लेखक)

डॉ. इकबाल सहित सभी मुसलमानों की दृष्टि में कुरआन शरीफ खुदा का आखरी इलहाम, हज़रत मुहम्मद ही खुदा के आखरी पैगम्बर, इस्लाम ही खुदा का आखरी पैगाम और दूसरे पंथ उसी हद तक ठीक हैं, जिस हद तक वे इस्लाम के बुनियादी सिद्धांतों से मेल खाते हैं। परन्तु दूसरे पंथों के मानने वाले इस्लाम के इस दावे को स्वीकार नहीं करते और न ही इसे स्वीकार करने के लिए तैयार हैं।

डॉ. इकबाल के विचारों के अनुसार नस्ल और देश की बजाए मज़हब ही राष्ट्रीयता के आधार हैं।

कुछ दूसरे मुस्लिम नेताओं के विचारों के अंश

इण्डियन यूनियन मुस्लिम लीग के प्रधान इब्राहिम सुलेमान सेत ने 14 अप्रैल 1982 को हैदराबाद (भारत) में कहा कि : ''14वीं सदी गुज़र चुकी है और 15वीं सदी का आगाज़ हो गया है। 14वीं सदी आखिरी का जो निस्फ दौर था इसमें इस्लमी तहरीकें उठीं। इस्लामी शख्सीयतें पैदा हुईं–शाहवली उल्ला, सैयद अहमद शहीद, सैयद कुत्ब, अल्लामा इकबाल और सबसे बढ़कर मौलाना मौदूदी जैसी शख्सीयतें सामने आईं। इनकी तहरीकों की वजह से हमारे अंदर यह यकीन पैदा हो गया है कि इस्लाम चंद इबादतों का संग्रह नहीं है, बल्कि एक निज़ामे हयात (जीवन विधि) है जो जिन्दगी के तमाम शोबों पर हावी है। और हमारे पास सियासत व मज़हब में कोई भेद नहीं किया जा सकता–यह सदी इस्लाम की पुनर्स्थापना की सदी है। इस्लाम के वैभव की सदी है और फिर इसके साथ–साथ अर्ज़ करूँगा कि जहाँ तक यहाँ (भारत पर) इस्लाम की तरक्की के लिए और बातें होनी चाहिएं वहीं हमारे मिल्लीवजूद के लिए दीन व शरियत का तहाफ्फुज़ भी ज़रूरी हो जाता है और फिर इसके साथ–साथ इकामतेदीन के फर्ज को अदा करना है।

ब्रिटिश शासन काल में उलेमाओं में इस विषय पर मतभेद था कि संपूर्ण भारत के इस्लामीकरण के लिए पाकिस्तान बनना उत्तम है अथवा अंग्रेज़ों से स्वतंत्रता प्राप्त करने के लिए हिन्दुओं का साथ देना। यह जान लेना आवश्यक है कि यह विभिन्न विचार केवल भारत के संपूर्ण इस्लामीकरण के मार्ग चुनने से संबंधित था। मंज़िल हासिल करने में कोई मतभेद न था। **सभी उलेमाओं की मंजिल थी, संपूर्ण भारत का इस्लामीकरण।** इन दो विपरीत विचार धाराओं को स्पष्ट करने के लिए निम्नलिखित विचार प्रासंगिक होंगे :–

1. एफ.के.दुर्रानी ने पाक–समर्थकों के विचार स्पष्ट करते हुए अपनी पुस्तक **''मीनिंग ऑफ पाकिस्तान''** में लिखा है कि : ''पाकिस्तान का निर्माण इसलिए आवश्यक था क्योंकि उसको शिविर बनाकर शेष भारत का इस्लामीकरण किया जाए। भारत, संपूर्ण भारत हमारी बपौती (विरासत) है और उसे फिर से इस्लाम के लिए विजय किया जाना चाहिए।'' (इन द पाथ

ऑफ गॉड–डेनियल पाइप्स, पृ. 163)

2. पाक विरोधी उलेमा के मंतव्य को मौलाना अहमद हुसैन मदनी ने स्पष्ट किया है कि धर्म परिवर्तन के क्षेत्र में गैर–मुस्लिम ही तो हमारी इस गौरवशाली क्रिया के कच्चे माल है।। हम अपने इस मिशनरी कार्य को भारत के किसी विशिष्ट भाग (केवल पाकिस्तान) तक सीमित करने के विरुद्ध हैं। हमारे पूर्वजों के बलिदान के कारण भारत के प्रत्येक कोने पर हमारा बराबर का अधिकार है। हमारा कर्तव्य है कि हम इस अधिकार के क्षेत्र को घटाने के स्थान पर बढ़ाएं।

3. मौलाना मौदूदी यूं तो पाकिस्तान विरोधी थे परन्तु उपरिवर्णित दृष्टिकोणों को स्पष्ट करते हुए लिखा है कि ''हम तो पूरे भारत को ही इस्लाम की भूमि बनाने में कृत संकल्प थे। फिर इस्लाम के नाम पर किसी देश (पाकिस्तान) के निर्माण का विरोध कैसे कर सकते थे।''

मौलाना अबुल कलाम आजाद

इस्लाम का राजनीतिक सत्ता पर सीधा–सीधा अधिकार होना आवश्यक है इसलिए मौलाना अबुल कलाम आजाद का मुसलमानों को यह बताना ठीक ही है कि ''भारत जैसे देश को जो एक बार मुस्लिम शासन में रह चुका है कभी भी त्यागा नहीं जा सकता। मुसलमानों को अपना खोया हुआ आधिपत्य प्राप्त करने के लिए निरंतर प्रयास करना चाहिए। (नंदा : गांधी, पैन इस्लामिज़्म इम्पीरियलइज़्म एंड नेशनलिज़्म, पृ. 117)

हकीम अजमल खां

सन् 1921 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अध्यक्ष हकीम अजमल खां ने अहमदाबाद में बोलते हुए स्पष्ट किया था : ''एक ओर एशिया माइनर और दूसरी ओर हिन्दुस्तान भविष्य में बनने वाले इस्लामी महासंघ रूपी जंजीर की दो छोर कड़ियां हैं जो धीरे–धीरे किन्तु निश्चय ही बीच के सब राज्यों को समेटती हुई एक बड़ा राज्य तंत्र बनने जा रही है।''

डॉ. सैफउद्दीन किचलू

सन् 1925 में डॉ. किचलू ने स्पष्ट शब्दों में हिन्दुओं को निम्नलिखित चेतावनी दी थी।

'एक बात मैं स्पष्ट घोषित करता हूँ। सुनो ! मेरे प्यारे हिन्दू भाइयों सुनो ! पूरे ध्यान से सुनो ! यदि आप हमारे तनज़ीम (धर्म परिवर्तन) के

प्रोग्राम में अड़चन डालते हो, तथा हमारे इस अधिकार को नहीं देते, तो हम अफगानिस्तान या अन्य किसी दूसरी मुस्लिम शक्ति के साथ मिलकर इस देश में अपना राज्य स्थापित कर लेंगे।'' (रामगोपाल : इण्डियन मुस्लिम : पृ. 166)

मौलाना अकबर शाह खां

सन् 1925 में हिन्दुओं और मुसलमानों में मतभेद हुआ कि सन् 1761 में पानीपत का तीसरा युद्ध किसने जीता। मुसलमानों का दावा था कि अफगानिस्तान के बादशाह अहमदशाह अब्दाली के साथ एक लाख सेना थी और इसके विपरीत मराठाओं की सेना 4–6 लाख थी। हिन्दुओं ने कहा कि यह उनकी जीत थी – हारे हुओं की जीत – क्योंकि इसने भविष्य में विदेशी मुस्लिमों द्वारा भारत पर आक्रमण पर विराम लगाया। स्पष्ट है कि मुसलमान अपनी हार हिन्दुओं द्वारा कैसे मानते और दावा किया कि वे सर्वदा ही हिन्दुओं से श्रेष्ठ हैं। अपने दावे को साबित करने के लिए नज़ीबाबाद के मौलाना अकबर शाह खान ने प्रस्ताव रखा कि हिन्दू और मुसलमान एक युद्ध का प्रदर्शन करें, जिसे पानीपत का चौथा युद्ध कहा जाए। मौलाना साहब ने पंडित मदन मोहन मालवीय को एक चुनौती लिख कर भेजी।

''मालवीय जी यदि आप सच्चाई को छुपाना चाहते हैं तो मैं आपके समक्ष एक बड़ा आसान प्रस्ताव रखता हूँ कि जिससे परीक्षा हो सके। उन्होंने लिखा कि आप ब्रिटिश शासन से इस प्रस्तावित पानीपत के चौथे युद्ध की अंग्रेज़ी सरकार से स्वीकृति लें। मौलना ने कहा कि (उस समय) भारत में मुसलमान 7 करोड़ हैं तथा हिन्दू 22 करोड़। प्रस्ताव किया कि उस अनुपात में 700 मुसलमान 2200 हिन्दुओं से युद्ध करेंगे। यह युद्ध बंदूकों, बमों और गोला बारूद से न होकर केवल तलवारों, भालों और तीर–कमानों से होगा। मौलाना ने कहा कि मैं इस युद्ध में पठानों अथवा अफगानों को न बुलाकर केवल हिन्दुस्तान के मुसलमानों से ही युद्ध करवाऊँगा जो शरियत के पुजारी होंगे।'' (थॉट्स ऑन पाकिस्तान : बी आर अम्बेडकर, पृ. 303–304) (मुसलमानों की मानसिकता स्पष्ट दिखती है–लेखक)

ख्वाजा हसन निजामी

सन् 1928 में ख्वाजा हसन निजामी ने एक पत्रक निकाला जिसमें कहा गया ''मुसलमान हिन्दुओं से भिन्न हैं; वे हिन्दुओं से नहीं मिल सकते। अनेक खून खराबों की लड़ाइयों द्वारा मुसलमानों ने भारत को जीता, अंग्रेज़ों ने उन्हीं से भारत को लिया। मुसलमान एक संयुक्त राष्ट्र हैं और केवल वे ही हिन्दुस्तान के मालिक हैं। वे अपना अस्तित्व कभी नहीं खोएंगे। उन्होंने भारत पर सैंकड़ों वर्षों तक राज्य किया और इसी कारण यह उनका इस देश पर अधिकार है। हिन्दू तो विश्व में केवल थोड़ी ही संख्या में हैं। उनमें आपसी अनेक झगड़े हैं; वे अहिंसावादी गांधी को मानते हैं तथा गाय की पूजा करते हैं; दूसरे के हाथों से पानी पीने पर उनका धर्म नष्ट हो

जाता हैं। हिन्दु स्वयं की सरकार बनाने में कोई चिन्ता नहीं करते। क्योंकि उनके पास इसके लिए कोई समय नहीं : वे अपने झगड़ों में ही लगे रहें। उनके पास राज करने की क्या क्षमता है ? मुसलमानों ने राज किया है और वे ही पुनः राज करेंगे। (थॉटस ऑन पाकिस्तान : बी आर अम्बेडकर, पृ. 303)

फजल करीम खां दुर्रानी :

दुर्रानी ने 1940 में लिखा कि हिन्दुस्तान, समस्त हमारी पूंजी है और इसको अवश्य ही पुनः इस्लाम के लिए जीतना है। (In the path of God : Daniel Pipes, page 163)

मौलाना सुभानी

मौलाना सुभानी ने 27 जनवरी 1939 को सिलहट में एक अन्य मौलाना के सवाल के जवाब में कहा था – 'यदि भारत में कोई प्रतिष्ठित नेता है जो अंग्रेज को इस देश से बाहर भगाने के पक्ष में है तो वह मैं हूँ। इसके बावजूद मैं चाहता हूं कि मुस्लिम लीग की ओर से अंग्रेजों से कोई लड़ाई न हो। हमारी असली लड़ाई 22 करोड़ (उस समय के) हिन्दू दुश्मनों से है, जो बहुसंख्यक हैं। याद रखिए कि केवल 4.5 करोड़ अंग्रेज़ों ने आधी दुनिया को हड़प लिया था, अपनी शक्ति के बल पर। यदि यह 22 करोड़ हिन्दू जो उतने ही बुद्धिमान और चतुर हैं तथा इनके पास पर्याप्त धन है, यदि वह शक्तिशाली हो गए तो यह हिन्दू न केवल मुस्लिम–भारत को निगल जाएंगे अपितु धीरे–धीरे इजिप्त, टर्की, काबुल, मक्का–मदीना और दूसरे मुस्लिम देशों को भी हथिया लेंगे जैसे यजूज–मजूज की तरह, जिसका विवरण कुरआन में है। (थॉट्स ऑन पाकिस्तान, डॉ.भीमराव अम्बेडकर, 1941 में बंबई से प्रकाशित, पृ. 270–271)

मुस्लिम लीग

मुस्लिम लीग ने 16 सितम्बर 1946 को ''डायरेक्ट एक्शन डे'' अर्थात् सीधी कार्यवाही शुरू करने की घोषणा की थी। 'एक्शन डे' का यह कार्यक्रम गुप्त रूप से सारे भारत में बाँटा गया – 'मुस्लिम लीग के सदस्य इन बातों पर आचरण करें –

1. पाकिस्तान के लिए मुसलमान अपना बलिदान देने के लिए तैयार रहें।
2. पाकिस्तान बनाने के बाद सारे भारत को फतह किया जाएगा।
3. इस्लाम के इस सबाब (पुण्य–कार्य) में इस्लामी हुकूमतों को हाथ बंटाना चाहिए।
4. एक मुसलमान के कत्ल होने पर 5 हिन्दुओं को कत्ल किया जाएगा।

'जब तक पाकिस्तान बन न जाए मुस्लिम लीग के सदस्य इन आज्ञाओं पर आचरण करें।

1. सभी हिन्दू दुकानों तथा कारखानों में आग लगाकर लूट लिया जाए। लूट का माल लीग के अधिकारियों के हवाले किया जाए।
2. सबको शस्त्रबद्ध रहना चाहिए ताकि अपनी रक्षा तथा हिन्दुओं पर हमले कर सकें।
3. 'राष्ट्रवादी मुसलमान' (भारत प्रेमी) यदि मुस्लिम लीग में शामिल न हों, तो उन्हें कत्ल कर दिया जाए। (''***कांग्रेसी छदम् धर्मनिरपेक्षता के घातक परिणाम'' शिवकुमार गोयल, पृ. 52)***

पूर्वी पाकिस्तान में हिन्दुओं पर अमानवीय अत्याचार ढाए गए। ''अमृत बाजार'' पत्रिका ने 20 फरवरी 1950 के संपादकीय में लिखा, 'वहाँ आज हिन्दू लड़के कुरआन की शिक्षा ग्रहण करने के लिए विवश किए जाते हैं। हिन्दुओं के मकानों पर जबरदस्ती कब्ज़ा किया जाता है। हिन्दू युवकों के लिए सरकारी नौकरियों का रास्ता बंद कर दिया गया है। हिन्दू युवतियों का सम्मान संकट में है। हिन्दू का वाणिज्य नष्ट प्रायः है। जहाँ–तहाँ जबरदस्ती धर्म परिवर्तन किया जाता है और जब कभी दंगे होते हैं, हिन्दुओं की जान खतरे से खाली नहीं रहती।''

मियां लियाकत अली खां

पाकिस्तान के प्रधानमंत्री मियां लियाकत अली खां ने स्वयं लायलपुर की सावर्जनिक सभा में घोषणा की –

'The Mission of Muslim Leage was not only the establishment of Pakistan but the creation of a powerful Islamic State. Our first objective has been achieved but the second is yet to be realized.' (Statesman 21-10-50)

अर्थात् ''मुस्लिम लीग का ध्येय मात्र पाकिस्तान की स्थापना ही नहीं था अपितु एक शक्तिशाली इस्लामी राज्य का निर्माण था। हमने अपना पहला उद्देश्य प्राप्त कर लिया है, दूसरा अभी प्राप्त करने को बाकी है।''

ज़ाकिर नायक

1.4.2007 के 'दैनिक समाचार पत्र 'संडे एक्सप्रैस' में पृ. 7 पर श्री सुधीन्द्र कुलकर्णी का एक लेख छपा जिसमें इस्लाम के जानेमाने शिक्षक ज़ाकिर नायक की एक टीवी चैनल में प्रसारित भेंटवार्ता का वर्णन है। यह भेंटवार्ता इंटरनेट you tube, the free video site पर भी देखा जा सकता है, जिसका वर्णन निम्नलिखित है :–

भेंटवार्ताकार : एक गैर मुसलमान ने प्रश्न किया, ''क्या गैर मुसलमान, इस्लामी देशों में अपने इबादत के स्थान सार्वजनिक रूप से बनाने को स्वतंत्र हैं? यदि ऐसा है तो सउदी अरब में मंदिर अथवा गिरजाघर बनवाने की अनुमति क्यों नहीं है, जबकि मुसलमान अपनी मस्जिदें लंदन एवं पैरिस में भी बनवाते हैं।

ज़ाकिर नायक : प्रश्न का उत्तर न देकर स्वयं उन्होंने सवाल पूछा, मैं गैर मुसलमानों से पूछता हूँ : मानो आप एक स्कूल के प्रधानाचार्य हैं तथा आपको गणित पढ़ाने के लिए एक अध्यापक का चयन करना है तथा इंटरव्यू में तीन व्यक्ति आते हैं। आपने पहले प्रत्याशी से पूछा कि 2+2 कितना होता है ? उत्तर मिला, 2+2=3, दूसरे प्रत्याशी का उत्तर मिला 2+2 = 4, तथा तीसरे ने उत्तर दिया 2+2 =6 मैं (जाकिर नायक) गैर मुसलमानों से पूछता हूं कि क्या आप ऐसे व्यक्ति से गणित पढ़वाएंगे जिसका उत्तर 3 या 6 है। इसी प्रकार मज़हब के मामले में केवल 'हम' (मुसलमान) निश्चित रूप से जानते हैं कि केवल इस्लाम ही एकमात्र सच्चा मज़हब है। हमारी पवित्र कुरआन भी यही बताती है।

''जो इस्लाम के अतिरिक्त कोई और दीन (धर्म) तलब करेगा तो उसकी ओर से कुछ भी स्वीकार न किया जाएगा। और आखिर में वह घाटा उठानेवालों में से होगा।'' कुरआन 3 : 8 5

जहाँ तक मंदिर व गिरजाघर बनाने का संबंध है – हम ऐसे लोगों को यह जानते हुए कि उनकी इबादत पद्धति गलत है, कैसे अनुमति दे सकते हैं। इन गैर मुसलमानों को मज़हबी सच का तनिक भी ज्ञान नहीं है। इसीलिए हम उनसे इस्लाम स्वीकारने का निवेदन करते हैं।

सुधीन्द्र कुलकर्णी लिखते हैं – नायक के विचार जानकर मेरे मन में प्रश्न उठता है, ''क्यों मुसलमान जिन देशों में अल्पसंख्यक होते हैं तो वहाँ धर्मनिरपेक्षता का पाठ पढ़ाते हैं, साथ–साथ अपने लिए तरह–तरह के अधिकारों की मांग करते हैं, परन्तु वही मुसलमान इस्लामी देशों में गैर–मुसलमानों को वैसी ही छूट देने से न केवल वंचित रखते हैं, बल्कि 'ऐंटी सैक्युलर'' होने की दुहाई करते हैं।

नायक के विचारों में कोई अनोखापन नहीं है, इसका उत्तर सउदी अरब में हाल में घटित एक घटना से मिल जाएगा। गत 26 फरवरी 2007 को चार फ्रांसिसी नागरिक जो सउदी अरब में कार्य करते थे, वहाँ की पुलिस द्वारा गोलियों से भून दिए गए। उनका अपराध था कि ये चारों मदीना जाने वाली सड़क पर दस मील दूर रेगिस्तान में किनारे पर विश्राम करते पाए गए।

प्रश्न उठता है कि जब गैर मुसलमान इन घटनाओं पर चिंता व्यक्त करते हैं या फिर जो कुछ जाकिर नायक ने टीवी भेंटवार्ता में कहा तो उल्टा उन्हीं पर अंगुलियां उठाई जाती हैं। आखिर वह दिन कब आएगा जब मुसलमान अपने मज़हब

की ऐसी मान्यताओं पर स्वयं आत्म चिंतन करेंगे?

ऊपर वर्णित उलेमाओं, मुस्लिम राजनीतिक चिंतकों और गैर–मुस्लिम राजनीतिक चिंतकों के विचार प्रस्तुत किए हैं, जिनसे स्पष्ट हो जाता है कि मुसलमानों का हिन्दुओं के साथ सहअस्तित्व संभव नहीं। उनका प्रयास सर्वदा इस देश का इस्लामीकरण करने का ही है। उनका लक्ष्य है संपूर्ण भारत का इस्लामीकरण।

◆◆◆

अध्याय-९

मुस्लिम शासन काल में मदरसों की भूमिका

स्वतंत्रता के बाद अलीगढ़ में पढ़े इतिहासकारों एवं वामपंथियों ने तर्क शुरू किया कि मध्यकालीन भारत में मुसलमानों का राज्य मज़हबी राज्य नहीं था। इसके विपरीत कुछ दूसरे इतिहासकारों का मत है कि उस काल का राज्य इस्लामी मज़हब पर ही आधारित था। इस कारण इन दोनों पारस्परिक विरोधी विचारधाराओं को जानना आवश्यक है।

इन दोनों विचारधाराओं के अन्वेषण से पहले यह जान लेना आवश्यक है कि आखिर मज़हब (थियोलॉजी) से अभिप्राय क्या है ? ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी के अनुसार थियोलॉजी ग्रीक शब्द थिओस से लिया गया है, जिसका अर्थ है गॉड (अल्लाह) और वह राज्य ''प्रत्यक्ष अथवा मज़हबी दूत वर्ग ''गॉड (अल्लाह) के दिए कानून से शासित हो तब उसे मज़हबी राज्य कहा जाएगा।'' मजहब की मान्यता है कि ''गॉड (अल्लाह) या तो सीधा अथवा शासक या समाज में प्रत्यक्षीकरण के माध्यम से हस्तक्षेप करे।'' इसी प्रकार चैम्बर्स ट्वन्टियथ सेन्चुरी डिक्शनरी – मज़हबी राज्य को इस प्रकार परिभाषित करती है – ''राज्य का ऐसा संविधान जिसमें गॉड (अल्लाह) को एकमात्र प्रभुसत्ता–संपन्न माना जाता हो तथा राज्य के कानून अल्लाह के आदेश समझे जाते हों न कि मनुष्य द्वारा अध्यादेश, जैसे कि प्रजातंत्र में होते हैं।'' इसी कारण इस्लामी राज में शासक के साथ–साथ उलेमा या मौलाना अदृश्य रूप से शासक का पदाधिकारी बन जाता है।

ऊपर दी गई मान्यता के अनुसार मज़हबी शासन में तीन आवश्यकताएं अनिवार्य हैं :–

1. गॉड (अल्लाह) के कानून की मान्यता।
2. प्रभुसत्ता–संपन्न सुल्तान या शासक का जो कानून की घोषणा करता है, होना।
3. मज़हबी उलेमा की उपस्थिति जिसके माध्यम से यह कानून लागू किया जाता हो।

अब हमें समझना चाहिए कि मध्यकालीन भारत में मुस्लिम राज्य में ये मुद्दे कितनी मात्रा में पाए जाते थे। हमें प्रथम दो मुद्दों पर विचार करने की आवश्यकता

नहीं क्योंकि इतिहासकारों के अनुसार शरीया कानून कुरआन और हदीस (पैगम्बर की व्याख्या, परम्परा) के आधार पर बना है ... अन्य मुस्लिम राज्यों में भी यही कानून वास्तविक रूप से सत्ता संपन्न था। जहाँ तक तीसरे मुद्दे की बात है, मध्यकालीन भारत में इन उलेमाओं का सुल्तानों पर बड़ा आधिपत्य होता था। ये उलेमा विभिन्न देशों में खलीफा के राजदूत की तरह काम करते थे। उनकी (उलेमाओं) शिक्षा और रूढ़िवाद पर डॉ. यूसुफ अन्सारी का कहना है ''उस काल में शिक्षा संस्थान जिन्हें मदरसा कहा जाता है उच्च शिक्षण केन्द्र बन गए थे। इन मदरसों का एक खास मज़हबी झुकाव था। मदरसे मज़हब के गढ़ थे और राज्य से ही आर्थिक सहायता पाते थे। (The legacy of Muslim rule in India – K.S. Lal page 117) इन मज़हबी मदरसों से निकले तालिब–ए–इल्म कहलाते थे। इन्हें कुरान कंठस्थ होती थी और इनमें से उलेमा अपने शासकों से इस्लामी कानून के अंतर्गत राज–व्यवस्था चलवाते थे।'' पैगम्बर मुहम्मद की हर गतिविधि और उनका कहा तथा दिया गया आदेश, चाहे वह छोटा ही क्यों न हों, निरंतर इन सुल्तानों को बताया जाता था, तथा उस पर अमल कराया जाता था। उलेमा निरंतर सुल्तानों को राय देते रहे कि कुरान की शिक्षा के अनुसार अपनी सर्वशक्ति से काफिरों का दमन करना चाहिए; उन्हें इस्लाम में दीक्षित करना चाहिए; ताकि भारत में सच्चा मज़हब (इस्लाम) स्थापित हो सके। इन मदरसों से निकले तालिब–ए–इल्म में से ही सुलतानों और बादशाहों के सलाहकार, शरिया (इस्लामिक कानून) की व्याख्या करने वाले विशेषज्ञ तथा काज़ी नियुक्त होते थे। इब्न हसन लिखता है ''शरियत स्थापित करने के दो पहलू हैं :–

1. शरियत की जानकारी फैलाना और
2. राज्य में शरीयत कानून को कठोरता से लागू करना

पहले से संबंध है – विषय का गहन अध्ययन करने वालों की जमात तथा उसकी जानकारी का चलन और दूसरे का अर्थ है, उन मज़हबी विद्वानों में से एक प्रतिष्ठित विद्वान को सुल्तान द्वारा राज्य के सभी कानूनों में मज़हबी मामलों से संबंधित विषयों का सलाहकार नियुक्त करना। उस ज्ञान के अध्ययन करने वालों को 'उलेमा' कहा जाता था/है और उनमें से चुने गए व्यक्ति को 'शेख–उल–इस्लाम' कहते थे। (वही, पृ. 117)

भारत में मुस्लिम शासन का इस्लामिक चरित्र स्थायी रखने के लिए तथा साथ–साथ मुस्लिम शासक स्वयं अपने को भी सुरक्षित बनाए रख सकें, इसके लिए दिल्ली के सुल्तान सर्वदा खलीफा के, जो बगदाद आदि स्थानों पर शासन करता था, आज्ञाकारी बन कर उसके प्रतिनिधि के रूप में राज करते थे। जिस प्रकार पैगम्बर हज़रत मुहम्मद अल्लाह के पृथ्वी पर नुमांइदे थे उसी प्रकार पैगम्बर के बाद प्रत्येक खलीफा पैगम्बर मुहम्मद के प्रतिनिधि के रूप में कार्य करता था। यह प्रणाली

निरंतर अपनाई गई तथा चलती रही।

टी.डब्ल्यू.आरनोल्ड के अनुसार भी ''हिन्दुस्तान का सुल्तान खलीफा का प्रतिनिधि था। ... पूर्व अथवा पश्चिम के देशों में कोई भी शासक सुल्तान की पदवी प्राप्त ही न कर सकता था जब तक कि उसके और खलीफा के बीच में एक मत न हो तथा सुल्तान खलीफा का कृपा पात्र न हो।

भारत का इस्लामी राज्य तलवार द्वारा स्थापित हुआ परन्तु शासकों का मनोबल बढ़ाने में आवश्यकता थी खलीफा के वरदहस्त (कृपादृष्टि) की। खलीफा का स्थायी रूप से विश्वासपात्र बनने के लिए आवश्यकता थी ''इस्लामिक राज्य को फैलाना तथा शरीयत कानून लागू रखना।''

भारतवर्ष में किसी भी सुल्तान की खलीफा से संबंध तोड़ने की हिम्मत नहीं हुई। वे तो निरंतर खलीफा को भेंट भेजते थे ताकि उसकी कृपादृष्टि सुल्तानों पर बनी रहे। खलीफा भी इन सुल्तानों को कोई न कोई पदवियां बख्शते रहते थे ताकि प्रजा के हृदय में सुल्तान की शान बढ़े और प्रजा उसको पैगम्बर का खास आदमी माने।

इन खलीफाओं का दिल्ली के शासकों पर इतना दबादबा था कि बगदाद के खलीफा अल–मुस्तसिम का मंगोलों द्वारा 1258 ई. में कत्ल कर देने के बाद भी उसका नाम हिन्दुस्तान में चलने वाली मुद्राओं पर अंकित होता रहा जिसमें गयासुद्दीन बलबन, मोइजुद्दीन, खैकुबाद और जलालुद्दीन खिलजी का काल शामिल था, यद्यपि बगदाद में खलीफा तब जीवित भी न था। परन्तु उसके नाम को मृत्यु के बाद भी चलाए रखा गया। यह सब सुल्तानों को उलेमा द्वारा दी गई तालीम का प्रभाव था। इन उलेमाओं की शक्ति का अंदाज़ इसी से लगाया जा सकता है कि सभी मुसलमान शासकों में से केवल अकबर ही एक ऐसा शासक था जो इस अभिमानी वर्ग (उलेमा) पर अकुंश लगाने में सफल हुआ। मुस्लिम काल के मदरसों से निकले उलेमा और मशाएख के जबरदस्त प्रभाव को किसी भी आधार पर कम नहीं आंका जा सकता। वास्तव में इन्हीं की सलाह पर सुल्तान शासन करने को बाध्य था। सच यह है कि उलेमाओं का ही राज्य चलाने में अधिकाधिक हाथ था। मध्यकालीन युग में मुसलमानों का शासन होने के कारण मदरसों से आज की तरह बहुत बड़ी संख्या में मज़हबी जिहादी तालिबान पैदा करने की आवश्यकता न थी क्योंकि सुल्तानों की फौजें स्वयं जिहादी थी तथा जिन्हें उलेमा समय–समय पर मज़हबी शिक्षा देते थे। आज के युग में जिहादी तत्वों की आवश्यकता केवल उन देशों में है जिनमें इस्लामी राज्य नहीं है जैसे–हिन्दुस्तान, यूरोप के अनेक देश, अमेरिका, रूस, चीन जिनका इस्लामिकरण शेष है। स्मरण रहे कि पैगम्बर मुहम्मद के अनुसार सारी

पृथ्वी अल्लाह की है और जिन भागों पर काफिर कब्ज़ा किए बैठे हैं उन भागों का इस्लामिकरण करना शेष है।

इस प्रकार पाठक स्वयं समझ लेंगे कि क्या मध्यकालीन हिन्दुस्तान में सुल्तानों का राज्य पंथनिरपेक्ष (सेक्युलर) हो सकता था जैसा कि आज के कुछ इतिहासकार पाठ पढ़ाना चाहते हैं। यह बताना भी आवश्यक है कि मुस्लिम राज्य का सेक्युलर होना असंभव है। असलीयत यह है कि इस्लाम और पंथनिरपेक्षता (सेक्युलरवाद) परस्पर विरोधाभासी हैं। मात्र कुरान और मध्यकालीन कतिपय पर्शियन इतिहास के आलेख पढ़कर स्वयं समझ में आ जाता है कि भारत में मुस्लिम राज्य किस हद तक भावना और करणी दोनों प्रकार से ही शरियत शासित मज़हबी राज्य था। पाठकों को मदरसों में पढ़े उलेमाओं का प्रभाव भलीभाँति समझ लेना चाहिए। स्मरण रहे कि इस्लाम की नीतियों का बुनियादी असूल है ''भ्रांत विचारों और विधर्मियों का समूल नाश–तथा सारे संसार को कट्टर इस्लामी बनाना–कुरान का आदेश।''

मुहम्मद बिन कासिम का भारत पर असाधारण आक्रमण

मुहम्मद बिन कासिम ने 712 ई. में सिंध पर विजय प्राप्त की। सिंध में जो नरक लीला खेली गई उसकी झलक स्वयं मुस्लिम इतिहासकारों द्वारा वर्णित कुछ घटनाओं से मिलती है। ''देवल (आधुनिक कराची) में मंदिरों के ध्वस्त होने पर 70 सुंदर बालिकाएं मुसलमानों के हाथ आईं। युद्धबंदी सब कत्ल कर दिए गए। मंदिरों को तोड़कर मस्जिदें बना दी गईं। रावर के किले में 6000 हिन्दू थे। सब कत्ल कर दिए गए। तीस हज़ार स्त्री–पुरुष, बच्चे हज्जाज की मार्फत खलीफा के पास गुलाम बना कर भेज दिए गए। इनमें राजा दाहिर की दो पुत्रियां और एक भांजी भी थी। पकड़े गए तमाम युद्धबन्दियों का मुस्लिम कानून (कुरान द्वारा निर्धारित) के अनुसार वह केवल 1/5 भाग था। शेष चार भाग यानि 1,20,000 हिन्दू कैदी सैनिकों में बांट दिए गए। हज्जाज के आज्ञानुसार पत्र मिलने के बाद अगली विजय पर 16,000 हिन्दू कत्ल कर दिए गए, 20,000 गुलाम बना लिए गए जिसमें से 4000 मुहम्मद बिन कासिम के हिस्से में आए और शेष 16,000 सैनिकों में बाँट दिए गए। कत्ल किए गए सभी लोगों के परिवार जन गुलाम बना लिए गए।

पाठकों को विचारना चाहिए कि क्या यह साधारण युद्ध था ? भारत में ऐसा अनोखा युद्ध पहली बार देखने को मिला जिसमें निहत्थे हिन्दुओं का कत्ल करना, गुलाम बनाना, उनको अपनी सेना में बांटना, औरतों व कन्याओं को अपनी हवस का शिकार बनाना तथा बड़ी संख्या में उन्हें विदेश स्थित खलीफा के पास भेजना शामिल था। यह युद्ध न होकर इस्लामी जिहाद था और इसका प्रेरणा स्रोत विदेश में बैठा खलीफा ही था। राजा दाहिर से युद्ध करने के विषय में एक घटना की जानकारी देना आवश्यक है।

बंदियों में राजा दाहिर की दो कन्याएं भी थीं जिन्हें मुहम्मद बिन कासिम ने खलीफा के पास भेजा। जब उन दोनों को खलीफा वादिल अब्दुल मल्लिक के समक्ष लाया गया तो उनका नाम पूछा। बड़ी बहन ने बताया ''मेरा नाम सूर्यदेव है'', छोटी ने कहा ''मेरा नाम 'परिमल देव है''। खलीफा ने बड़ी को अपने पास बुलाया तथा छोटी को देखभाल करने के लिए वापिस भेज दिया। खलीफा ने बड़ी बहन सूर्यदेव को बैठने के लिए कहा तथा उसने अपना चेहरा बे–नकाब किया। खलीफा ने उसकी ओर देखा और बेमिसाल सुन्दरता देखकर वह उस पर मोहित हो गया तथा उसके सब्र का प्याला छलकने लगा। खलीफा ने सूर्यदेव के ऊपर अपना हाथ रखा तथा अपनी ओर ले लिया। इस पर कन्या सूर्यदेव खड़ी होकर बोली ''बादशाह चिरायु हो। मैं बादशाह के काबिल नहीं हूँ क्योंकि आपके पास आने से पहले सेनानायक मोहम्मद बिन कासिम ने हमें तीन दिन अपने साथ रखा है और लगता है आपके राज्य का यही दस्तूर है; परन्तु बादशाह की इतनी तौहीन नहीं होनी चाहिए।'' खलीफा बालिका के प्यार में इतना डूबा हुआ था कि उसे अपने निरादर का अहसास हुआ। खलीफा ने कागज़ व कलम मंगवाया तथा अपने करकमलों से लिखा कि मोहम्मद बिन कासिम जहाँ भी हो उसे पकड़ पशु की खाल में सिल कर पेश किया जाए। खलीफा की आज्ञा का पालन हुआ तथा मरे हुए मोहम्मद बिन कासिम को कन्याओं को दिखाते हुए कहा ''देखो! मेरी आज्ञा का कितनी मुस्तैदी से पालन किया जाता है।''

तत्पश्चात् लड़कियों ने खलीफा से कहा कि बादशाह ने बड़ी भूल की है क्योंकि उसने दो गुलाम दासियों के कहने पर ऐसे व्यक्ति का वध करवाया जिसने हम जैसी अन्य एक लाख महिलाओं/बालिकाओं को गुलाम बनवाया तथा भारत के 70 राजाओं का वध किया, साथ–साथ जिसने मंदिरों को ध्वस्त करके उनके स्थान पर मस्जिदें बनवाईं। सच यह है कि मोहम्मद बिन कासिम ने हम दोनों को बहन समान समझा था तथा वह निर्दोष था। तत्पश्चात् खलीफा ने आदेश दिया कि इन दोनों बहनो को दीवार में चिनवा दिया जाए। ('चाचनामा – इलियट एण्ड डाउसन'' खण्ड–1, पृ. 209–211) भारत में हुए पहले जिहाद का वर्णन था।

महमूद गजनवी (997–1030) द्वारा जिहाद

हिन्दुस्तान पर दूसरा इस्लामी आक्रमण 1001 ई. में महमूद गजनवी द्वारा शुरू हुआ जो रुक–रुक कर 25 वर्षों तक चलता रहा। महमूद गजनवी स्वयं इस्लामी विद्वान था और कुरान का प्रसिद्ध ज्ञानी भी। वह बहुत से अन्य इस्लामी विद्वानों को अपने साथ रखता था। अपने राज्याभिषेक के समय उसने बगदाद स्थित खलीफा से वायदा किया कि वह प्रत्येक वर्ष हिन्दुस्तान के मूर्तिपूजकों (काफिरों) के खिलाफ जिहाद करने जाएगा क्योंकि जिहाद इस्लाम का केन्द्र बिन्दु है। यह कहना उचित होगा कि महमूद गजनवी एक कट्टर मज़हबी सुल्तान था। (''लिगेसी ऑफ मुस्लिम

रूल इन इंडिया'' पृ. 96 के.एस. लाल) उसका सोमनाथ मंदिर पर आक्रमण (1026 ई.) सबसे प्रमुख था। इस आक्रमण में 50,000 से अधिक हिन्दुओं का वध किया गया। ***तारीख–ए–अल्की* के अनुसार जब महमूद मूर्ति तोड़ने वाला था तभी ब्राह्मणों का एक समुदाय आया और महमूद से आग्रह किया कि वह सोमनाथ को न तोड़े, तो उसको करोड़ों सोने की मुद्राएं दे दी जाएंगी। महमूद के आला अफसर बोले कि वह इस प्रस्ताव को मान ले क्योंकि मूर्ति तोडने से इतना माल नहीं मिलेगा। महमूद का उत्तर प्रकट करता है कि वह स्वयं इस्लाम का विद्वान् था। उत्तर दिया – 'मुझे यह मालूम है परन्तु कयामत के दिन मुझे इन शब्दों से बुलाया जाए : वह महमूद कहाँ है जिसने मूर्तिपूजकों (हिन्दुओं) की सबसे प्रसिद्ध मूर्ति तोडी न कि वह महमूद जिसने हिन्दुओं की सबसे प्रसिद्ध मूर्ति सिर्फ सोने के लालच में बेच डाली (मैं बुतशिकन हूँ न कि बुतफरोश)।** इतिहासकार लिखते हैं कि जब महमूद ने सोमनाथ की मूर्ति तोड़ी उसमें असंख्य मोती, हीरे व कीमती रुबी निकले। पूरे मंदिर को ध्वस्त कर दिया गया। सोमनाथ की मुख्य मूर्ति के टुकड़े–टुकड़े कर दिए गए। उन कीमती पत्थरों को जामा मस्जिद की सीढ़ियों में लगाने के लिए गजनी भेज दिया गया, जिससे मुसलमान उन्हें सदैव पैरों के तले रौंदते रहें। मुसलमानों की यह दूसरों को अपमानित करने की रीत सदा ही चलती रही। सोमनाथ की विजय से इस्लामी दुनिया का मनोबल आसमान छूने लगा। खलीफा अल–कादिर बिल्ला ने स्वयं इस विजय पर जश्न मनाए। खलीफा ने महमूद की प्रशंसा में पत्र भेजकर उसे **''कैफउद्दौला वल इस्लाम''** खिताब देकर सराहा। महमूद गजनवी के इस्लामी कारनामें जैसे मूर्तियों का तोड़ना तथा हिन्दुओं का इस्लामीकरण आगे आने वाले मुसलमानों ने अपनाया और यह धीरे–धीरे इस्लाम द्वारा मुस्लिम परंपरा बनी रही। स्मरण होगा कि मूर्तियों का तोड़ना स्वयं पैगम्बर मोहम्मद ने शुरू किया था।

सिरसावा में नरसंहार :– अल–उत्बी लिखता है – ''सुल्तान ने अपने सैनिकों को आक्रमण करने का आदेश दिया। परिणामस्वरूप अनेक गैर–मुसलमान बंदी बना लिए गए और मुसलमानों ने लूट के माल की तब तक कोई चिंता नहीं की जब तक उन्होंने अविश्वासियों (हिन्दुओं) सूर्य व अग्नि के उपासकों का अनन्त वध करके अपनी भूख पूरी तरह न बुझा ली। लूट का माल खोजने के लिए अल्लाह के मित्रों ने पूरे तीन दिनों तक वध किए अविश्वासियों (हिन्दुओं) के शवों की तलाशी ली .... बन्दी बनाए गए व्यक्तियों की संख्या का अनुमान इसी तथ्य से लगाया जा सकता है कि प्रत्येक हिन्दू गुलाम दो से लेकर दस दिरहम तक में बिका था। बाद में इन्हें गज़नी ले जाया गया और दूर–दूर के शहरों से व्यापारी इन्हें खरीदने आए थे।'' (अल–उत्बी : इलियट एण्ड डाउसन, खण्ड–2, पृ. 49–50)

अल–बरूनी ने लिखा था – ''महमूद ने भारत की संपन्नता को पूरी तरह विध्वंस कर दिया। इतना आश्चर्यजनक शोषण व विध्वंस किया था कि हिन्दू धूल के कणों की भाँति चारों ओर बिखर गए थे। उनके बिखरे हुए अवशेष निश्चय ही मुसलमानों की चिरकालीन प्राण लेवा, अधिकतम घृणा को पोषित कर रहे थे।'' (अलबरूनी–तारीख–ए–हिन्द, अनुवाद अल्बरुनीज़ इंडिया, बाई ऐडवर्ड सचाउ, लन्दन, 1910)

मुहम्मद गौरी (1173–1206)

महमूद गजनवी के पश्चात् लगभग 150 वर्ष बाद मुहम्मद गौरी ने भारत पर आक्रमण शुरू किए और वास्तव में वह महमूद गजनवी से एक कदम आगे बढ़ा। मुहम्मद गौरी भी इस्लाम का ज्ञानी था। मुस्लिम इतिहासकार निज़ामी लिखते हैं ''सुलतान जब अजमेर में था तब उसने वहाँ के मूर्ति मंदिर तोड़कर मस्जिदें और मदरसे बना दिए, जिससे इस्लाम की शिक्षा को बढ़ावा मिले''।

इस्लाम की जिहादी सेना को अजमेर में लूट में इतना माल व संपत्ति मिली जिसका अनुमान लगाना कठिन है। **(ताज–उल–मासीर : हसन निजामी, अनु. इलियट डाउसन, खण्ड–2, पृ. 215)**

बनारस में उसने 1000 मंदिर तोड़कर मस्जिदें बनवा डालीं। एक दूसरा इतिहासकार इब्न असर लिखता है ''बनारस में हिन्दुओं का कत्ल भयानक था। सिवाय स्त्रियों और बच्चों के सभी कत्ल कर दिए गए जब तक कि भूमि खून से तर नहीं हो गई।''

गुजरात में कहर (1197 ई.)

गुजरात की विजय के संबंध में हसन निज़ामी लिखता है – ''अधिकाशं हिन्दुओं को बंदी बना लिया गया और 50 हजार हिन्दुओं का वध कर डाला, और कटे हुए शव इतने थे कि मैदान और पहाड़ियां एकाकार हो गईं। 20 हजार से अधिक हिन्दू जिनमें अधिकांश महिलाएं ही थीं, विजेताओं के हाथ गुलाम बन गए। **(तबाकत–ई–नसीरी–मिन्हाज, अनु. इलियट और डाउसन, पृ. 230)**

कुतबुद्दीन ऐबक (1206–1210)

मुहम्मद गौरी के बाद उसके गुलाम सुल्तान कुतबुद्दीन ऐबक ने भी भारत में इस्लाम को गौरवान्वित करने की क्रिया जारी रखी। इतिहासकार हसन निजामी के अनुसार ''सन् 1193 में कोल (आधुनिक अलीगढ़) में विद्रोह को दबाने के पश्चात् ऐबक ने हिन्दुओं के कटे सिरों के तीन मिनार खड़े किए। सन् 1194 ई में उसने दिल्ली में 27 जैन मंदिरों को ध्वस्त करके उनके मलबे से कुव्वतुल इस्लाम (इस्लाम की शक्ति) नामक मस्जिद बनाई यह मस्जिद दिल्ली में कुतुबमीनार के परिसर में आज भी स्थित है।

इल्तुतमिश

कुतबुद्दीन ऐबक के बाद आया इल्तुतमिश उसने भी हिन्दुओं पर वैसे ही अत्याचार जारी रखे। हिन्दुओं के प्रति इस्लाम का दृष्टिकोण जानना चाहिए। ''सैयद नूरुद्दीन मुबारक गजनवी सुहरावर्दी सुल्तान इल्तुतमिश के शैखुल इस्लाम (इस्लाम के सबसे बड़े उलेमा) नियुक्त हुए। वह अपने साथ दूसरे उलेमाओं का प्रतिनिधिमंडल लेकर इल्तुतमिश के पास गया और बताना चाहा कि हिन्दुओं को ''इस्लाम अथवा मृत्यु'', में से एक का वरण कर लेने की अंतिम चेतावनी दे दी जाए (यह राय कुरान के आदेशों के अनुसार थी–लेखक)। सुल्तान इल्तमिश ने इस राय को अव्यावहारिक और आत्मघाती कहकर टाल दिया, अन्यथा देश की क्या दशा होती इसकी कल्पना से ही हृदय काँप जाता है। इल्तुतमिश के एक मंत्री जुनैद ने उलेमा को समझाया कि 'यदि हम हिन्दुस्तान में यह कार्यशैली अपनाएंगे तो तुम जैसे व्यक्ति को भलीभाँति समझ लेना चाहिए कि इस देश में हम 'आटे में नमक' की भाँति हैं। यदि सुल्तान आपकी राय मानता है तो थोड़े जो कलमा पढ़ाते हैं वह स्वयं मारे जाएंगे। वस्तुतः शैखुल इस्लाम ने अंत में यह भी जोड़ा कि इस्लाम रक्षक सुल्तान का यही लक्षण है कि वह यदि हिन्दू काफिरों का वध करने में समर्थ नहीं है तो कम से कम उन्हें पद दलित अवश्य करे और जब कभी वह किसी हिन्दू को देखे तो उसका चेहरा तमतमा जाए और वह उसे कच्चा चबा जाना चाहे। **(जियाउद्दीन बरनी : सहीफ–ए–नाते मुहम्मदी–हर्शनारायण : सम्मिश्र संस्कृति पृ.8)**

इस्लाम के अनुसार मुस्लिम शासन में केवल यहूदियों और ईसाइयों को ही अपमानजनक जज़िया कर देकर अपने धर्म/मज़हब का पालन करते हुए जीवित रहने का अधिकार है। शेष सब लोगों का तलवार अथवा इस्लाम स्वीकार करना ही दो विकल्प हैं। भारत में हिन्दुओं की संख्या इतनी विशाल थी कि सबको मार डालना संभव नहीं था। वैसे भी काम करने और मुस्लिमों की गुलामी करने के लिए लोगों की आवश्यकता थी। इसी कारण मुहम्मद बिन कासिम ने ही हिन्दुओं को जज़िया कर देकर ज़िम्मी बनकर जीवित रहने का अधिकार दिया जो अन्य मुस्लिम शासकों ने भी चलाए रखा। हालांकि इसके लिए उलेमाओं की स्वीकृति नहीं होती थी। उनका स्पष्ट मत होता था ''केवल तलवार या इस्लाम स्वीकारना'' में से किसी एक का विकल्प जो कुरान के आदेशानुसार था। जज़िया केवल एक आर्थिक टैक्स ही न था। उसका ध्येय ज़िम्मी को घोर अपमानित करना भी था जिससे तंग होकर उसका मनोबल टूट जाए और वह अंततः इस्लाम स्वीकार कर ले। प्रत्येक मोड़ पर मृत्यु उसके इंतज़ार में खड़ी दिखाई देती थी।

कुछ गरीब हिन्दू जो जज़िया कर अदा करने में असमर्थ थे, मजबूरन इस्लाम स्वीकार कर लेते थे, जिससे वे जज़िया अदा करने व वसूल करने वालों के

अत्याचारों से मुक्त हो जाते थे। सुल्तान फिरोज़शाह तुगलक ने स्वयं लिखित **'फतूहत–इ–फिरोज़शाही'** में प्रसन्न होकर वर्णन किया है – ''मैं अपनी हिन्दू रियाया को पैगम्बर का मज़हब स्वीकारने को प्रोत्साहन देता था। मैंने निर्देश दिया कि जो मुसलमान बनेगा उसे जज़िया अदा करने से मुक्त कर दिया जाएगा। दिन–प्रति–दिन अलग–अलग स्थानों से बड़ी संख्या में हिन्दू आकर मुसलमान बनते थे, जिन्हें जज़िया अदा करने से मुक्त कर दिया जाता था।'' अनेक मुस्लिम बादशाह – यहाँ तक कि औरंगज़ेब भी इसी कार्यप्रणाली को अपना कर हर्षित होता था। **पाठकों को समझ लेना चाहिए कि क्या हिन्दुओं पर लगा टैक्स सेक्युलर टैक्स प्रतीत होता है?**

'ज़िम्मी' पर मुस्लिम शासन काल में लगी रोक निम्न प्रकार थी। यह खलीफा ''उमर का इकरारनामा'' कहा जाता है जो 8वीं शताब्दी में ईसाइयों एवं यहूदियों (पिपुल ऑफ दि बुक) से हुआ था। यह हिन्दुओं पर लागू न होता था, परन्तु हिन्दू इतनी बड़ी संख्या में थे इस कारण मजबूरन उन्हें भी इसके दायरे में रखा गया।

''जिम्मी को स्वीकार करना पड़ता था कि –

1. हम अपने नगर में नई मज़हबी इमारतें, चर्च नहीं बनवाएंगे, यदि उनमें से कोई गिर जाए या क्षतिग्रस्त हो तो उसे दुबारा नहीं बनवाया जाएगा।
2. हम अपने दरवाज़े राहगीरों तथा मुसाफिरों के लिए खुले रखेंगे। हम किसी मुसलमान को जो वहाँ से गुजरेगा, तीन दिन भोजन और रहने का आराम देंगे।
3. हम किसी भेदी को अपने घरों में पनाह नहीं देंगे और न मुसलमान से छिपाएंगे।
4. हम अपने बच्चों को कुरान की शिक्षा नहीं देंगे।
5. हम कोई धार्मिक सभा नहीं करेंगे। हम किसी का धर्म परिवर्तन नहीं करेंगे। हम अपने किसी सगे संबंधी को इस्लाम स्वीकार करने से नहीं रोकेंगे, यदि वह ऐसा चाहता है।
6. हम सब मुसलमानों को सम्मान देंगे और अपनी गद्दी से उठ जाएंगे यदि वह बैठना चाहे।
7. हम किसी मुसलमान की तरफ देखने का प्रयत्न नहीं करेंगे।
8. हम घोड़े पर काठी लगाकर सवारी नहीं करेंगे।

9. हम तलवार अथवा और कोई हथियार धारण नहीं करेंगे न कभी लेकर चलेंगे।
10. हम शराब नहीं बेचेंगे।
11. हम अपने सिर के सामने के बाल कटवाएंगे।
12. हम अपने पहचान चिह्न तथा धार्मिक पुस्तक मुसलमानों के रास्ते पर या उनके बाज़ार में नहीं आने देंगे।
13. हम अपने घर मुसलमानों के घरों से ऊँचे नहीं बनवाएंगे। यदि ऊपर लिखी शर्तों की अवहेलना की गई तो इस करारनामे से मिली छूट रद्द कर दी जाएगी। (मार दिया जाएगा)

इन सबके बावजूद ज़िम्मी को तलवार या इस्लाम स्वीकार करने या दासता का डर सदैव मंडराता रहता था। जहाँ तक हिन्दू का संबंध है वे इस छूट के भी अधिकारी नहीं थे। उन्हें यह सुविधा मजबूरन दी गई। यह सुविधा तो केवल इस्लामी विचारधारा में ईसाइयों और यहूदियों को ही दी जा सकती थी। अपमानजनक अधिक दण्ड जज़िया देकर तीसरी श्रेणी का नागरिक बन कर केवल जीवित रहने का अधिकार।

खराज कर

'खराज़ कर' मालगुज़ारी यानि खेतीबाड़ी पर लगाया जाता था। इसके अन्तर्गत किसान ज़मीन का स्वयं मालिक नहीं होता था। वह केवल किराएदार की तरह ज़मीन का इस्तेमाल कर सकता था। खराज कर का यह भी मतलब था कि विजयी सुल्तान को यह अधिकार जीती हुई भूमि पर अल्लाह द्वारा मिल जाता था।

अलाउद्दीन खिलजी (1296–1316)

अलाउद्दीन खिलजी के शासन काल में ''हिन्दुओं का कार्य लकड़हारों और पानी लाने वालों तक सीमित रह गया था। वे कठिनता से मात्र जीवित रह सकते थे। घोड़े पर बिना काठी के ही चढ़ सकते थे। उत्तम वस्त्र नहीं पहन सकते थे। हथियार नहीं रख सकते थे। यहाँ तक कि पान भी नहीं चबा सकते थे। भयानक दरिद्रता के कारण उनकी स्त्रियों को मुस्लिम परिवारों में चाकरी करनी पड़ती थी। अलाउद्दीन सत्य ही कहता था 'मेरे हुक्म से वे चूहों की तरह बिलों में रेंगने को तैयार हैं।''

अलाउद्दीन खिलजी के काल में **काज़ी मुगीसुद्दीन जो बयाना का रहने वाला था,** अलाउद्दीन के राजदरबार में जाकर राजकीय कार्यवाही देखा करता था।

एक दिन दरबार में जब अधिक कर वसूल करने की चर्चा चल रही थी; सुल्तान अलाउद्दीन ने, जो स्वयं अनपढ़ था, तथा मज़हबी विद्वानों से कभी संपर्क नहीं रखा था, काज़ी से कहा कि उसे बहुत से सवालों का उत्तर चाहिए। काज़ी ने उत्तर दिया कि ''आप तो मेरी किस्मत के फरीश्ते हैं और जब सुल्तान खुद मुझसे मज़हब के बारे में सवाल करना चाहता है : और यदि मैं सच बोलता हूँ तो खफा होकर मेरी गर्दन कटवा दी जाएगी।'' सुल्तान के यकीन देने पर कि वह उसे नहीं मारेगा और आदेश दिया कि सच–सच उत्तर दे। काज़ी ने यकीन दिलाया कि उसने जो मज़हबी किताबों (मदरसों में) में पढ़ा है उनके अनुकूल ही उत्तर देगा। तत्पश्चात् सुल्तान ने सवाल किया कि – **इस्लामी कानून के अंतर्गत हिन्दुओं का स्थान *खरज–गुजार है* या *खरज़–दीह* ?** काज़ी मुगीसुद्दीन ने प्रश्न के उत्तर में इस्लाम का हिन्दुओं के प्रति दृष्टिकोण इस प्रकार बताया : **हिन्दू खरज–गुजार है** तथा खरज–गुजार के विषय में शरीयत के अनुसार जब कर वसूल करने वाला उससे चांदी मांगे तो वह अनिवार्य रूप से तथा आदर सहित व दीन भावना से सोना अदा करे। यदि कर वसूल करने वाला उसके मुंह में थूकना चाहे तो वह बिना किसी प्रकार आपत्ति प्रकट किए मुँह खोल दे जिससे वह उसके मुँह में थूक सके। ऐसा करने का अभिप्राय हिन्दू को हीनता की भावना का अहसास कराना तथा इस्लाम को गौरवान्वित करना था। अल्ला कुरान में स्वयं आदेश देता है – क्योंकि हिन्दू पैगम्बर मोहम्मद के घोर शत्रु हैं, इसलिए कुरान के आदेश के अनुसार उनका वध ा कर देना या इस्लाम स्वीकार करना ही विकल्प है। इसके अतिरिक्त उनकी ध नराशि तथा जायदाद ज़ब्त करना कानूनी है। अबू हनीफा जिसका बना शरीया कानून हिन्दुस्तान में लागू रहा, हिन्दुओं पर जज़िया कर लगाने की स्वीकृति देता है। यह सुनकर सुल्तान अलाउद्दीन हँसा और काज़ी मुगसुद्दीन को इस्लामी विद्वान मानते हुए कहा कि यद्यपि मैं अनपढ़ हूँ परन्तु मेरे पास बहुत अनुभव है और मैं यकीन दिला सकता हूं कि यह हिन्दू नम्र व आज्ञाकारी नहीं बनेंगे जब तक इन्हें दाने–दाने से मोहताज कर गरीब न बना दिया जाए। इसलिए अपनी प्रजा को आज्ञाकारी बनाने के लिए जिससे वह मेरे इशारे से चूहे की तरह बिल में घुसने लगें, मैंने उचित कदम उठाए हैं। मैंने आदेश करवाया है कि समस्त प्रजा के पास केवल जीवित रहने योग्य खाद्य सामग्री, दूध इत्यादि ही बचे जिससे वह एक भी पैसा न जोड़ पाएं।

इस प्रकार यह जानना आवश्यक है कि भारत में इस्लामी राज्य स्थापित होने के 100 वर्ष के भीतर हिन्दुओं की कितनी दुर्दशा हो गई थी। उन्हें खाने के लिए भी इन मुसलमानों के रुख पर निर्भर होना पड़ता था। **(याद रखिए जो देश या समाज इतिहास से नहीं सीखता, इतिहास दोहराता है)।** पाठकों को यह बताना आवश्यक है कि मध्यकालीन युग में सुल्तानों की जिहादी फौज लगातार हिन्दुओं का कत्लेआम करती रही और साथ–साथ ये मदरसों के पढ़े विद्वान्,

उलेमा, मौलाना, काज़ी इत्यादि सुलतानों को इस्लाम का पाठ पढ़ाते रहे तथा हिन्दू विरोधी शरिया कानून के अंतर्गत राज करने पर बाध्य करते रहे। अनेक सुल्तान अनपढ़ थे, जिससे उलेमा का बड़ा सम्मान रहता था और सुल्तान मज़हबी राज करने में अपने को गौरवशाली मानते थे। जिहाद का आज जो स्वरूप दिखता है, उसकी मध्यकालीन युग में आवश्यकता नहीं थी क्योंकि शासकों की जिहादी फौजें सर्वदा कार्यरत थीं।

''प्रसिद्ध सूफी अमीर खुसरो ने लिखा था – ''हमारे पवित्र सैनिकों की तलवारों के कारण सारा देश कांटों रहित जंगल जैसा हो गया। हमारे सैनिकों की तलवारों के वारों के कारण अविश्वासी हिन्दू भाप की तरह समाप्त कर दिए गए। हिन्दुओं में शक्तिशाली लोगों को पाँवों के तले रौंद दिया गया। इस्लाम जीत गया है, मूर्ति पूजक हार गए हैं।'' (तारीख–ए–अलाई, अनु. इलियट और डाउसन)

हिन्दू गुलामों का बाजार

मुहम्मद बिन कासिम की बलात् विजय के पश्चात् सभी मुस्लिम शासकों के लिए गुलाम हिन्दुओं की क्रय–विक्रय सरकारी आय का एक महत्वपूर्ण स्रोत बन गया था। किन्तु खिलजियों और तुगलकों के काल में हिन्दुओं पर इन यातनाओं का स्वरूप गगनचुंबी एवं अधिकतम हो गया था। अमीर खुसरों ने बताया कि – : ''**तुर्कों व हिन्दुओं का आपसी संबंध शेर व बकरी जैसा है –तुर्क जब चाहते, हिन्दुओं को पकड लेते, क्रय करते अथवा बेच देते थे।''** (अमीर खुसरो : नूह सिफर : इलियट एण्ड डाउसन, खण्ड–3 पृ. 561)

मौलाना बरनी ने लिखा था कि ''घर में काम आने वाली वस्तुएं जैसे गेंहू, चावल, घोड़ा और पशु आदि के मूल्य जिस प्रकार निश्चित किए जाते हैं, अलाउद्दीन खिलजी ने बाजार में हिन्दू गुलामों के मूल्य भी निश्चित कर दिए थे। एक लड़के का विक्रय मूल्य 20–30 टन्काह; किन्तु उनमें से कुछ को मात्र 7–8 टन्काह में ही खरीदा जा सकता था। गुलाम लड़कों का मूल्य उनके सौन्दर्य और कार्यक्षमता के अनुसार वर्गीकरण किया जाता था। काम करने वाली लड़कियों का मानक मूल्य 5–12 टन्काह, अच्छी दिखने वाली लड़की का मूल्य 20 से 40 टन्काह, और सुंदर उच्च परिवारों की लड़की का मूल्य 1000 से 2000 टन्काह होता था। **(हिस्ट्री ऑफ खिलजीज़, के.एस.लाल, पृ. 313–315)**

तैमूर

तैमूर ने अपनी जीवनी में अपनी महत्वाकांक्षा को इस प्रकार बलपूर्वक लिखा – ''लगभग उसी समय मेरे मन में एक अभिलाषा आई कि मैं गैर–मुसलमानों के विरुद्ध एक अभियान प्रारंभ करूं और 'गाज़ी' बन जाऊँ; मुझे यह बताया गया था कि अविश्वासियों का कातिल गाज़ी हो जाता है और यदि वह स्वयं मर जाता है तो

शहीद हो जाता है। इसी कारण मैंने यह निश्चय किया कि भारत में अभियान प्रारंभ करूं जिससे अविश्वासियों और मूर्तिपूजकों को सही मत में लाऊं (मुसलमान बनाऊँ) इस उद्देश्य के लिए मैंने कुरआन में शुभ सूचना खोजना चाही और जो आयत निकली वह इस प्रकार थी :– 'हे! पैगम्बर अविश्वासियों और विश्वासहीनों के विरुद्ध युद्ध करो और उनके प्रति कठोरता का व्यवहार करो।'' मेरे अफसरों ने बताया कि हिन्दुस्तान के निवासी अविश्वासी और विश्वासहीन हैं। सर्वशक्तिमान अल्लाह के आदेशानुसार आज्ञापालन करते हुए मैंने उनके विरुद्ध अभियान की आज्ञा दे दी। **(तैमूर की जीवनी–मुलफुजात–ई–तैमूर : इलियट और डाउसन, खण्ड–3, पृ. 394–95)**

उलेमाओं और सूफियों द्वारा जिहाद का अनुमोदन

तैमूर लिखता है कि इस्लाम के विद्वान् लोग मेरे समक्ष आए और अविश्वासियों के विरुद्ध संघर्ष के विषय में वार्तालाप प्रारंभ हुआ; उन्होंने अपनी सम्मति दी कि इस्लाम के सुल्तान का और उन सभी लोगों का जो मानते हैं ''कि अल्लाह के सिवाय अन्य कोई ईश्वर नहीं है और मोहम्मद अल्लाह का पैगम्बर है'', यह परम कर्तव्य है कि वह इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए जिहाद करें जिससे उनका पंथ सुरक्षित रह सके, और उनकी विधि–व्यवस्था सशक्त रहे और वे अधिकाधिक परिश्रम कर अपने पंथ के शत्रुओं का दमन कर सकें। विद्वान् लोगों के ऐसे आनन्ददायक शब्द जैसे ही सरदारों के कानों में पहुँचे उनके हृदय हिन्दुस्तान जाकर 'जिहाद' करने के लिए लालायित हो उठे।

बाबर (1519 से 1530)

मुगल साम्राज्य का भारत में संस्थापक बाबर बना। बाबर ने स्वयं अपने जीवन और विचारों का पूरा लेखा–जोखा ''तुजुके बाबरी'' में लिख कर, भावी पीढ़ी के लिए छोड़ दिया। **तुजुके बाबरी का अंग्रेजी अनुवाद बेवरीज ने किया** जो सहज ही उपलब्ध है। यह बाबर के जीवन का स्वयं लिखा हुआ प्रामाणिक ग्रंथ है।

''अपने कथन के अनुसार बाबर भारत मे हिन्दुओं की लाशों के पहाड़ लगाकर प्रसन्न होता था। इस्लाम की खातिर मैं जंगलों में भटकता रहा तथा हिन्दुओं से लड़ने के लिए तैयारियां कीं। अल्लाह का लाख–लाख शुक्र है, मैं गाज़ी बना।''

निकृष्ट और पतित हिन्दुओं का वध कर
गोली और पत्थरों से बना दिए मृत देहों के पर्वत,
गजों के ढेर जैसे विशाल।
और प्रत्येक पर्वत से बहती रक्त की धाराएं।
हमारे सैनिकों के तीरों से भयभीत,
पलायन कर छिप गए और कुंजों और कंदराओं में।

इस्लाम के हित घूमता फिरा मैं बनों में,
हिन्दू और काफिरों से युद्ध की खोज में।
इच्छा थी बनूंगा इस्लाम का शहीद मैं।
उपकार उस खुदा का कि बन गया गाज़ी।

'बाबरनामा' अंग्रेजी में अनु. ए.एस.बेवरीज, पृ. 574–575

बाबर ने लिखा है कि एक अवसर पर उसे अपना डेरा तीन बार ऊँचे स्थान पर ले जाना पड़ा, क्योंकि भूमि पर खून ही खून भर गया था।

अकबर बादशाह

अकबर स्वतंत्र विचारों वाला बादशाह था तथा उस पर उलेमाओं का असर कम था। इस्लामिक राज के दौरान, वह अकेला बादशाह हुआ जिसने मुल्लाओं द्वारा कहे को आँख मीच कर नहीं माना।

अकबर ने कुछ वर्षों तक राज करने के बाद एक नई प्रथा शुरू की जो इस्लामी शासकों द्वारा पहले कभी नहीं अपनाई गई तथा जिसको इस्लाम विरोधी माना जाता है। सन् 1574 में अकबर ने एक इबादत खाना बनवाया जिसमें सभी धर्मों तथा मज़हबों के अति विद्वान् सूफी, संत, डॉक्टर, प्रचारक, वकील, सुन्नी, शिया, ब्राह्मण, बौद्ध, ईसाई, यहूदी तथा ज़ोराश्ट्रीयन को बुलाकर अपने सामने खुले मंच पर बैठाकर तथा निडर होकर तर्क करने की अनुमति रहती थी। (पृ. 59–60 इलियट एण्ड डाउसन)। ये संगोष्ठियां शुक्रवार की रात्रि को होती थीं और कई बार अकबर सारी रात इनमें तर्क सुनते बैठा रहता था।

एक शुक्रवार रात की मज़हबी गोष्ठी का वृत्तांत जानना आवश्यक है। उस रात इबादत खाने में मशहूर पादरी 'पादरे रडेल्फ' जो ईसाइयों के सरताज़ थे, आए और उनकी बहस मुसलमानों के विद्वानों से होनी शुरू हुई। दोनों ओर से नए–नए तर्क दिए गए। कहते हैं मुसलमानों के सब तर्कों की काट की गई और इन विद्वान् मुसलमानों को मुँह की खानी पड़ी। गर्मा–गर्मी शुरू हो गई और एक दूसरे के मजहबी ग्रंथों पर बिना–सबूत ज़ोर–ज़ोर बहस होने लगी। यकायक शांत होकर पादरी ने एक प्रस्ताव रखा ''यदि इन मुस्लिम विद्वानों को हमारी पुस्तक ऐसी गलत लगती है और इनका विश्वास है कि ''कुरान शरीफ ही एकमात्र अल्लाह का ग्रंथ है, तो अग्नि परीक्षा की जाए।'' एक अग्नि कुंड जलवाया जाए और मैं गॉस्पिल हाथ में लेकर तथा उलेमा कुरान शरीफ हाथ में लेकर उस अग्निकुंड में चलेंगे और सत्य की विजय होगी। काले दिल वाले झगड़ालू लोग इस परीक्षा से मुँह चुराने लगे, केवल चिल्ला–चिल्ला कर बड़बड़ाने लगे। इस घटना का अकबर बादशाह के दिल और दिमाग पर अत्यंत बुरा प्रभाव पड़ा – उनकी आँखें खुल गईं और उसने कहा कि ''मनुष्य का केवल बाहरी कवच और केवल मुसलमान होने से कुछ प्राप्त नहीं होता। **मैंने बहुत से ब्राह्मणों को अपनी शक्ति के डर से अपने पूर्वजों**

के मज़हब में बदला (मुसलमान बनाया) परन्तु अब जब मेरे मस्तिष्क से झूठ के बादल हट गए हैं, मुझे विश्वास हो गया है कि झूट छलकपट के बादल हटाए और सच के परखे बिना कोई कदम न उठाए। केवल सुन्नत कराकर और बादशाह के डर से पृथ्वी पर दण्डवत् करके अल्लाह नहीं मिल सकता।

फलस्वरूप सन् 1579 में एक सरकारी आदेश जारी किया गया जिसके द्वारा मज़हबी आपसी झगड़ों का फैसला करने का अधिकार अकबर ने अपने हाथ में ले लिया। गत चार सौ वर्षों के मुस्लिम इतिहास में पहली बार किसी मुस्लिम बादशाह ने यह अधिकार उलेमाओं के हाथों से छीनकर अपने हाथ में लिया। परिणाम निकला कि उलेमा शक्तिहीन हो गए, तथा वे छटपटाने लगे। मुस्लिम समाज में उनका आधिपत्य और प्रभाव दिन–प्रतिदिन कमज़ोर पड़ने लगा। सैयद अबुल हसन अली नदवी (अली मियां) अपनी पुस्तक सेवियर्स ऑफ इस्लामिक स्पीरिट–3, पृ. 79 में लिखते हैं कि डॉक्टर मुहम्मद बकार के अनुसार ''अबुल फज़ल का बादशाह अकबर के मज़हबी बदलाव लाने में बहुत बड़ा हाथ था। अली मियां यह भी लिखते हैं कि मौलाना बदायूंनी और अनेक उलेमाओं की जिनकी राय अकबर बादशाह स्वीकार नहीं करता था, मानना है कि अबुल फज़ल ने अपने पिता मुल्ला मुबारक की तरह कट्टर मज़हबी न होने के कारण अकबर को गैर–मज़हबी बनाने में सार्थक भूमिका निभाई और वह इसके ज़िम्मेदार थे। परिणाम यह निकला कि सन् 1583 में अकबर बादशाह ने एक नया मज़हब दीन–ए–इलाही शुरू किया। अकबर ने उलेमाओं के प्रभाव को समाप्त कर दिया। परिणामस्वरूप उलेमाओं ने राजदरबार में जाना ही बंद कर दिया।

इस्लाम को स्थापित हुए लगभग एक हज़ार साल हो चले थे, तथा सम्राट अकबर की राय में पैगम्बर मुहम्मद का मज़हब एक हज़ार वर्ष चलना था जो पूरा हो गया था। अली मियां कहते हैं कि विद्वान् इतिहासकार लेखक सुलायमन नदवी के हिन्दुस्तान में इस्लाम के प्रसार में उतार–चढ़ाव के विलक्षण विचारों को मैं उजागर करना उचित समझता हूँ। ''यात्री की यात्रा प्रारम्भ हुए एक हज़ार वर्षों बाद, और चार सौ वर्ष निद्रा में बिताने पर ईरान से एक प्रभावशाली व्यक्ति ने अकबर के शासनकाल में आकर अकबर के कानों में कहा कि पहली सहस्राब्दी के अंत में पैगम्बर के मजहब के सफर का अंत हो गया, और अब समय है कि एक अनपढ़ शहंशाह (अकबर), एक अनपढ़ पैगम्बर के मज़हब को अपने दीन–ए–इलाही से बदल दे। इसलिए अकबर ने निडर होकर इस्लाम के नियमों को बदलना शुरू कर दिया। **नए मज़हब में आने वालों को ''ला–इल्ला–इल–इल्लाह–अकबर खलीफत अल्लाह'' की कसम लेनी पड़ती थी।** इस नए मज़हब के अन्तर्गत नए–नए कानून बनाए गए – ब्याज पर कर्ज लेना, जूआ खेलना, शराब और सूअर का मांस नए मज़हब में मान्य हो गए। **गाय वध बंद कर दिया गया। खतने**

की प्रथा बंद कर दी गई। इसके अतिरिक्त **अरबी भाषा को पढ़ना और सीखना अपराध माना जाने लगा। अहमद, मुहम्मद, मुस्तफा जैसे नाम रखने पर रोक लगा दी गई।** इसके साथ–साथ **दिन में पाँच बार नमाज़ पढ़ने पर रोक लगा दी गई तथा रोज़े रखना और हज पर जाना भी रोक दिया गया।** मौलाना बदायूंनी के अनुसार अकबर का न केवल इस्लाम से रिश्ता टूटा बल्कि वह इस्लाम से संबंधित सभी मान्यताओं और इस्लाम के पैगम्बर का भी विरोधी हो गया। संक्षेप में कहना चाहिए कि अकबर की मज़हबी नीतियों का परिणाम यह निकला कि इस्लाम के जिन महारथियों ने 400 साल तक मेहनत और लड़ाई करके इस्लाम का जो वृक्ष हिन्दुस्तान में लगाया था, सूखता–सा दिखने लगा। (पृ. 100, खण्ड–सेवियर्स ऑफ इस्लामिक स्पिरिट) यदि परिस्थिति न बदली जाती और कोई विशेष व्यक्ति आगे बढ़कर न आता तो निःसंदेह हिन्दुस्तान भी उसी शताब्दी में स्पेन की तरह हो जाता जहाँ से मुसलमानों को ईसाइयों द्वारा तीन विकल्प दिए गए थे – 1. अपने मजहब (ईसाई मत में) वापिस आना, 2. स्पेन देश छोड़ कर भाग जाना 3. या फिर ईसाइयों द्वारा मारे जाना। इस प्रकार स्पेन के ईसाई जगत ने तो बुद्धिमानी से इस्लाम से मुक्ति पा ली थी परन्तु हिन्दुस्तान में इस्लाम का एक ऐसा सितारा सामने आया **जिसने इस्लाम को पुनः पटरी पर बिठा दिया। वह व्यक्ति था एक मौलाना–नाम था शेख अहमद सरहिन्दी (सरहिन्द का रहने वाला)।**

मुस्लिम काल में केवल अकबर बादशाह था जिसने हिन्दुस्तान में हिन्दुओं के प्रति सहानुभूति का रुख अपनाया। उसने अपने राज्यकाल में निम्नलिखित कार्य किए जो प्रशंसनीय हैं :–

1. **उसने देश की नागरिकता में भेदभाव का कानून समाप्त कर सब नागरिकों के लिए एक समान कानून लागू किया।**
2. उसने लड़ाई में पकड़े जाने वाले कैदियों को गुलाम बनाने की प्रथा बंद कर दी (1562 ई.)
3. उसने हिन्दुओं पर लगने वाला धार्मिक यात्रा टैक्स, तथा खतरनाक जजिया टैक्स समाप्त कर दिया (1564 ई.)
4. उसने हिन्दू तथा ईसाइयों को मंदिर तथा चर्च बनाने की इजाज़त दे दी।
5. जिन हिन्दुओं को जबरन मुसलमान बनाया गया था उन्हें वापिस अपने घर में आने की अनुमति दे दी। (1601 ई.)
6. जिन हिन्दू बालकों को मां–बाप ने गुलाम बनाने के लिए बेच

दिया था उन्हें वापिस खरीदने की इजाजत दे दी।

7. शरीया का कानून जिसके अन्तर्गत इस्लाम तथा पैगम्बर मुहम्मद के खिलाफ बोलने एवं टिप्पणी करने वालों को सजा–ए–मौत मिलती थी, उसे समाप्त कर दिया गया।

8. उसने सती प्रथा बंद कर दी। जब तक कि वह स्वेच्छा और बिना दबाव हो (1590–91)

9. उसने **मुसलमानों द्वारा चार शादियां करने का कानून बदल कर केवल एक भाादी करने का कानून बनाया,** दूसरी शादी तभी की जा सकती थी यदि पहली स्त्री मां न बन सके

10. **उसने चचेरे–ममेरे भाई और निकट संबंधियों की भाादियों पर रोक लगा दी।**

11. बाल–विवाह रोका तथा उसने 16 वर्ष से कम उम्र के लड़के और 14 वर्ष से कम उम्र की लड़की की शादी करने पर रोक लगा दी

12. **हिन्दू विधवा विवाह आरंभ किया।**

अकबर की उदार नीतियां उसके मरते ही समाप्त कर दी गईं और मदरसों में पढ़े उलेमाओं ने फिर से कमर कसनी शुरू की।

अली मियां (अबुल हसन अली नदवी) अपनी पुस्तक ''दि न्यू मीनेस एण्ड इट्स–आन्सर'' में लिखते हैं : ऐसा लगता था कि अकबर जैसे शक्तिशाली सम्राट ने इस देश (हिन्दुस्तान) को जो 400 वर्ष तक इस्लामी राज्य की सुखद छाया में रह चुका था, बहुदेवतावाद की कीचड़ में डुबाने का लगभग निश्चय ही कर लिया था .....। आगे अली मियां फरमाते हैं ..... अकबर का प्रत्येक वंशज अपने पूर्वज (अकबर) से बेहतर साबित हुआ। फिर आया औरंगजेब जिसका शासनकाल हिन्दुस्तान में इस्लामी और मज़हबी सुधार के इतिहास में सर्वश्रेष्ठ अध्याय है। अली मियां ने आशा व्यक्त की है यह इतिहास फिर दोहराया जाएगा। अली मियां जैसे विख्यात उलेमाओं के विचारों को मन में बैठाना चाहिए। अली मियां जैसे ही मध्यकालीन अन्य उलेमाओं ने, जिन्होंने हिन्दुस्तान के मदरसों में इस्लामी शिक्षा प्राप्त की थी, हमारे देशवासियों को अपने शिकंजे में बांध कर हिन्दुओं पर तरह–तरह के अत्याचार अपनी जिहादी फौजों से करवाए। जज़िया कर जो जिहाद का ही एक अंग है, कड़ाई से लगवाया गया। इन सुल्तानों तथा बादशाहों को मज़हबी मामलों में उलेमाओं की राय मानने के अलावा और कोई विकल्प नहीं रहता था। सच तो यह है कि राज्य इन्हीं उलेमाओं के आदेशों तथा बताए रास्तों पर चलाया जाता था।

इसीलिए अली मियां की आशा को गंभीरता से लेना चाहिए। यदि इतिहास से शिक्षा नहीं ली गई तो निश्चित इतिहास दोहराया जा सकता है।

सन् 1605 में अकबर की मृत्यु हुई। उलेमाओं ने चैन की सांस ली। उनके दिलों में तिलमिलाहट के स्थान पर आशा की किरण जागृत हुई। उनमें पुनः इस्लामी राज्य बहाल करने का जज्बा पैदा हुआ। एक सुनिश्चित कार्यक्रम बनाया गया। इसका नेतृत्व नए जोश के साथ **शेख अहमद सरहिंदी** ने किया। इन उलेमाओं के भाग्यवश अकबर का उत्तराधिकारी जहाँगीर हिन्दुस्तान की गद्दी पर बैठा।

अकबर के काल की एक–दो घटनाएं बतानी आवश्यक हैं। उनके एक दरबारी इमाम अब्दुल कादिर बदायूंनी ने अपने इतिहास अभिलेख, 'मुन्तखाव–उत–तवारीख' में लिखा था कि 1576 ई. में जब शाही फौजें महाराणा प्रताप के विरुद्ध युद्ध के लिए जा रहीं थीं तो उसने (बदायूंनी) अकबर के सम्मुख जाकर इस युद्ध–अभियान में सम्मिलित होने की पेशकश की। उसने बादशाह के सामने जाकर निवेदन किया कि वह अभियान में सम्मिलित होकर हिन्दुओं के रक्त से अपनी इस्लामी दाढ़ी को भिगो लेने का इच्छुक है। अकबर यह सुनकर अत्यंत प्रसन्न हुआ, उसमें भी जिहाद का जज़्बा उठा तथा हर्षित होकर मौलाना बदायूंनी को सोने के सिक्के भेंट किए।

एक और घटना इस प्रकार थी – मौलाना बदायूंनी ने लिखा ''हल्दीघाटी के युद्ध में अकबर की फौज के राजपूत महाराणा प्रताप के राजपूतों से लड़ रहे थे और उनमें कौन–सा राजपूत किस ओर था, इसका भेद कर पाना असंभव हो रहा था, तब अकबर की ओर से युद्ध कर रहे मौलाना बदायूंनी ने अपने सेनानायक असफ खां से पूछा कि ''वह किस पर गोली चलाए ताकि शत्रु को ही आघात हो, और वह ही मरे।'' कमाण्डर असफ खां ने उत्तर दिया कि ''यह बहुत अधिक महत्व की बात नहीं कि गोली किसको लगती है क्योंकि सभी युद्ध करने वाले काफिर हैं, गोली जिसे भी लगे काफिर ही मरेगा, जिससे लाभ इस्लाम का ही होगा।'' **(मुन्तखाब–उत–तवारीख : अब्दुल कादिर बदायूंनी, खण्ड–2, अकबर दि ग्रेट : वी स्मिथ, मुद्रित 1962; हिस्ट्री एण्ड कल्चर आफ दि इंडियन पीपुल, दी मुगल एम्पायर** : स. आर.सी. मजुमदार, पृ. 132)

जहांगीर बादशाह

जहांगीर का बाल्यकाल अकबर की उदार नीतियों के दौर में गुज़रा था। वह बिल्कुल मज़हबी नहीं था बल्कि वह तो आलसी, अत्यधिक शराब पीने वाला, तथा अफीम खाने जैसे घोर इस्लाम विरोधी आदतों का शिकार था। मज़हब के मामले में वह एक कोरे कागज की भाँति था। उलेमाओं को इसका लाभ उठाने का इससे बढ़कर और कौन–सा सुनहरा अवसर मिलता। शेख अहमद सरहिन्दी ने जहांगीर

से वायदा करवाया कि वह इस्लाम मजहब की रक्षा करेगा जिससे उलेमाओं की आशा बढ़ी। शेख अहमद का मानना था कि अकबर के अनेक राज–दरबारी उसकी इस्लाम विरोधी नीतियों के समर्थक नहीं थे – आखिर वे सब इस्लाम मजहब के अनुयायी ही थे तथा मदरसों से इस्लामी तालीम पाए थे।

शेख अहमद सरहिन्दी ने जाने–पहचाने राजदरबारियों को पत्र लिखने का सिलसिला प्रारंभ किया तथा पत्रों में शब्दों के जाल से अपनी चतुरता प्रकट की। सच यह था कि लिखे गए पत्रों में एक टूटे हुए दिल तथा मचलती रूह की गाथा वर्णित की जाती थी। इन पत्रों ने अपना काम किया और पुनः मुगल साम्राज्य को स्थिर करने में विशेष भूमिका निभाई। कुछ पत्रों का ब्यौरा निम्नलिखित है :–

नवाब सईद फरीद से जो अकबर के राजदरबारियों में विश्वासी था निवेदन किया कि वह जहांगीर पर ज़ोर डाले और अकबर के इस्लाम विरोधी कानून को बदलवाए। शेख अहमद सरहिन्दी ने इस्लाम को पुनः स्थापित करने का आन्दोलन अपनी कार्यकुशलता से आलिम अफसरों द्वारा जहांगीर से कदम–दर कदम मज़हबी नीतियां अपनाने तथा पुनः इस्लामी ढाँचे में तब्दील करने का काम शुरू हुआ।

सईद फरीद बुखारी को लिखे पत्र में इच्छा व्यक्त की गई कि जहांगीर पैगम्बर के दिखाए सच्चे रास्ते को तथा पूर्वजों जैसे बाबर के रास्ते को अपनाए। पत्र में आगे लिखा ''बादशाह का अपनी प्रजा से वही रिश्ता है जो दिल का शरीर से होता है : यदि दिल स्वस्थ है तो शरीर भी स्वस्थ रहता है, इस कारण बादशाह का इलाज करना तो समस्त संसार का दुःख दूर करना और इसके विपरीत बादशाह को कमजोर करना सारे संसार को बरबाद करने के बराबर है। विदित हो कि अकबर के शासनकाल में इस्लाम के उलेमाओं को कितनी मुसीबत में डाला गया था। इन पैगम्बर के अनुयायियों की तौहीन की जाती थी और इसके विपरीत पैगम्बर के न मानने वालों को इज़्जत बख्शी जाती थी। परन्तु अब तो इस्लामी बादशाह गद्दी पर बैठ गया है इस कारण सबको प्रयास करना चाहिए कि **शरीया कानून पुनः स्थापित हो जिसके फलस्वरूप मुसलमान पुनः शक्तिशाली बन जाएं।''**

इसी प्रकार दूसरे **राजदरबारियों, खान आज़म तथा खान जहान को** पत्र लिखे गए। खान जहां को लिखे पत्र में लिखा कि वह जहांगीर के बहुत नज़दीकी हैं तथा उनकी बात मानी जाती है इसलिए वह अपनी बादशाह से निकटता को इस्लाम की सेवा में लगाए और धीरे–धीरे बादशाह के कोनों में अहेले–सुन्नत डालते रहें। इसी प्रकार बादशाह को इस्लामी तथा गैर–इस्लामी होने में भी अंतर समझाए। **''इस्लाम की शान काफिरों को नीचा दिखाने में है – जो हिन्दुओं की इज्जत करता है वह अपने मजहब को गिराता है। उन्हें तो सर्वदा आतंकित रखना चाहिए।'' (मुस्लिम स्टेट इन इंडिया'' लेखक**

–के.एस.लाल, पृ. 114)

इसी प्रकार **एक पत्र लाला बेग को भी लिखा गया** तथा पत्र लिखने का सिलसिला जारी रहा।

लिखे गए पत्रों द्वारा किए प्रयत्न सफल होने लगे और धीरे–धीरे जहांगीर को अपनी गलती का अहसास हुआ तथा इच्छा प्रकट की कि चार मज़हबी विद्वानों को राज दरबार में रखा जाए जो बादशाह को मजहबी मामलों तथा शरीया कानून के बारे में स्पष्टीकरण देते रहें। इस प्रस्ताव से शेख अहमद सरहिन्दी को संतुष्टि न हुई तथा फिर शेख फरीद तथा नवाब सरद जहान को पत्र लिखकर बादशाह से अपना आदेश बदलने पर जोर दिया। कारण था ऐसा करना उपयोगी न होगा। केवल एक ही मजहबी और निःस्वार्थी विद्वान् का चयन कर नियुक्त किया जाना चाहिए ताकि विवादास्पद राय न दे दी जाए। इस समय कोई भी गलत कदम उठाने से भविष्य में हानि संभव है। यह शेख अहमद की दूरदर्शिता को दर्शाता है क्योंकि वह अकबर के कार्यकाल की मज़हबी परिस्थितियों से भलीभाँति परिचित था।

विदित है कि मुल्लाओं एवं उलेमाओं ने जहांगीर की कमजोरियों का अत्याधिक लाभ उठाया और उसे अकबर की नीतियों को निरस्त करने पर विवश किया। उसने सिक्खों के गुरु अर्जुन देव का क्रूरतापूर्वक वध करवाया। **जहांगीर स्वयं अपनी आत्मकथा तुजुके जहांगीरी में अपनी क्रूर कर्मों पर गर्व करता है।**

शाहजहाँ

जहांगीर के मरते समय तक भारत में इस्लाम पुनः अपनी पुरानी स्थिति पर पहुँच चुका था। शाहजहाँ अपने पिता जहांगीर से कहीं अधिक इस्लामी निकला। शाहजहाँ जिसकी रगों में यद्यपि हिन्दू का खून था, फिर भी वह शेखी मारा करता था कि, 'वह तैमूर का वशंज है, जो भारत में तलवार और अग्नि लाया था। उस असभ्य उज़बेक (तैमूर) की हिन्दुओं के रक्तपात की उपलब्धि से वह इतना प्रभावित था कि उसने अपना नाम 'तैमूर द्वितीय' रख लिया। **(दि लिगेसी ऑफ मुस्लिम रूल इन इंडिया, के.एस.लाल, पृ. 132)**। शाहजहाँ के गद्दी पर बैठते ही ज्ञात हुआ कि जहांगीर के शासन में बहुत से नए मंदिरों का निर्माण प्रारम्भ किया गया था। हिन्दुओं के गढ़ बनारस में अनेक मंदिरों का निर्माण पूरा नहीं हुआ था। यद्यपि हिन्दू उनको पूरा करना चाहते थे, परन्तु इस्लामी मज़हब के रक्षक **बादशाह शाहजहाँ ने आदेश दिया कि बनारस और उसके पूरे साम्राज्य में तमाम नए मंदिर ध्वस्त कर दिए जाएं।** इस आदेश पर पालन हुआ तथा बादशाह को सन् 1633 ई. में इलाहाबाद सूबे से खबर भेजी गई कि बनारस में 76 मंदिर गिरा दिए गए हैं। इसी प्रकार सन् 1635 ई. में शाहजहाँ के सैनिकों ने बुंदेलखण्ड के राजा के दो पुत्रों, एक पौत्र और एक भाई को पकड़ कर शाहजहाँ के पास भिजवाया जिनको शाहजहाँ ने जबरन मुसलमान बनवाया। एक वयस्क पुत्र उदयभान और

भाई श्यामदेव का जिन्होंने इस्लाम स्वीकार न किया, वध करवा दिया गया। उनकी रानियों को हरम में भेज दिया गया।

पाठकों को याद होगा कि अकबर की उदार नीतियों में मुसलमान लड़कियां हिन्दुओं से शादी कर पाती थीं, इस प्रथा को शाहजहाँ के हुकमनामे ने निरस्त कर दिया, जिसके अनुसार यदि कोई हिन्दू, मुस्लिम लड़की से विवाह करे तो उसे इस्लाम स्वीकार करना आवश्यक कर दिया गया। परिणाम हुआ कि **भाहजहाँ के भासनकाल में केवल भादनौर में ही चार से पाँच हजार हिन्दुओं को इस्लाम स्वीकार करना पड़ा।** इसी प्रकार गुजरात में 70 और पंजाब के 400 हिन्दू मुसलमान बने। यह प्रथा भारत में उसी काल से चली आ रही है।

मुगल काल में हिन्दू किसानों की हालत बहुत चिंताजनक होती गई थी और उन पर कर–भार बढ़ता जाता था। **भाहजहाँ के आते समय तक किसानों को लाचार होकर अपनी औरतों और बच्चों को मालगुजारी अदा न कर सकने के कारण बेचना पड़ा।** मैनविख 1628–43 लिखते हैं कि किसानों को जबरन उठाकर बाजारों और मेलों में बेचने के लिए ले जाया जाता था जिन्हें मजबूर होकर अपनी औरतों तथा बच्चों को बिलखता छोड़ कर जाना पड़ता था **('मुस्लिम स्टेट इन इंडिया' पृ. 134)**। स्पष्ट है कि शाहजहाँ बादशाह को इन मजबूर किसानों पर कभी दया नहीं आई, जिससे उसकी क्रूरता और हिन्दुओं के प्रति घृणा की झलक स्पष्ट देखी जा सकती है।

अनेक इतिहासकारों, विशेषकर वामपंथी इतिहासकारों ने शाहजहाँ को एक महान् निर्माता के रूप में चित्रित किया है। उसकी सौन्दर्यशास्त्र की अभिरुचि वाले इन्सान के रूप में प्रशंसा की जाती है। किन्तु इस तथाकथित सौन्दर्यशास्त्र के प्रति अभिरुचि रखने वाले मुजाहिद ने, अनेक हिन्दू मंदिर और अनेक हिन्दू भवन निर्माण कला के केन्द्रों का, बड़े असाधारण जोश से विध्वंस किया था।

शाहजहाँ के राज्यकाल के दौरान सन् 1632 में एक विदेशी पर्यटक पीटर मुण्डी ने सन् 1632 में आगरा से पटना तक की यात्रा की जिसमें चार दिन लगे। यात्रा के दौरान पीटर मुण्डी ने 200 मीनारें सड़क के किनारे बनी देखीं जिनमें कुल मिलाकर 7000 मनुष्यों के सिर चिने हुए थे। चार माह के पश्चात् अपनी वापसी के दौरान उन्होंने पाया कि इस दौरान 60 अतिरिक्त मीनारें बनायी जा चुकीं थी, जिसमें 2000 से 2400 कटे सिर जोड़ दिए गए थे तथा मीनारों का बनना जारी था, यह वर्णन शाहजहाँ के काल में हिन्दुओं की दुदर्शा को दर्शाता है। (दि लगेसी ऑफ मुस्लिम रूल इन इंडिया, के.एस.लाल, पृ. 266)

औरंगजेब द्वारा जिहाद

औरंगजेब कट्टर मुसलमान था। **उसका बाल्यकाल भोख अहमद सरहिंदी**

के पुत्र मौलाना मासूम सरहिन्दी की संरक्षकता में बीता जिससे उसे इस्लाम के मूल सिद्धांतों की तालीम मिली। वह स्वयं इस्लाम का विद्वान् और कट्टर मुसलमान था, साथ–साथ उलेमाओं का उस पर पूर्ण प्रभाव था। गद्दी पर बैठते ही उसने अपनी कट्टरता का परिचय देना शुरू कर दिया। सन् 1666 में मथुरा स्थित कृष्ण जन्मभूमि मंदिर में दाराशिकोह (औरंगजेब का बड़ा भाई) द्वारा लगाई गई पत्थर की जाली हटाने का आदेश दिया।

सन् 1669 में ठट्टा, मुल्तान और बनारस में पाठशालाएं और मंदिर तोड़ने के आदेश जारी किए। साथ–साथ हिन्दुओं की काशी नगरी में विश्वनाथ मंदिर ध्वस्त किया और उसके स्थान पर मस्जिद का निर्माण किया।

सन् 1670 में एक शाही फरमान के अंतर्गत मथुरा स्थित कृष्ण जन्म भूमि मंदिर तोड़ा गया। तोड़ कर उसी स्थान पर ईदगाह बनाई गई। हिन्दुओं के तोड़े गए मंदिर की मूर्तियों को आगरा स्थित जहांआरा की मस्जिद की सीढ़ियों पर काफिरों को नीचा दिखाने के लिए तथा मुसलमानों के पैरों में रौंदने के लिए लगा दिया गया।

सौरों (कासगंज, उत्तर प्रदेश) के निकट श्रीरामचन्द्रजी का मंदिर तथा उज्जैन स्थित समस्त मंदिर तुड़वा दिए गए।

सन् 1672 ई. में हरियाणा प्रान्त के नारनौल में सतनामियों का कत्ल दस हजार फौज भेज कर करवाया। इसी प्रकार कश्मीर के ब्राह्मणों का बलात् धर्म परिवर्तन का गुरुतेग बहादुर द्वारा विरोध करने से वध करवाया गया। सिक्खों के गुरु अर्जुन देव का वध जहांगीर पहले ही अपने शासनकाल में करवा चुका था।

औरंगज़ेब की बर्बरता का घड़ा भरा जब गुरुतेग बहादुर, भाई मतिदास, दयाल दास एवं सती दास को इस्लाम न स्वीकारने पर मृत्युदण्ड दिया गया। गुरुतेग बहादुर को सरहिंद जेल में अनेक यातनाएं दी गईं, और अंत में 5 नवम्बर 1675 में उन्हें लोहे के पिंजरे में बंद कर एक पक्षी की तरह दिल्ली लाया गया। दिल्ली के सूबेदार और शाही काज़ी सक्रिय हो गए और उन्होंने गुरुतेग बहादुर के सामने 3 विकल्प रखे – वे चमत्कार दिखाएं, इस्लाम स्वीकार करें या मृत्युदण्ड भुगतें। गुरु तेग बहादुर और उनके तीन शिष्यों – भाई मति दास, भाई दयाल दास, और भाई सती दास ने पहले दोनों विकल्पों को अस्वीकार किया और तीसरे विकल्प मृत्यु दण्ड को चुना। भाई मति दास के दोनों पैरों को बांध कर उन्हें आरे से दो टुकड़ों में चीरा गया; भाई दयाल दास को खौलते पानी के कढ़ाव में उबाल कर मारा गया जबकि भाई सती दास के शरीर पर रुई लपेटकर उन्हें जिन्दा जलाया गया। तीनों शिष्यों की शहादत के बाद, 11 नवम्बर 1675 को गुरु तेग बहादुर का सिर धड़ से

अलग कर दिया गया।

सन् 1679 में औरंगजेब द्वारा जज़िया कर पुनः हिन्दुओं पर लगाया गया। स्मरण रहे कि अकबर ने जज़िया कर पर रोक लगा दी थी। पुनः जज़िया कर लगाने से दिल्ली के बहुत बड़ी संख्या में हिन्दू बादशाह के झरोखे के नीचे एकत्रित हो गए – प्रार्थना करने के लिए कि वे लोग जज़िया कर अदा करने में असमर्थ हैं, परन्तु बादशाह ने उनकी शिकायत पर ध्यान नहीं दिया। तत्पश्चात् हिन्दुओं ने शुक्रवार के दिन जब औरंगजेब नमाज के लिए जामा मस्जिद जा रहा था बहुत बड़ा प्रदर्शन किया और महल से मस्जिद की सड़क पर एकत्रित हो गए। वह बादशाह से नम्र व्यवहार की दुहाई कर रहे थे। कट्टर इस्लमी बादशाह को यह कैसे बर्दाश्त होता; उसने हाथी बुलवाकर इन लाचार हिन्दुओं को कुचलवाना शुरू कर दिया।

सन् 1680 में उदयपुर के मंदिरों को ध्वस्त किया गया, 172 मंदिरों को तोड़ने की सूचना राजदरबार में आई। इसी प्रकार चित्तौड़ के 62 मंदिर तोड़े गए। 66 मंदिर आंबेर में तोड़े गए। तथा मेवाड़ में सोमेश्वर मंदिर, सतारा में खांडेराव का मंदिर तुड़वाया गया। मंदिर तोड़ने की प्रथा, स्मरण होगा, स्वयं पैगम्बर मोहम्मद ने शुरू की थी, इस कारण कट्टर इस्लामी औरंगज़ेब ने ऐसा करके अपनी मज़हबी निष्ठा का परिचय दिया।

सन् 1689 में बीजापुर के मंदिर धवस्त किए गए। वहीं पर मस्जिदें बनाई गईं।

सन् 1690 में ऐलोरा, त्रयम्बकेश्वर, नरसिंहपुर, पंढरपुर के मंदिर तुड़वाए गए।

पाठकों को स्मरण होगा कि भारत में मंदिर तोड़ने का सिलसिला 712 ई. में मोहम्मद बिन कासिम ने प्रारंभ किया था और एक हजार साल तक निरंतर भारत के मंदिर तोड़े जाते रहे।

पैगम्बर मोहम्मद ने स्वयं मक्का तथा आस–पास के मंदिरों को अपने जीवन काल में तुड़वाया था। इस्लाम में पैगम्बर मोहम्मद द्वारा किए गए हर–एक कार्य को मज़हबी माना जाता है। यह पैगम्बर का ''सुन्ना'' या कार्यकलाप ही था जिसका अनुसरण करना प्रत्येक मज़हबी मुस्लिम के लिए अनिवार्य और पवित्र कार्यकलाप है।

उपरिलिखित वर्णन में हिन्दुस्तान के केवल कुछ सुल्तानों तथा बादशाहों द्वारा देश की समस्त हिन्दू प्रजा को प्रताड़ित करने, उनके पूजा–स्थलों (मंदिरों) और पाठशालाओं को ध्वस्त कर उन्हीं स्थानों पर इस्लाम के गौरव का झण्डा गाड़ने के लिए मस्जिदें बनवाना, कत्लेआम किया जाने का वर्णन है। असंख्य स्त्रियों, बच्चों को गुलाम बनाकर उन्हें बाजारों में बेचा गया। इसी कड़ी में औरंगजेब का कार्यकलाप भी वर्णन किया गया है।

हकीकतराय

वीर हकीकत का बलिदान क्या देश को याद है

हकीकत तीव्र बुद्धि का बालक था। सरकारी कामकाज की भाषा उर्दू सीखने के लिए उसे एक मदरसे में भेजा गया। इस मदरसे के मौलवी साहब एक दिन बाहर गए हुए थे कि मुसलमान बच्चे हकीकत को खेलने के लिए विवश करने लगे जिस पर हकीकत ने उन्हें मना करते हुए कहा कि यदि उसे तंग करेंगे तो वह मौलवी साहब से शिकायत करेगा। मुसलमान बच्चे फिर भी तंग करते रहे तो हकीकत ने कहा ''दुर्गा माँ की कसम तुम्हारी शिकायत मौलवी साहब से ज़रूर करूँगा।'' मुसलमान बच्चे गुस्सा खा गए और उन्होंने माँ दुर्गा को गाली दे डाली। तब हकीकत ने कहा कि मेरे लिए तो माँ दुर्गा वैसी है जैसे कि माँ फातिमा। मुसलमान बच्चे भड़क गए और उन्होंने मौलवी से शिकायत कर डाली तथा सजा देने को कहा। मौलवी साहब हकीकत को सजा देने के लिए काज़ी सुलेमान के पास ले गए। काज़ी ने मुसलमान बच्चों का पक्ष सुना और कहा कि हकीकत ने जो अपराध किया है उसकी सज़ा शरियत कानून के अनुसार केवल मौत है। हकीकत के साथ उसके मां–बाप भी गए उन्होंने प्रार्थना की तो **काजी का कहना था कि उनकी बात मानी जा सकती है यदि वह मुसलमान बन जाए।** वीर हकीकत ने मुसलमान बनने से साफ इंकार कर दिया। हकीकत की मां की आंखों में आँसू आ गए, उसने हकीकत से कहा बेटा मुसलमान बनने से यदि तुम्हारी जान बचती है तो बेशक बन जाओ। वीर हकीकत का प्रश्न था कि क्या मुसलमान बनने पर मौत नहीं आती ? यदि मौत ने आना ही है तो अपने धर्म में जीवित रहना चाहिए। उसका कहना था कि काज़ी उसके शरीर को ही मार सकता है, मगर उसकी आत्मा को नहीं। **इस्लाम को स्वीकार न करने पर 13 वर्षीय हकीकत राय को वसंत पंचमी के दिन सन् 1734 में लाहौर से 4 कि.मी. दूर खोजे शाह के कोट में वसंत पंचमी के मेले में कत्ल कर दिया गया। (पाठक स्वयं शरिया कानून की विशेषता जान लें–लेखक)**

टीपू सुल्तान

दक्षिण में टीपू सुल्तान के कार्यकलाप को भी जानना आवश्यक है। स्वतंत्रता के बाद मीडिया ने टीपू सुल्तान को धर्मनिरपेक्ष सिद्ध करने की भरसक कोशिश की। इस विषय में यह जानना आवश्यक है कि टीपू सुल्तान ने अपने सेनानायकों को जो पत्र लिख कर उनमें बार–बार बीस वर्ष से अधिक के हिन्दुओं को कत्ल करने के आदेश दिए; यदि वे इस्लाम स्वीकार करने को तैयार न हों।

विदेशी यात्री बारिथैलोमेओ अपनी पुस्तक 'वॉयेज़ टू ईस्ट इंडीज़' में वर्णन करता है ....''कालीकट में अधिकांश स्त्रियों और पुरुषों को फांसी दे दी गई। शिशुओं को माताओं के गले में ही लटका दिया गया। गरीब हिन्दुओं

और ईसाइयों को हाथी के पैरों तले कुचलवा दिया गया। मंदिर तथा चर्च नष्ट किए गए। वह आगे लिखता है कि इन जुल्मों की कहानियां स्वयं उन लोगों ने कही जो किसी प्रकार टीपू की सेनाओं से बचकर भागने में सफल हो गए थे।''

सरदार के.एम.पणिक्कर ने टीपू द्वारा लिखे गए कुछ पत्रों का वर्णन किया है। एक पत्र में टीपू अपने सेनापति बहूस समन खां को लिखता है : ''क्या तुम्हें मालूम है कि मैंने मालाबार में महत्वपूर्ण विजय प्राप्त की है और चार लाख से अधिक हिन्दुओं को इस्लाम स्वीकार करवाया .... क्योंकि मैं (त्रावणकोर के राजा) रामन् नायर और उसकी प्रजा को इस्लाम में दीक्षित करने के विचार मात्र से ही हर्ष विभोर हो जाता हूँ, मैंने श्रीरंगपट्टनम् जाने का विचार छोड़ दिया है।''

हमारे वामपंथी इतिहासकारों की दृष्टि में सेक्युलरवाद, प्रजातंत्र, उपनिवेशवाद विराधी व सहिष्णुता का निष्कर्ष निकालने के लिए टीपू सुल्तान एक जीता जागता, सशरीर सुविधाजनक नमूना है। **इन इतिहासकारों की नस्ल ने, टीपू को उसके द्वारा किए गए बर्बर अत्याचारों को पूर्णतया, छिपाकर, आततायी को सेक्युलरवादी, राश्ट्रवादी, देवता तुल्य, प्रमाणित व प्रस्तुत करने में कोई भी, कैसी भी, कमी नहीं रखी है।** वे जानते हैं कि मूर्ति–पूजकों की विभिन्न जातियां, जो विभिन्न देवताओं की पूजा करते हैं, उसे भी वैसा ही मान लें। सत्य तो यह है कि बहुतांश इतिहासकार अपने इस कुटिल उद्देश्य में सफल भी हो गए हैं। इन इतिहासकारों का दुर्भाग्य यह है कि टीपू सुल्तान ने स्वयं अपने द्वारा हिन्दुओं पर किए गए अत्याचारों का वर्णन अपने विवरणों में किया है।

टीपू के पत्र

टीपू के द्वारा लिखित कुछ पत्रों, संदेशों तथा सूचनाओं के कुछ अंश निम्नलिखित है :–

विख्यात इतिहासकार सरदार पणिक्कर ने लंदन के इंडिया ऑफिस लाइब्रेरी से इन संदेशों, सूचनाओं व पत्रों के मूलों को खोजा था।

1. अब्दुल खादर को लिखित मार्च 1788 का पत्र ''1200 से अधिक हिन्दुओं को इस्लाम में सम्मानित किया गया (मुसलमान बनाया)। इनमें अनेक नम्बूदरी ब्राह्मण थे। इस उपलब्धि का हिन्दुओं के बीच व्यापक प्रचार किया गया। स्थानीय हिन्दुओं को आपके पास लाया जाए, और उन्हें इस्लाम में धर्मान्तरित किया जाए। किसी भी नम्बूदरी को छोड़ा न जाए।''

2. कालीकट के अपने सेनानायकों को दिनांक 14 दिसम्बर 1788 का पत्र

   ''मैं तुम्हारे पास मीर हुसैन अली के साथ अपने दो अनुयायी

   भेज रहा हूँ। उनके साथ तुम सभी हिन्दुओं को बन्दी बना लेना और वध कर देना ..''। मेरा आदेश हैं कि 20 वर्ष से कम उम्र वालों को कारागृह में रख लेना और शेष में से 5 हजार का पेड़ पर लटका कर वध कर देना।''

टीपू ने हिन्दुओं के प्रति यातनाओं के लिए मलाबार के विभिन्न क्षेत्रों के अपने सेना नायकों को अनेक पत्र लिखे थे।

''जिले के प्रत्येक हिन्दू का इस्लाम में आदर (धर्मान्तरण) किया जाना चाहिए; उन्हें उनके छिपने के स्थान में खोजा जाना चाहिए; उनके इस्लाम में सर्वव्यापी धर्मान्तरण के लिए सभी मार्ग व युक्तियां – **सत्य और असत्य, कपट और बल**– सभी का प्रयोग किया जाना चाहिए।'' **(हिस्टौरीकल स्कैचेज़ ऑफ दी साउथ ऑफ इण्डिया इन आर्डर टू ट्रेस दी हिस्ट्री ऑफ मैसूर– मार्क विल्क्स, खण्ड–2 पृ. 120)**

मैसूर के तृतीय युद्ध (1792) के पूर्व से लेकर निरंतर 1798 तक अफगानिस्तान के शासक, अहमद शाह अब्दाली के प्रपौत्र, ज़मनशाह, के साथ टीपू ने पत्र व्यवहार स्थापित कर लिया था। कबीर कौसर द्वारा लिखित, **''हिस्ट्री ऑफ टीपू सुल्तान**'' (पृ. 141–147) में इस पत्र व्यवहार का अनुवाद दिया है। उस पत्र व्यवहार के कुछ अंश निम्नलिखित हैं :–

टीपू का ज़मनशाह को लिखा पत्र

(क) ''महामहिम आपको सूचित किया गया होगा कि, मेरी महान अभिलाषा का उद्देश्य **जिहाद** है। इस युक्ति का इस भूमि पर परिणाम यह है कि अल्लाह, इस भूमि के मध्य, मुहम्मदीय उपनिवेश के चिह्न की रक्षा करता रहता है, 'नोआ के आर्क' की भांति रक्षा करता है और त्यागे हुए अविश्वासियों की बढ़ी हुई भुजाओं को काटता रहता है।''

(ख) टीपू द्वारा ज़मनशाह को लिखा पत्र (5 जनवरी 1797) : '' ..... इन परिस्थितियों में जो पूर्व से लेकर पश्चिम तक, सूर्य के स्वर्ग के केन्द्र में होने के कारण सभी को ज्ञात हैं। मैं विचार करता हूँ कि अल्लाह और उसके पैगम्बर के आदेशों से एक मत हो हमें अपने मज़हब के दुश्मनों के खिलाफ **जिहाद** कार्यान्वित करने के लिए संगठित हो जाना चाहिए। इस क्षेत्र के पंथ के अनुयायी, शुक्रवार के दिन एक निश्चित किए हुए स्थान पर सदैव एकत्र होकर इन शब्दों में दुआ करते हैं। ''हे अल्लाह ! उन लोगों को, जिन्होंने पंथ का मार्ग रोक रखा है, कत्ल कर दो। उनके पापों को उनके सिर डालकर उन्हें दण्ड दो।''

मेरा पूरा विश्वास है कि सर्वशक्तिमान अल्लाह अपने प्रियजनों के हित के लिए

इनकी दुआएं मंजूर करेगा और पवित्र उद्देश्य की गुणवत्ता के कारण हमारे सामूहिक प्रयासों को उस उद्देश्य के लिए फलीभूत कर देगा। इन शब्दों के, ''तेरी (अल्लाह की) सेनाएं ही विजयी होंगी'', तेरे प्रभाव से हम विजयी और सफल होंगे।

''मेरी चमकती तलवार अविश्वासियों के विनाश के लिए आकाश की कड़कती बिजली है। तू हमारा मालिक है, हमारी मदद कर उन लोगों के विरुद्ध जो अविश्वासी हैं। अल्लाह जो मुहम्मद के मज़हब को विकसित करता है उसे विजयी बना। जो मुहम्मद के मज़हब को नहीं मानता उसकी बुद्धि को भ्रष्ट कर : और जो ऐसी मानसिकता रखते हैं, हमें उनसे दूर रख। अल्लाह मालिक बड़ी विजय में तेरी मदद करे, हे मुहम्मद !'' (हिस्ट्री ऑफ मैसूर, सी.एच. राव, खण्ड तीन पृष्ठ 1073)

टीपू की फारसी में लिखी, ''सुल्तान–उत–तवारीख' और 'तारीख–ई–खुदादादी'' नाम वाली दो जीवनियां हैं। ये दोनों ही जीवनियां लंदन की इंडिया ऑफिस लाइब्रेरी में एम.एस.एस क्रम. 521 और 299 क्रमानुसार रखी हुई हैं। इन दोनों जीवनियों में हिन्दुओं पर उसके द्वारा ढाए गए अत्याचारों, और दी गई यातनाओं, का विस्तृत विवरण टीपू ने स्वयं किया है। **यहाँ तक कि मोहिब्बुल हसन** को जिसने अपनी पुस्तक, हिस्ट्री ऑफ टीपू सुल्तान को एक समझदार, उदार और सेक्युलर शासक चित्रित व प्रस्तुत करने में कोई भी कमी नहीं रखी थी, **भी स्वीकार करना पड़ा था कि ''तारीख यानी कि टीपू की जीवनियों के पढ़ने के बाद टीपू का जो चरित्र उभरता है, वह एक ऐसे मज़हबी, पंथ के लिए मतवाले, या पागल का है जो गैर–मुस्लिमों के वध और उनके इस्लाम में बलात् परिवर्तन कराने में ही सदैव लिप्त रहा।''**

एक पुर्तगाली यात्री और इतिहासकार, फ्रा बारटोलोमाको है। उसने अपनी पुस्तक ''वौयेज टू ईस्ट इण्डीज़'' में अपने मलाबार के दौरे के दौरान 1790 में जो स्वयं देखा उसका वर्णन किया है। वर्णन इस प्रकार है – ''कालीकट में अधिकांश गैर–मुस्लिम आदमियों और औरतों को फांसी पर लटका दिया जाता था। पहले माताओं को उनके बच्चों को उनकी गर्दनों में बांधकर लटकाकर फांसी दी जाती थी। उस बर्बर टीपू द्वारा नंगे हिन्दू और ईसाई लोगों को हाथियों की टांगों से बंधवा दिया जाता था, और हाथियों को तब तक घूमाया तथा दौड़ाया जाता था जब तक कि उन असहाय निरीह विपत्तिग्रस्त प्राणियों के चीथड़े–चीथड़े नहीं हो जाते थे। मंदिरों और गिरजाघरों में आग लगाने, खण्डित करने, और ध्वंस करने के आदेश दिए जाते थे। यातनाओं का उपरिलिखित रूपान्तर टीपू की सेना के अत्याचारों से बच भागने वाले तथा **बरप्पा उझा नामक स्थान पर पहुँच जाने वाले अभागे विपत्तिग्रस्त व्यक्तियों से सुने वृत्तातों के आधार पर था ....** मैंने स्वयं अनेक ऐसे विपत्तिग्रस्त व्यक्तियों को वाराप्पाउझा नदी नाव द्वारा पार कर जाने के लिए सहयोग किया था।''

उपरिवर्णित तथ्यों के बावजूद भारत के पूर्व प्रधानमंत्री श्री एच.डी. देवगौड़ा ने अपने एक बयान में इन तथ्यों को नकारा। यह उनका इतिहास के प्रति अनभिज्ञता का बेमिसाल उदाहरण है।

टीपू द्वारा मंदिरों का विध्वंस

दी मैसूर गज़टियर बताता है कि ''टीपू ने दक्षिण भारत में 800 से अधिक मंदिर नष्ट किए थे।'' उन नष्ट किए गए मंदिरों में से कुछ का वर्णन निम्नलिखित है।

''अगस्त 1786 में टीपू की फौज ने प्रसिद्ध पेरुमनम मंदिर की मूर्तियों का ध्वंस किया और त्रिचूर तथा करवन्नूर नदी के मध्य के सभी मंदिरों का ध्वंस कर दिया गया। इरिनेजालाकुडा और तिरुवांचीकुलम मंदिरों को भी टीपू की सेना द्वारा खण्डित तथा नष्ट किया गया। अन्य प्रसिद्ध मंदिरों में से जिन्हें लूटा गया और नष्ट किया गया था, वे थे त्रिप्रगोंट, थ्रिचैम्बरम्, थिरुमवाया, तिरुवन्नूर, कालीकट थाली, हेमम्बिका मंदिर, पालघाट का जैन मंदिर, माम्मियूर, परम्बाताली, पेम्मायान्दु, थिरवनजीकुलम, त्रिचूर का बडक्खुमन्नाथन् मंदिर, बैलूर शिव मंदिर आदि।''

टीपू की मृत्यु सन् 1799 में अंग्रेज़ों से लड़ते–लड़ते हुई, जिस पर जनरल विलियम हैरिस ने कहा ''आज से हिन्दुस्तान हमारा है।''

पाठकों ने जान लिया होगा कि **प्रसिद्ध इतिहासकार बिल ड्यूराँ का कथन निःसंदेह सत्य है कि ''भारत में मुस्लिम विजय का काल कदाचित् विश्व इतिहास की सबसे खूनी कथा है।''**

इस प्रकार मोहम्मद बिन कासिम के काल से टीपू सुल्तान तक हिन्दुस्थान में जिहाद का दौर निरंतर चला। स्पष्ट है कि मध्यकालीन भारत में मुस्लिम मज़हब पर आधारित असाधारण राज्य था।

◆◆◆

अध्याय-१०

शाहवली उल्ला का भारत के इस्लामीकरण में विशेष योगदान

सन् 1707 ई. में औरंगज़ेब की मृत्यु के पश्चात् उसके जो उत्तराधिकारी दिल्ली के तख्त पर बैठे उन्होंने शायद यह निर्णय ही कर लिया था कि वे औरंगज़ेब की चलाई हुई नीतियों को उल्टा कर देंगे। अली मियां अपनी पुस्तक ''सेवियर्स ऑफ इस्लामिक स्पिरिट'', खण्ड–4, पृ. 30 पर लिखते हैं कि इन नए बादशाहों के हर एक कारनामें औरंगज़ेब से उल्टे थे। जहाँ औरंगज़ेब ने अपनी कड़ी मेहनत, बहादुरी और इस्लाम के प्रति अपनी वफादारी से इतना बड़ा साम्राज्य बनाया था वही सब बिगड़ने लगा। अली मियां लिखते हैं कि यह न केवल महान् मुगलों के लिए बल्कि सारे हिन्दुस्तान के लिए निराशा की बात थी कि औरंगज़ेब के बाद अगले पचास वर्षों में 11 बादशाह गद्दी पर बैठे जो निम्नलिखित हैं:–

1. मोहम्मद मुअज़्ज़म बहादुर शाह (शाहआलम बहादुरशाह)
2. मुइज़ुद्दीन जहाँदारशाह
3. फरुखसियर इब्न आज़िम अस–शान
4. निकुसियार
5. रफ–ई–उद–दाराजात इब्न–रफी उल कदार
6. रफी उद्दौला इब्न रफी उल कदार
7. मोहम्मद शाह इब्न जहांशाह
8. अहमदशाह इब्न मुहम्मदशाह
9. अज़ीज़ उद्दीन आलमगीर इब्न जहाँदारशाह
10. मुहीससुन्ना इब्न कामबख्श
11. शाह आलम इब्न अज़ीज़उद्दीन

भारत में इस्लामी हुकूमत का यह दुर्भाग्य था कि **औरंगज़ेब के सबसे बड़े बेटे मोहम्मद मुअज्ज़म बहादुर शाह ने गद्दी पर बैठते ही अपना मज़हब सुन्नी से शिया बदल दिया** जिसके कारण राजकाज की सारी नीतियां बदल दी गईं। कैसा दुर्भाग्य था कि सारी मुस्लिम प्रजा सुन्नी मत की थी और उनका बादशाह

शिया। जनता के समक्ष सार्वजनिक रूप से शियाई मज़हब का नाम शुरू कराया। अली को पैगम्बर मुहम्मद का असली उत्तराधिकारी माना और लाहौर में जुम्मे की सार्वजनिक नमाज़ में इसकी घोषणा होती रही जिससे लोगों के अंदर एक खलबली मच गई।

सन् 1713 में फरुखसियर गद्दी पर बैठा। वह भी अत्यंत कमज़ोर और निर्णय न लेने वाला साबित हुआ। उसके काल में पश्चिमी उत्तर प्रदेश के दो सैयद बंधुओं ने जिनका मुगल शासन में प्रभुत्व था, फरुखसियर की कमज़ोर नीतियों को जानकर फरुखसियर को गद्दी से उतार दिया और जेल में डाल कर भूखा मारकर, अंधा कर, अंत में ज़हर दे दिया।

पाठकों को याद होगा कि बादशाह अकबर की उदार नीतियों के कारण मुस्लिम साम्राज्य डगमगाने लगा था और मौलाना शेख अहमद सरहिन्दी ने कमान संभाली थी जिसके फलस्वरूप अकबर की मृत्यु के तुरंत पश्चात् अगले बादशाह जहांगीर को शेख अहमद सरहिन्दी ने अपने कब्जे में बांध कर वायदा करा लिया कि वह इस्लाम मज़हब के अनुकूल ही यानि शरियत कानून के अनुसार शासन करेगा। सरहिन्दी और दूसरे उलेमाओं ने मिलकर जहांगीर को तब तक घेरे रखा जब कांगड़ा विजय के बाद मंदिर में गाय वध करवा कर जहांगीर ने अपने कट्टर मुसलमान होने का प्रमाण न दे दिया। जहांगीर के उत्तराधिकारी उससे भी दो कदम आगे निकले।

औरंगज़ेब के पश्चात् जब यह उथल–पुथल चल ही रही थी तो इस्लाम का फिर एक सितारा भारत भूमि पर चमका। **यह था मौलाना शाहवलीउल्ला जो उत्तरप्रदेश के मुज़फ्फरनगर ज़िले में फुलट नामक स्थान पर जन्मा था। वैसे शाहवली उल्ला के पूर्वज रोहतक के निवासी थे।** शाहवलीउल्ला एक कट्टर मज़हबी परिवार का था। बड़े होते समय उसने मुगल सल्तनत की उपर्युक्त वर्णित दुर्दशा को देखा। यह परिवार मूलतः अरब से आया था और इनके अरब निवासी होने के कारण अपनी विशेषताएं थीं। सर्वप्रथम था **इनका इस्लाम से घनिष्ठ संबंध। दूसरा था इनका इस्लाम का अध्ययन, अध्यापन और मज़हबी कानून के सलाहकार बनना।** इसी प्रकार अरब से भारत में जो–जो परिवार आए वे सब कट्टर मज़हबी तथा इस्लाम का पैगाम हिन्दुस्तान में फैलाने के लिए आए। कारण था कि हिन्दुस्तान इस्लाम के फैलाव में कोई रुकावट नहीं डाल पा रहा था। इस कारण उनका निश्चित मत था कि वह इस महाद्वीप का पूर्णतया इस्लामीकरण करने में सफल होंगे।

इन परिवारों के उत्तराधिकारी भी सर्वदा याद रखते थे कि उनके पूर्वज हिन्दुस्तान में इस्लाम का झण्डा फहराते हुए स्वयं अपनी अलग पहचान इस विदेशी वातावरण में (जो हिन्दुस्तान का था) रखें। इस विषय में शाह वलीउल्ला लिखता है :– **''हमें**

यह कभी नहीं भूलना चाहिए कि हम हिन्दुस्तान में बाहर से आए हुए विदेशी हैं। हमारा वंश और भाषा दोनों अरबी हैं जिसका हमें गर्व है। ये दोनों विरासत हमें पैगम्बर से गर्व के साथ जोड़े रखती हैं। यह जानना भी उचित होगा कि शाह वलीउल्ला न केवल अरबी था अपितु वह दूसरे खलीफा उमर का वंशज भी था। इस वंश ने इस्लाम के विरुद्ध ताकतों से डटकर मुकाबला किया था, उनकी खानदानी परंपरा उनके लिए बहुत गौरवशाली थी और वह इस्लाम के मूल मज़हब को कायम तथा उसके असली स्वरूप को सुरक्षित रखने मे सहायक बने।

स्मरण रहे इसी वंश का उत्तराधिकारी शेख अहमद सरहिन्दी (मुजाहीदीद अल्फथानी) भी था जिसने बादशाह अकबर की हिन्दुओं के प्रति उदार नीति का घोर विरोध किया था तथा जहांगीर को कट्टर इस्लामी बनाने का श्रेय था व इस्लाम जो पटरी से उतर गया था पुनः पटरी पर स्थापित किया था। स्वाभाविक है कि शाहवलीउल्ला ने अपने पूर्वजों के पद्चिह्नों पर चलते हुए औरंगज़ेब के मरने के बाद हिन्दुस्तान में इस्लाम की जो नैया डगमगा रही थी, उसकी बागडोर संभाली।

शाह वलीउल्ला ने स्थिति का गहराई से अध्ययन किया और पाया कि मुसलमान बनने के बाद भी इन धर्मान्तरित लोगों में कट्टरता नहीं होती जिसकी अब आवश्यकता नज़र आने लगी थी। विश्लेषण के आधार पर उसने निर्णय लिया कि न केवल कुरान बल्कि हदीस के निरंतर अध्ययन करने से और बार–बार दोहराने से ही हिन्दुस्तानी मुसलमान इस्लाम के वास्तविक, सातवीं शताब्दी के स्वरूप में आ सकेंगे। **शाह वलीउल्ला ने मदरसा रहीमियाँ स्थापित किया जो दिल्ली में 'महेंदिया' मोहल्ले में स्थित था।** यह मदरसा अति लोकप्रिय हुआ और बहुत संख्या में पढ़ने वाले आने लगे। इस स्थान पर जगह की कमी महसूस हुई, जिसे मुगल बादशाह मुहम्मदशाह ने शाहवलीउल्ला के मदरसे के लिए बहुत बड़ा स्थान देकर पूरा किया।

शाह वलीउल्ला के विचारों के अनुसार उसके कार्यकलाप को निम्नलिखित भागों में बाँटा जा सकता है :–

1. कुरान का निरंतर अध्ययन
2. हदीस और सुन्ना का बार–बार पढ़ाना
3. इस्लाम के कानून शरीयत का विश्लेषण कराना और उसके ज्ञान से परिचय कराना
4. बिखरते हुए मुगल साम्राज्य को संभालना और संवारना

पाठकों को विदित हो कि मौलाना ज़ियाउद्दीन बरनी ने अपने काल में ''फतवे जहाँदारी'' द्वारा दूसरे उलेमाओं को सलाह दी थी कि हिन्दुओं के धर्मान्तरण के पश्चात् बने हिन्दुस्तानी मुसलमानों को इस्लाम की यथावश्यक शिक्षा ही दी जाए।

उस काल (14वीं शताब्दी) से लेकर कई सौ वर्ष बीतने के बाद तक वही सीमित इस्लामी शिक्षा इन हिन्दुस्तानी मुसलमानों को दी जाती रही। यह समझा जाता था कि कुरान की शिक्षा अनेकानेक बातों पर निर्भर है और इसी कारण यह शिक्षा केवल पढ़े लोगों को ही दी जानी चाहिए ताकि वे उसमें छिपे ज्ञान को समझ सकें। यह समझा जाता था कि यदि छोटे वर्गों के हिन्दुस्तानी मुसलमानों को यह शिक्षा दी गई तो बहुत सी समस्याएं पैदा हो सकती हैं। **उस समय के उलेमाओं का यह भी मत था कि एक बार कुरान सबके हाथों में चली गई तो आम लोग भी इन विदेशी उलेमाओं की चिंता नहीं करेंगे तथा उनका आधिपत्य समाप्त हो जाएगा।** (दि लिगेसी ऑफ मुस्लिम रूल इन इंडिया, पृ. 50)

18वीं शताब्दी आने तक समय बदल चुका था। मुगल शासन कमज़ोर हो चुका था। शाहवलीउल्ला ने बदले समय को ध्यान में रखते हुए विचार करके निर्णय लिया कि कुरान और हदीस की शिक्षा आम हिन्दुस्तानी मुसलमानों को दी जानी चाहिए, ताकि वह हर प्रकार उपयोगी बने। शाहवलीउल्ला इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि सबसे पहले कुरान का अनुवाद फारसी में किया जाना चाहिए क्योंकि यह हिन्दुस्तान में प्रचलित भाषा थी। यह अनुवाद सन् 1743 में पूरा हुआ तथा इसकी हस्तलिखित प्रतिलिपियां मदरसों में पढ़ाने के लिए उपलब्ध हुईं। इस अभियान से धर्मान्तरित मुसलमानों में मज़हबी कट्टरता लाने में सफलता मिली।

शाह वलीउल्ला के निधन के बाद उसके बड़े बेटे शाह अब्दुल कादिर (मृत्यु 1815 ई) ने कुरान का अनुवाद उर्दू भाषा में किया जिससे वह प्रत्येक मुसलमान तक पहुँचे। उर्दू अनुवाद सन् 1791 में पूरा हुआ। तत्पश्चात् आवश्यकता पड़ी अनेक मदरसे स्थापित करने की जिनमें यह शिक्षा दी जा सके।

मदरसों में तालीम का प्रमुख विषय कुरान, हदीस तथा पैगम्बर की जीवनी एवं उनके दिन–प्रतिदिन के कार्यकलाप पढ़ाना है। हदीस एवं सुन्ना, पैगम्बर मुहम्मद ने अपने जीवनकाल में जो कहा, किया अन्यथा जिसके लिए उनकी स्वीकृति थी, पर आधारित हैं। इस काल से हदीस का पढ़ाना उसको समझाना और व्याख्या करने पर अधिक बल दिया जाने लगा। मुसलमान के अच्छे आचरण के लिए दोनों (कुरान और हदीस) के नियमों को जानना और उनका पालन करना अनिवार्य है। विद्वानों का मत है कि यदि पैगम्बर मोहम्मद के जीवनकाल की प्रत्येक घटना को और उनकी हिदायतों को चाहे वह सार्वजनिक रूप से अन्यथा निजी तौर पर दी गई हों, मज़हबी लोगों द्वारा सुरक्षित न रखी गईं होती तो कल्पना करना भी कठिन है कि किस प्रकार मुसलमानों को वह शिक्षा दी जाती। इस्लाम के अनुयायियों का भी हश्र वही होता जो दूसरे मतावलम्बियों का हुआ जिनके अनुयायियों ने उन उपदेशों को नहीं संजो कर रखा। हदीस के निरंतर पढ़ने से प्रत्येक मुसलमान अपने को पैगम्बर के समय में बने रहने का अनुभव करता है जिसके कारण वह अपने मज़हब से

सीधे–सीधे बंधा रहता है और कभी नहीं भटक सकता। कुरान शिक्षा देती है :–

''यकीनन तुमको अल्लाह के पैगम्बर का अभूतपूर्व नमूना और कुरान आदेश देती है कि पैगम्बर के जीवन की हर बात को मानो'' (कुरान : 33 :21)

''इन शब्दों से .... यदि तुम अल्लाह से प्यार करते हो, मेरे पद्चिह्नों पर चलो : अल्लाह तुम्हें प्यार करेगा और सब पापों से मुक्ति दिलाएगा'' (3 : 31)।

मुस्लिम विद्वानों के अनुसार इस्लाम का पैगम्बर, वास्तव में एक ऐसा आदर्श व्यक्ति था जिससे उसके अनुयायियों को शक्ति और भरोसा मिलता है चाहे वह जिस अच्छे रास्ते पर चलें।

हदीस की उपयोगिता मुसलमानों के लिए कितनी आवश्यक है, इसका अनुमान निम्नलिखित वक्तव्य से जो मौलाना अबुल हसन अली नदवी (अली मियां) ने सन् 1981 में मलिक अब्दुल अजीज़ विश्वविद्यालय, मक्का में अनेक विद्वानों और विश्व से आए हुए हाजियों के समक्ष दिया। उन्होंने कहा – ''विश्वभर में मुस्लिम समाज के इतिहास से एक बात स्पष्ट है, तथा इतिहास इसका साक्षी है कि जब–जब मुसलमानों द्वारा हदीस पढ़ना काफी लंबे समय तक नहीं किया गया, अनेक कुरीतियां और नए–नए विधर्मियों के प्रभाव मुस्लिम समाज में आए। इन दुष्प्रभावों ने अनेक बार मुस्लिम समाज को बदलने में सहायता की जिसके कारण वे अपने धर्मान्तरण से पहले अतीत में जाने को उत्सुक हुए। **उन्होंने हाजियों को बलपूर्वक सलाह दी कि हदीस का लगातार पढना ही केवल मुसलमानों को अपने मजहब से जोड़ता है।''**

शाह वलीउल्ला ने न केवल हदीस की पढ़ाई को शुरू किया बल्कि एक ऐसी जागृति मुसलमानों में ला दी जिसने इस कार्य को लगातार आगे बढ़ाया। इसका दिल्ली स्थित मदरसा रहीमिया हदीस की पढ़ाई के लिए सर्वश्रेष्ठ बन गया जिसमें देश के हर एक कोने से – सिंध तथा कश्मीर से लेकर दक्षिण हिन्दुस्तान तक से **विद्यार्थी** आने लगे। **इनके बेटे भााह अब्दुल अजीज़ ने अपने पिता की शिक्षा प्रणाली को जमकर आगे बढ़ाया।** एक ओर तो शाह वलीउल्ला ने इस्लाम की शिक्षा में योगदान दिया और दूसरी ओर अपने राजनीतिक चतुराई का परिचय दिया। आज जो मज़हबी कट्टरता मुसलमानों में दिखती है उसके पीछे शाहवलीउल्ला का ही मार्गदर्शन है।

शाहवलीउल्ला का दृढ़ विश्वास था कि हदीसों में लिखा विवरण वास्तव में मुसलमानों को अपनाना चाहिए क्योंकि पैगम्बर मोहम्मद का जीवन एक आदर्श पुरुष द्वारा दिखाया रास्ता है जो अतुलनीय है तथा अंधेरे में प्रकाश देते हुए मार्गदर्शन करता है। इसीलिए हदीसें कुरआन की तरह – बल्कि उससे भी अधिक मुसलमानों का मार्गदर्शन करती हैं। सर्वप्रथम आवश्यकता है पैगम्बर के दर्शाए मार्ग पर चलना तत्पश्चात् उसी को अपने हृदय में बसाना तथा अल्लाह में अटूट विश्वास रखकर

अपनी जिम्मेदारियों को निभाना। शाहवलीउल्ला के प्रयासों से न केवल भारत बल्कि समस्त इस्लामी जगत में पुनः जागृति आना प्रारंभ हुई। हदीसों को मदरसों में पढ़ाने से सच्ची इस्लामी परम्परा (सातवीं शताब्दी वाली – लेखक) को चलाना प्रारंभ किया गया। यह परम्परा निरंतर चलाई जा रही है। यह भी सर्वदा स्मरण रखना चाहिए कि जैसा मौलाना अबुल हसन अली नदवी ने अपने भाषण में स्पष्ट किया कि हदीसों के निरंतर न पढ़ने से मुसलमानों के लिए विभिन्न दुष्परिणाम निकल सकते हैं। इसी कारण हदीसों का निरंतर पढ़ना तथा उस पर अमल करना मुसलमानों के लिए नितांत आवश्यक है। **सच यह है कि इस परम्परा को अपनाने से मदरसे की शिक्षा प्रणाली मुसलमानों को पूर्णतः कट्टर मुसलमान बनाने में सफल है।**

शाह वलीउल्ला का राजनीति में दखल

ऊपर बताया जा चुका है कि मुगल साम्राज्य डगमगा रहा था और इस्लामी विद्वान होने के नाते शाह वलीउल्ला का दायित्व था कि वह अपनी राजनीतिक चतुराई का प्रयोग करे। **उस समय हिन्दुस्तान में तीन शक्तियाँ उभर कर सामने आ गईं। ये भाक्तियों थी–मराठा, सिख और जाट। इन तीनों भााक्तियों ने मुगल साम्राज्य को झंझोड़ रखा था।** मराठा सरदार सदाशिव राव जो भाऊ के नाम से विख्यात हैं जून 1760 ई. में दिल्ली में घुस आए और उन्होंने याकूब अली पर दबाव डाला कि वह लालकिला उन्हें सुपूर्द कर दे।

इसी प्रकार भरतपुर के जाट जिनके नेता सूरजमल्ल थे, निरंतर मुगल बादशाहों के लिए सरदर्द बने रहे। इसके अलावा सिख पंजाब में अति शक्तिशाली हो गए थे।

इस प्रकार तीनों शक्तियों से लगातार संघर्ष के कारण मुगल साम्राज्य धीरे–धीरे खोखला हो रहा था। शाह वलीउल्ला जिसने औरंगज़ेब के मरने के बाद मुगल साम्राज्य के पतन ग्रस्त दिन देखे थे, अब उसको ध्वस्त होते देखा और उसने फरुखसियर और मुहम्मद शाह के ज़माने में विकृतियां भी देखी थीं। जिन मुसलमानों ने हिन्दुस्तान पर पिछले छः सौ साल से बलपूर्वक तलवार के बूते पर राज किया था, वह सब अब बिल्कुल शक्तिहीन महसूस कर रहे थे। **शाह वलीउल्ला ने रणनीति अपनाई और अहमद शाह अब्दाली को जो अफगानिस्तान का बादशाह था तथा नवाब नजीब उद्दौला को जो अवध का नवाब था, पत्र लिखे।** अपने नज़ीब उद्दौला को लिखे पत्र में शाह ने लिखा कि ''भारत के मुसलमान चाहे वे दिल्लीवासी हों या अन्य किसी और स्थान के उन सब पर कई बार विपत्ति आ चुकी है। अब इन्तहा हो चुकी है। शाह ने स्थिति का जायज़ा लेते हुए यह भी कहा कि ''(इस्लाम विरोधी शक्तियां यदि सफल हो गईं तो भारत में इस्लाम समाप्त हो जाएगा।)''

शाह वलीउल्ला ने अनेक राजपरिवारों को भी पत्र लिखे जिनमें

उन्होंने वास्तविकता को बताते हुए उनसे पूरा सहयोग मांगा। लालकिले में भी मुगल बादशाह को उन्होंने पत्र लिखा जो बादशाह के अतिरिक्त उसके मंत्रियों और राजदरबारियों के लिए भी था। इन पत्रों में अनेक हितकारी सुझाव उस समय की राजनीतिक परिस्थिति को देखते हुए दिए। उन्होंने सुझाव दिया कि राज्य में केवल ऐसे विद्वान काज़ी और मुहतासिब ही नियुक्त किए जाएं जो चरित्रवान हों, नामी मदरसों के तालीबानी हों तथा मस्जिदों के इमामों को अच्छा वेतन दिया जाए।

शाह वलीउल्ला ने नज़ीब उद्दौला से अनुरोध कर अहमदशाह अब्दाली को भी पत्र लिखवाया जिसमें अहमदशाह अब्दाली को भारत पर आक्रमण करने के लिए और मुस्लिम साम्राज्य को बहाल करने की पेशकश की गई। शाह वलीउल्ला ने अहमदशाह अब्दाली को पुनः पत्र लिखा जिसमें उसको हिन्दुस्तान में आकर तुरंत हस्तक्षेप करने का निमंत्रण दिया ताकि हिन्दुओं की ताकत को कुचला जा सके। शाह ने अपने पत्र में अब्दाली को लिखा ''आपके अलावा ऐसा कोई दूसरा बादशाह नहीं है जो इस विपत्ति काल में इतना शक्तिशाली हो और जिसमें दूरदर्शिता और युद्ध की कुशलता हो जिससे इन दुश्मनों (हिन्दुओं–लेखक) को हराया जा सके। पत्र में यह भी लिखा ''हम जो सब अल्लाह के भेजे हुए और पैगम्बर के मानने वाले हैं, आपसे दरख्वास्त करते हैं कि आप अल्लाह के नाम पर इन अल्लाह–विरोधी दुश्मनों से लड़ें जिससे आपका नाम जिहादियों में लिखा जा सके और आपको अल्लाह रहनुमाई बख्शे तथा मुसलमानों को काफिरों द्वारा अत्याचार से मुक्त कराया जाए।'' पत्र लिखने का सिलसिला निरंतर चला। **फलस्वरूप पानीपत का तीसरा युद्ध हुआ जिसमें अहमद शाह अब्दाली ने नजीबुद्दौला के साथ मिलकर मराठों का मुकाबला किया और उन्हें हराया।**

शाह वलीउल्लाह केवल पढ़ाने वाला उलेमा ही न था बल्कि वह एक कूटनीतिज्ञ भी था। उसने चुपचाप भारत में मुस्लिम साम्राज्य को मज़बूत करने के लिए निरंतर प्रयत्न किया। सबसे अच्छा उपाय था कि वह मुसलमानों को अपनी जीवन प्रणाली को शरिया कानून के अनुसार ढालने पर बल दें। **शरिया ऐसी विचारधारा है जो मुसलमानों को कट्टरता की ओर ले जाती है।**

सैयद अबुल हसन अली नदवी (अली मियां) के अनुसार शाह वलीउल्लाह के प्रयासों की केवल 14वीं शताब्दी में किए गए इब्न तयीमिया से ही तुलना की जा सकती है जिसने 1301 ई. में सीरिया देश के मुसलमानों को मंगोल से युद्ध करने को उक्साया था। मिस्र के सुल्तान मुहम्मद ने जब इस युद्ध में भाग लेने से मना किया तो इब्न तयीमिया मिस्र गया और सीरिया की ओर से लड़ने पर बल दिया। यह ऐसे ऊँचे दर्जे के उलेमा होते हुए भी सुल्तान की फौज के साथ तलवार लेकर स्वयं लड़ा और मंगोलों के आक्रमण को विफल किया। शाह वलीउल्लाह ने भी इसी प्रकार की दूरदर्शिता व कूटनीतिज्ञता का प्रमाण दिया। उसका मानना था कि उस

समय यदि इस्लाम विरोधी शक्तियों को तुरंत न कुचला गया तो हिन्दुस्तान में इस्लाम समाप्त हो जाएगा। Saviours of Islamic Spirit Vol. IV. page 213. इस प्रकार शाहवलीउल्ला ने जिसे मुस्लिम जगत का सर्वश्रेष्ठ उलेमा माना जाता है, हिन्दुस्तान में इस्लाम को मज़बूत बनाने का भरसक प्रयत्न किया। उसके द्वारा चलाया गया मदरसा रहीमियां 1857 तक निरंतर श्रेष्ठ उलेमा तैयार करता रहा। आज जितने देश में बड़े मदरसे हैं ये सब शाहवलीउल्ला मदरसे से निकले हुए उलेमाओं ने स्थापित किए।

शाह अब्दुल अज़ीज

शाह वलीउल्लाह के मरने के पश्चात् उसके बेटे शाह अब्दुल अज़ीज ने हिन्दुस्तान के मुसलमानों में मज़हबी सुधार लाने का बेड़ा जारी रखा। वह अपने मदरसे में इस्लामी शिक्षा निरंतर देता रहा। **19वीं शताब्दी के प्रारंभिक काल में उसने हिन्दुस्तान को पहली बार दारुल–हरब बताया और इस विषय में ''फतवा–ए–अज़ीजिया'' जारी किया।** इस फतवे का हमारे देश में निरंतर कार्यान्वयन होता रहा, जो आज भी जारी है। यह बताना आवश्यक है कि फतवा जो श्रेष्ठ मज़हबी उलेमाओं द्वारा जारी किया जाता है, किसी भी हालत में वापिस नहीं लिया जा सकता। इसकी पुष्टि ईरान के अयातुल्ला खुमैनी द्वारा सलमान रुशदी के विरुद्ध फतवे को समाप्त करने के ब्रिटिश सरकार द्वारा प्रयत्न को ईरान के विदेश मंत्रालय के पदाधिकारी द्वारा नकारे जाने तथा स्पष्टीकरण से हुई (टाइम्स ऑफ इंडिया, नई दिल्ली, 16.02.1998)।

शाह अब्दुल अज़ीज़ ने अपने मदरसे रहीमियां में हदीस का ज्ञान तालिबानों को निरंतर दिया। वह इस विषय को 46 वर्ष तक पढ़ाता रहा तथा इस परम्परा को कायम रखते हुए अनेक इस्लामी विद्वान् तैयार किए। कुछ प्रमुख विद्वानों के नाम हैं – मौलाना शाह मोहम्मद इश्शाक देहलवी, मौलाना शाह मोहम्मद याकूब देहलवी, मुफ्ती इलाही बक्श इत्यादि। इनमें शाह मोहम्मद इश्शाक प्रसिद्ध है। मोहम्मद इश्शाक के शिष्य थे शाह अब्दुल गनी (मृत्यु 1879)। शाह अब्दुल गनी ने अनेक हदीस के ज्ञानी तैयार किए जिन्होंने भारत में विभिन्न स्थानों में मदरसे स्थापित किए। इनके प्रमुख शिष्य थे – मौलाना रशीद अहमद गंगोही तथा **मौलाना मोहम्मद कासिम नानौतवी, जिसने विश्वविख्यात् दारुल उलूम देवबंद (उत्तर प्रदेश) स्थापित किया।** इस मदरसे ने अनेक विद्वान् पाकिस्तान को भी दिए तथा इस मदरसे का नाम विश्व के सभी देशों में बड़ी शान से लिया जाता है। साथ–साथ **इस मदरसे को जिहादी पैदा करने का बड़ा केन्द्र माना जाता है।** इस मदरसे में विभिन्न विषयों के विभाग हैं।

मौलाना मोहम्मद कासिम नानौतवी के शिष्यों के नाम जानना आवश्यक है जिन्होंने हदीस का ज्ञान देश के अनेक मदरसों में फैलाया। प्रमुख थे – मौलाना सैयद

हसन अमरोहवी, सैक–उल–हिन्द मौलाना मसूद अहमद देवबन्दी, मौलाना सैयद अनवर शाह कश्मीरी तथा प्रसिद्ध मौलाना हुसैन अहमद मदनी (कांग्रेस पार्टी द्वारा जवाहरलाल नेहरू द्वारा बनाए गए संसद् सदस्य) **आज देश में छोटे व बड़े कुल मिलाकर मदरसों की संख्या 5 लाख बताई जा रही है जिनमें माना जाता है कि करोड़ों मुसलमान बच्चे मज़हबी तालीम पाते हैं।** गौरतलब है कि देश के दूसरे स्कूलों में जहाँ निःशुल्क शिक्षा दी जाती है उनमें मुस्लिम बच्चों को मजहबी लोग नहीं जाने देते, साथ–साथ तरह–तरह के मनगढ़ंत कारण बताते हैं।

शाह अब्दुल अज़ीज़ के प्रमुख तालीबान उलेमा सैयद अहमद ने तलवार से जिहाद करने का निर्णय किया। इस ध्येय की प्राप्ति के लिए उन्होंने देश के अनेक शासकों को पत्र लिखे जिनके अनुसार सब मिलकर अंग्रेज़ों को हिन्दुस्तान से बाहर निकालने को कहा गया। ये पत्र शाह सुलेमान जो चित्राल का शासक था एवं राजा हिन्दुराव को जो ग्वालियर में मंत्री था, भी लिखे गए। इसी प्रकार सैयद अहमद ने गुलाम हैदर खान जो ग्वालियर में सेनापति था तथा शहज़ादे कमरान को पत्र लिखकर सूचित किया कि वह जिहाद शुरू करना चाहते हैं। उन्होंने इस पत्र में लिखा कि ''वह फरंटीयर पंजाब में जिहाद पूरा करने के पश्चात् समस्त भारत में जिहाद करेंगे जो उनका लक्ष्य है।'' Saviours of Islamic Spirit Vol. IV. page 268.

सैयद अहमद और शाह इस्माइल ने जो शाह अब्दुल अज़ीज का संबंधी एवं शिष्य था 2400 कि.मी. की यात्रा रेगिस्तानी, पहाड़ी और जंगली इलाकों को पार करके हिन्दुस्तान के उत्तर–पश्चिमी क्षेत्र, (जो अब पाकिस्तान में है) सन् 1826 में गए। जब सैयद अहमद पंजतर में थे तो 15 उलेमाओं, मौलवियों, मौलानाओं की टुकड़ियां लड़ने के लिए तथा सैयद अहमद का साथ देने के लिए पहुँची। इस जिहाद में मुख्यतः निम्नलिखित मौलवी और मौलाना अपने साथियों के साथ तलवार से लड़े तथा जिहाद में शामिल हुए।

1. मौलवी कालन्दर अपने 70 साथियों के साथ
2. काजी अहमदुल्लाह (मेरठ निवासी)
3. अब्दुल हमीद खान (80 लड़ाकुओं के साथ)
4. मौलवी रमज़ान (रुड़की निवासी) अपने 100 लड़ाकुओं के साथ
5. मिया मुक्किम (रामपुर निवासी)
6. मौलाना अब्दुल हयी
7. मौलवी खैरुउद्दीन
8. हाजी बहादुरशाह (रामपुर निवासी)
9. हाजी महमूद खान
10. मौलवी मज़हब अली

11. मौलवी नसीरुद्दीन (मंगलोर, उ.प्र.)

इनके अलावा 13 अन्य मौलानाओं के साथियों के साथ सैनिक टुकड़िया पंजतर पहुंची, जिनका नेतृत्व निम्नलिखित ने किया :–

1. मौलवी कमरुद्दीन,
2. मौलवी उथमान अली,
3. मौलवी मज़हर अली (अज़ीमाबाद निवासी)
4. मौलवी खुर्रम अली (बिलहौर निवासी)
5. मौलवी कद्दास, एवं मौलाना सैयद मुहम्मद अली (कानपुर निवासी)
6. मौलाना बकार अली, मौलाना अब्दुला (अमरोहा निवासी)
7. हफीज़ कुत्बुद्दीन (फुलट निवासी)
8. मौलवी अब्दुल हक नौतानी, मौलवी महबूब अली और हकीम मोहम्मद अशरफ दिल्ली निवासी
9. मीरानशाह नारनौल निवासी
10. मौलवी अहमद उल्ला, नागपुर निवासी

उपरिवर्णित उलेमाओं, मौलानाओं, मौलवियों, हाफिज़ों ने तलवार द्वारा जिहाद में भाग लिया, जिसमें कभी सफलताएं कभी विफलताएं मिलीं। सन् 1830 में महाराजा रणजीत सिंह के यशस्वी सेनापति हरिसिंह नलवा की फौज ने सईद अहमद तथा शाह मुहम्मद इस्माइल को बालाघाट के युद्ध में मार डाला। ये दोनों शहीद कहलाने के हकदार हो गए। मोइनुद्दीन अहमद द्वारा लिखित पुस्तक Saviours of Islamic Spirit Series में सईद अहमद शहीद की जीवनी में लिखा है कि ऐसा जिहाद, जो देखने में आया, वैसा हिन्दुस्तान के इतिहास में न पहले कभी देखा गया और जिसकी भविष्य में भी आशा नहीं। उपरिवर्णित **जिहाद से यह समझने में कोई कठिनाई न होगी कि जिहाद वास्तव में मदरसों के पढे तालिबानों द्वारा किया जाता है।**

पाठकों को विदित है कि अनेकानेक मुस्लिम लेखक इस जिहाद का वर्णन नहीं करते। वे केवल उन जिहादों की बात करते हैं जिनमें तलवार का प्रयोग नहीं किया जाता। उल्लेखनीय है कि शाह वलीउल्ला द्वारा स्थापित मदरसा निरंतर चलाया गया। अंग्रज़ों ने इस मदरसे द्वारा इस्लामी कट्टरता बढ़ाने के योगदान को समझा तथा सन् 1857 की क्रांति जिसे अंग्रेज़ों ने मुगल शासन पुनः स्थापित करने का मुसलमानों द्वारा षड्यंत्र माना के पश्चात् मदरसा रहीमियां तोड़ डाला गया।

◆◆◆

अध्याय–११

संविधान सभा में चेतावनी : जो नकार दी गई और परिणाम स्पष्ट हैं

जब देश की संविधान सभा में संविधान के अनुच्छेद 25 व 30 पर बहस हो रही थी, तब इस्लाम व ईसाई मतावलम्बियों को अपने मत के प्रचार और प्रसार की छूट तथा अल्पसंख्यक शिक्षा संस्थानों की स्वतंत्रता का मुद्दा उठाया गया था। इस सभा में हुई बहस के कुछ अंश प्रस्तुत हैं :–

श्री तजम्मुल हुसेन ने कहा था : ''महोदय, इस अनुच्छेद की उपधारा–1 के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को अपनी आत्मा की स्वतंत्रता का तथा विश्वास 'मत' के विस्तार करने, आचरण करने और प्रचार करने का अधिकार होगा। मुझे इसमें कोई आपत्ति नहीं है कि लोगों को स्वतंत्रतापूर्वक अपने विश्वास, मत को खुलेआम स्वीकार और आचरण करने का अधिकार हो किन्तु महोदय मुझे भय है कि यह अधिकार देना गलत होगा कि इस देश में लोग अपने–अपने मज़हब का प्रसार करने को भी स्वतंत्र हों।

''महोदय, मज़हब (विश्वास, मत अथवा पंथ) एक व्यक्ति और उसके कर्त्ता के बीच एक वैयक्तिक मामला है। इसका दूसरों से कोई संबंध नहीं है। मेरे विश्वास (मत) में दखलअंदाज़ी क्यों करें? और मैं आपके विश्वास (मत) में दखलअंदाज़ी क्यों करूं। .... यदि आप मुझसे सहमत हों तो विश्वास (मत) का प्रचार क्यों ? आप अपने घर में बैठकर ईमानदारी से अपने विश्वास का पालन करें, उसका दिखावा क्यों करें? **यदि इस देश में आप मज़हब का प्रचार करना प्रारंभ कर देंगे तो आप दूसरों के लिए कंटक बन जाएंगे। अभी तक ऐसा ही हुआ है।**

''महोदय, मेरा निवेदन है कि हमने भारत को पंथ (मत) निरपेक्ष माना है। एक पंथनिरपेक्ष राज्य को पंथ (मत) से कोई वास्ता नहीं होना चाहिए। इसलिए मेरी प्रार्थना है कि आप मुझे अपने पंथ की वैयक्तिक रूप से घोषणा करने और उस पर आचरण करने के लिए स्वतंत्र छोड़ दें।

श्री लोकनाथ मिश्र ने भी संविधान सभा में अल्पसंख्यकों को अपने मज़हब पर न केवल आचरण अपितु उसके प्रचार–प्रसार को मूल अधिकार मान कर संरक्षण देने वाले संविधान के प्रावधानों पर चेतावनी

देते हुए कहा था : ''मुझे लगता है कि यदि संविधान का अनुच्छेद 19 स्वतंत्रता का अधिकार पत्र है तो **अनुच्छेद 25 हिन्दुओं को गुलाम बनाने का अधिकार पत्र है। मैं सचमुच विश्वास करता हूं कि यह हमारे संविधान का सर्वाधिक अपमानजनक और अंधकारमय अनुच्छेद है। मैं निवेदन करता हूं कि मैंने सभी संवैधानिक प्रेसीडेन्स (पूर्ववर्तिता) का अध्ययन किया है और मुझे कहीं भी मूल अधिकारों में पंथ (मज़हब) के प्रचार के लिए प्रोपेगेन्डा करने का अधिकार दिए जाने का (किसी संविधान में) उदाहरण नहीं मिला।**

महोदय, हमने भारत को पंथनिरपेक्ष राज्य घोषित किया है। ऐसा हमने पर्याप्त और विवेकशील कारणों से किया है। क्या इसका यह अर्थ नहीं है कि हम विविध पंथों से कोई वास्ता नहीं रखते ? आपको मालूम है कि पंथों के प्रचार द्वारा इस देश में कैसी दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति पैदा हुई और देश का बटवारा हुआ। यदि इस देश में इस्लाम अपना मत लादने के लिए न आया होता तो संपूर्ण भारत पूर्णतया पंथनिरपेक्ष और शांतिपूर्ण राज्य बना रहता। विभाजन का कोई प्रश्न ही नहीं उत्पन्न होता। धीरे–धीरे यह लगता है कि **हमारा ''पंथनिरपेक्ष राज्य'' वाक्य ही एक मूर्खतापूर्ण और अविश्वसनीय वाक्य हो गया है जो इस भूमि की पुरातन संस्कृति की उपेक्षा करने का एक मात्र बहाना है।** ... किन्तु यह अन्यायपूर्ण उदारता जिसमें एक ओर पंथ पर पाबंदी लगाई जा रही है और दूसरी ओर उसके प्रचार–प्रसार को मूल अधिकारों में शामिल किया जा रहा है, कपटपूर्ण और खतरनाक है। न्याय की मांग है कि इस भारत भूमि की प्राचीन संस्कृति और धर्म को, यदि एक हज़ार वर्ष के दमन के पश्चात् उसकी पुरानी प्रतिष्ठा पर स्थापित न भी किया जा सके तो उसके साथ अन्याय भी न किया जाए। हमारा ईसा मसीह या पैगम्बर मोहम्मद से कोई झगड़ा नहीं है और न उससे जो उन्होंने देखा और कहा। हम उनका आदर करते हैं किन्तु **मेरे विचार से वैदिक संस्कृति से बाहर कोई रह ही नहीं जाता।** प्रत्येक दर्शन और संस्कृति का अपना स्थान अवश्य है किन्तु यह पंथों का शोर एक खतरनाक शोर है। यह अवमूल्यन करने वाला है। यह विभाजन कर्ता है और लोगों को सामरिक कैम्पों में बांटता है। आज के संदर्भ में प्रारूप के अनुच्छेद 19 (संविधान के अनुच्छेद 25) में ''धर्म के अबाध रूप से प्रचार करने के अधिकार'' का क्या अर्थ है? **हिन्दू संस्कृति और हिन्दू जीवन पद्धति को संपूर्णतया नष्ट करने का मार्ग प्रशस्त कर देना ही इसका एक मात्र अर्थ है। इस्लाम हिन्दू दर्शन के विरुद्ध शत्रुता की घोषणा कर चुका है। ईसाई मत ने ऐसी नीति अपनाई है जिससे वे हमारे सामाजिक जीवन की सीमाओं में पिछले दरवाज़ों से शांतिपूर्वक घुस सकें।** यह इसलिए संभव हुआ क्योंकि हिन्दू धर्म ने अपने बचाव के लिए कोई किलेबंदी नहीं की है। हिन्दू धर्म विविध दृष्टिकोणों और जीवन दर्शनों के एक सम्मिलित दृष्टिकोण वाले

समुदायों का समूह है। जो एक संगठित समाज के रूप में अपने दर्शन के अनुसार शांति और सहअस्तित्व के साथ रहना चाहते हैं। **किन्तु हिन्दू की उदारता का दुरुपयोग हुआ है तथा हो रहा है और राजनीति हिन्दू संस्कृति पर विजयी हो गई है।**

''वास्तव में संसार के किसी भी संविधान में मत के अबाध रूप से ''प्रचार'' करने का मूल अधिकार नहीं दिया गया। आइरिश फ्री स्टेट के संविधान में वहां के बाहुल्य समाज के धर्म को प्रधानता दी गई है। भारत के हम लोग इस तरह की बात से शर्माते हैं। **अंत में मेरा निवेदन है कि इस अनुच्छेद से 'प्रचार' शब्द को निकाल दिया जाए ... यदि जीवित रहना है सावधानी बरतें।**

सांप्रदायिक शिक्षा के विरुद्ध चेतावनी देते हुए श्री आर.के.सिधवा ने कहा था कि : ''जैसा कि मैंने कहा यद्यपि शासन किसी भी मत–मतान्तर का अनुयायी नहीं है, उन शिक्षा संस्थानों को जो सरकारी सहायता नहीं लेते, अपने मत की शिक्षा देने का अधिकार दिया जा रहा है। मैं इन मतों के धर्म–ग्रंथों की मान्यताओं पर चर्चा नहीं करना चाहता जो इन शिक्षा संस्थानों में पढ़ाए जाते हैं। मुझे उदाहरण मालूम है जब धर्म के नाम पर सांप्रदायिक घृणा की शिक्षा दी गई है। मुझे नहीं मालूम कि इस (आने वाले) नए युग में जब शासन इस संविधान के अनुसार चलेगा, तो उसी प्रकार की शिक्षा दी जाएगी अथवा नहीं (जिसने मुसलमानों को हिन्दुओं से इतनी घृणा करना सिखाया कि 96 प्रतिशत मुसलमानों ने हिन्दू बाहुल्य के साथ रहना अस्वीकार कर दिया–लेखक) उसी प्रकार की शिक्षा के रोकने को जो (अल्पसंख्यकों के) अनेक स्कूलों में दी जा रही है कोई प्रावधान नहीं किया गया है। मैं उनका नाम ले सकता हूँ परन्तु मैं सांप्रदायिक विद्वेष फैलाना नहीं चाहता। मैं केवल यह चाहता हूँ कि इस विषय में संविधान में यह स्पष्ट कर दिया जाए कि धार्मिक शिक्षा से हमारा आशय किस प्रकार की शिक्षा से है।''

संविधान सभा में दी गई चेतावनी को नकारने से गंभीर परिणाम शीघ्र ही आने शुरू हो गए तथा 60 साल बाद अब गंभीर समस्या उत्पन्न हो चुकी है। इस पुस्तक में हमें केवल मुस्लिम शिक्षा संस्थानों पर चर्चा करनी है। जहाँ तक भारत में स्थापित मदरसों का प्रश्न है, समझने योग्य बात यह है कि मदरसों में उलेमा जहाँ मुसलमान बच्चों को इस्लाम व पैगम्बर मोहम्मद के लिए अपूर्व प्रेम सिखाते हैं, साथ–साथ इन्हीं बच्चों को भारत के गौरवशाली अतीत से पूर्णतया अनभिज्ञ रखा जाता है और जिन जिहादी मुस्लिम आक्रमणकारियों ने देश के हिन्दुओं पर घोर अत्याचार किया तथा उनका नरसंहार किया उनका वर्णन तो दूर उसे छिपाया जाता है। **देश में लगभग 90 प्रतिशत मुसलमान वे हैं जो हिन्दू थे किन्तु मुस्लिम काल के दौरान जज़िया कर न अदा कर सकने के कारण उन्हें मजबूरन इस्लाम मज़हब स्वीकारना पड़ा था।** वही मदरसों

में पढ़ाने वाले उलेमा मुसलमान बच्चों के प्रेरणास्रोत हैं और वही निश्चय करते हैं कि इन अबोध बालकों को किस प्रकार की शिक्षा देनी है तथा किस प्रकार की मानसिकता पैदा करनी है। उलेमा मदरसों में किसी भी छात्र को निर्धारित पाठ्यक्रम के अतिरिक्त किसी भी अन्य पुस्तक पढ़ने की अनुमति नहीं देते। स्मरण होगा कि मौलाना हसन अली नदवी (अली मियां) रेक्टर नदवा उल उलूम लखनऊ ने स्पष्ट किया था : ''तुम्हारी पढ़ने की मेज़ कोई सार्वजनिक पुस्तकालय की मेज़ नहीं है। यह मेज़ एक मदरसे में पढ़ने वाले तालीबानों की है। अलमारियों में ऐसी कोई पुस्तक नहीं मिलनी चाहिए जिसको पढ़कर तुम्हारा दिमाग हफ्तों तक मानसिक उलझन में पड़ा रहे। कोई भी ऐसी पुस्तक नहीं पढ़ी जानी चाहिए जो इस्लामिक आदर्शों के प्रति शंका पैदा करे।''

संविधान सभा में दी गई चेतावनी को नकारने का परिणाम यह भी स्पश्ट है कि देश में छोटे व बड़े लगभग 5 लाख मदरसे व मख्तब चलाए जा रहे हैं जिनमें इस्लाम के प्रति अटूट प्रेम तथा साथ–साथ दूसरे धर्मों को झूठा बताते हुए मुसलमान बच्चों के मस्तिष्क में उनके प्रति विष भरा जाता है। साथ–साथ उन्हें सिखाया जाता है कि विश्वभर में केवल उनका मज़हब ही सच्चा है तथा उनका यह मज़हबी फर्ज है कि सब झूठे मतों को हटाकर उनको सच्चे मज़हब (इस्लाम) में लाना है।

इन मदरसों तथा मस्जिदों में चलने वाले मख्तबों के विषय में कुछ विद्वानों के विचार जानना हितकर होगा तथा आवश्यक भी है।

1. विख्यात ब्रिटिश राजनीतिक **वि□ाशज्ञ सर स्लीकम का कहना** है कि ''मस्जिदों में दी जाने वाली शिक्षा हिन्दू और मुसलमानों के बीच भाई–चारा उत्पन्न करने के स्थान पर शत्रुता की भावना को जन्म देती है।
2. **पत्रकार जी.एच.जॉनसन** का स्पष्ट कहना है कि ''इस्लामी राष्ट्रों में इस्लाम की शिक्षाओं को अपने पाठ्यक्रम में शामिल कर दिया गया है। यह कार्यक्रम गत 30 वर्षों से तेज़ी से चलाया जा रहा है। इसके विपरीत यूरोपीय इसाई देशों ने मज़हब को लगभग उसी समय से अपने पाठ्यक्रमों से निकाल दिया है। इस प्रकार इस्लामी शिक्षा प्रणाली को आक्रामक रूप दिया जा चुका है। वर्तमान काल में विभिन्न देशों में यह इस्लाम की सर्वश्रेष्ठ उपलब्धि है। इस इस्लामी शिक्षा प्रणाली की ओर ध्यान इस कारण नहीं जाता, क्योंकि बहुधा यह छोटे–छोटे मदरसों में दी जाती है। मुस्लिम बच्चों के दिमाग व हृदय में इस्लामी कट्टरता पैदा करना हाथ काटने से भी अधिक आक्रामक है। **(मिलिटेंट इस्लाम : जी.एच. जॉनसन,**

पृ. 112) भारत में भी स्थिति समान है।

3. **श्री मकबूल अहमद के अनुसार,** ''रुढ़ीवादिता फैलाने वाले तरीकों में वे स्वयं मदरसों व मक्तबों में दी जाने वाली शिक्षा को सबसे अधिक महत्वपूर्ण समझते हैं। इन मदरसों में पढ़ाने वाले मौलाना समाज में रुढ़िवाद फैलाने और उसके प्रचार–प्रसार के प्रमुख स्रोत हैं।''

ब्रिटिश शासन काल के दौरान 19वीं शताब्दी के अंत तक उत्तर प्रदेश व बिहार में मदरसों की संख्या केवल 30 थी। **डॉ. मुशीरूल हक द्वारा लिखित पुस्तक ''इस्लाम इन सेक्युलर इंडिया'' के अनुसार 1950 ई. में (भारत का संविधान लागू होने तक) 88 मदरसे थे।** परन्तु 1969 में मदरसों की संख्या केवल उत्तर प्रदेश व बिहार में बढ़कर 356 हो गई थी। (मदरसों व मक्तबों की संख्या अब लाखों में है – लेखक)। अभी हाल ही में एक पुस्तक "Redefining Urdu Politics in India" जिसके संपादक अथर फारूखी हैं (जो ऑक्सफोर्ड युनिवर्सिटी प्रैस में छपी) इस पुस्तक में एक लेख – ''मदरसाज़ एण्ड दि मेकिंग ऑफ मुस्लिम आइडेंटिटी'' शीर्षक से डॉ. अर्जुमन्द अरा ने लिखा है। **लेखिका लिखती हैं कि सरकारी सूत्रों के अनुसार देश में अब 5 लाख मदरसे स्थापित हैं, जिनमें लगभग 5 करोड़ मुस्लिम बालक–बालिकाएं मज़हबी तालीम पाते हैं। कोई साधारण व्यक्ति भी निष्कर्ष निकाल पाएगा कि इन 5 करोड़ तालिबानों का भविष्य क्या होगा।** कोई नहीं बता पाएगा कि इनमें से कितनों को मज़हबी शिक्षकों की नौकरी मिल सकेगी। लेखिका का मानना है कि आज की कांग्रेस सरकार इन मदरसों को एक नए प्रकार के सी.बी.एस.ई. बोर्ड की तरह बनाकर उनके अंतर्गत लाना चाहती है।

डॉ. मुशीरूल हक के मदरसों के बारे में विचार इस प्रकार हैं :–

''मदरसों के अपूर्व विस्तार से यह समझना आसान है कि मुसलमानों को अपनी मज़हबी शिक्षा की कितनी फिक्र है। वे अच्छी तरह जानते हैं कि मदरसों में पढ़े युवकों के लिए नौकरी के सभी द्वार बंद हैं। फिर भी इन मदरसों को चलाने के लिए अपूर्व धन दिया जाता है जिससे इस्लामी मानसिकता में रचे नव–जवानों की कमी न हो पाए। सच यह है कि प्रत्येक मुसलमान परिवार अपने परिवार से कम से कम एक लड़के को मदरसे में शिक्षा अवश्य दिलाता है जिससे उसका परिवार इस्लाम की मुख्य धारा में निरंतर बना रहता है। उनका यह भी मानना है कि कयामत के दिन मदरसों में पढ़ा वह बालक अपने परिवारजनों की पैरवी करेगा जिससे जन्नत मिल सके।''

जहाँ मुसलमानों को अपने शिक्षा संस्थानों की तथा दी जाने वाली तालीम की

इतनी चिंता है, इसके विपरीत स्वतंत्रता के बाद हिन्दू शिक्षा की अपूर्व क्षति हुई। शोक की बात यह है कि मुस्लिम काल में तो मुस्लिम शासकों ने भलीभाँति समझ लिया था कि हिन्दुओं की धार्मिक शिक्षा के चलते हिन्दुओं का धर्मान्तरण असंभव है जिसके अंतर्गत उन्होंने सुनियोजित ढंग से हिन्दुओं के गुरुकुलों, पुस्तकालयों तथा ब्राह्मण शिक्षकों को निरंतर नष्ट किया। साथ–साथ उन्होंने हिन्दुओं के पूजागृह (मंदिरों) तथा तीर्थ स्थानों का भी विध्वंस किया। हिन्दुओं पर तीर्थयात्रा करने पर टैक्स लगाया। हिन्दुओं को 'जिम्मी' का दर्जा देकर अमानवीय जज़िया कर देने पर मजबूर किया। स्वतंत्रता के बाद आशा करनी चाहिए थी कि देश की सरकार हिन्दुओं पर मुस्लिम काल के दौरान जो शिक्षा संस्थानों को नष्ट किया गया, उन्हें पुनः स्थापित करेगी परन्तु हुआ इसके विपरीत। **हिन्दुओं को अपना मुस्लिम काल का इतिहास जानने पर भी लगभग रोक लगा दी गई और सरकार की ओर से आदेश दिए गए कि भारत में मुस्लिम काल को हिन्दू–मुस्लिम सौहार्द के रूप में प्रस्तुत किया जाए।** गंभीर परिणाम स्पष्ट देखे जा सकते हैं।

◆◆◆

अध्याय-१२

मदरसों की कुछ अन्य जानकारी

भारत संसार में ऐसा अनोखा देश है जिसमें मुसलमानों ने 7 वीं शताब्दी के अंत से आना शुरू किया तथा तेरह सौ वर्षों से यहीं हैं। 12 वीं शताब्दी के अंत में सम्राट पृथ्वीराज चौहान की मोहम्मद गौरी द्वारा हार के बाद दिल्ली का सिंहासन मुसलमानों के हाथ आया और 600 वर्षों तक उनका राज चलता रहा। इतने लंबे इस्लामी शासन के बावजूद जिसमें मनोवैज्ञानिक दबाव डालने वाला शरिया कानून व अपमानजनक जज़िया कर हिन्दुओं पर लगे फिर भी भारत का पूर्ण इस्लामीकरण न हो सका। इस **लंबे काल में जो कुछ घटा उसका वर्णन रिज़वान सलीम ने द हिन्दुस्तान टाइम्स दिल्ली में इस प्रकार किया हैं** :–

(क) '' .... जिस समय मुस्लिम आक्रमणकारी हिन्दुस्तान की ओर अग्रसर हुए (8 से 11 शताब्दी) उस काल में हिन्दुस्तान रत्नों, सोना तथा चांदी, धर्म एवं संस्कृति और कला तथा ज्ञान के क्षेत्र में विश्व का सबसे अधिक संपन्न देश था। दशवीं शताब्दी का हिन्दुस्तान उस काल के पूर्व तथा पश्चिम के देशों से दार्शनिक चिंतन तथा वैज्ञानिक सैद्धांतिकरण, गणित तथा प्रकृति की कार्यप्रणालियों के ज्ञान में बहुत आगे था। मध्य काल के पूर्व से ही **हिन्दू चीन, फारस (ससानिया सहित), रोमन, बैजन्टाइन निवासियों से अनेक प्रकार से निर्विवाद रूप से श्रेष्ठ थे।** शिव एवं विष्णु के अनुयायियों ने इस प्रायद्वीप में अपने लिए ऐसे समाज की संरचना की थी जो बौद्धिक दृष्टि से उस काल के पारसी, ईसाई और मुस्लिम एकेश्वरवादियों से उन्नत तथा आनंददायक तथा समृद्ध था। इस्लामी आक्रमणकारियों द्वारा विनष्ट किए जाने के पूर्व मध्ययुगीन हिन्दुस्थान इतिहास की पांच समृद्ध संस्कृतियों में सबसे अधिक प्रतिष्ठित था।

(ख) हिन्दू कला पर जिसको मुस्लिम मूर्तिभंजकों ने नष्ट किया, दृष्टिपात करें। प्राचीन हिन्दू मूर्तिकला ओजस्विता तथा संवेदनशीलता में श्रेष्ठ है। यह विश्व में कहीं भी रचित मानवीय कलाकृतियों में श्रेष्ठतम है (केवल ग्रीस के प्राचीन शास्त्रीय कलाकारों द्वारा बनाई गई मूर्तियां ही हिन्दू मंदिर स्थापत्य कला की श्रेणी में आ सकती हैं)। प्राचीन हिन्दू मंदिर वास्तुकला

(विस्मित) श्रद्धा–उत्प्रेरक, अलकृंत, सम्मोहन में तल्लीन करने वाली स्थापत्य कला है जैसी कि विश्व में कहीं भी नहीं पाई जाती। फ्रांस के कैथीड्रल के गौथिक कला ही एक अन्य धार्मिक वास्तुकला है जो हिन्दू मंदिरों की क्लिष्ट स्थापत्य कला की समानता कर सकती है। सभ्यता के इतिहास में किसी भी कलाकार ने हिन्दुस्थान के प्राचीन कलाकारों एवं मूर्तिकारों के समान प्रतिभा नहीं दिखाई है।

(ग) मुस्लिमों की जहरीली मानसिकता ने हिन्दुस्थान के मूर्ति पूजकों के प्रति घृणा के कारण बहुत बड़ी संख्या में प्राचीन हिन्दू मंदिरों को नष्ट कर दिया। इस ऐतिहासिक तथ्य का वर्णन मुस्लिम एवं अन्य इतिहास लेखकों ने किया है। कुछ मंदिरों को थोड़ा तोड़ा गया परन्तु वे तोड़ने के बावजूद भग्न अवस्था में मौजूद रहे। किन्तु बहुत बड़ी संख्या सैंकड़ों नहीं बल्कि कई सहस्रों की संख्या में प्राचीन मंदिर तोड़कर मात्र पत्थर के टुकड़ों में बदलकर विनष्ट कर दिए गए। वाराणसी, मथुरा, उज्जैन, महेश्वर, ज्वालामुखी और द्वारका के प्राचीन नगरों में एक भी मंदिर पुरानी स्थिति में शेष नहीं बचा है।

(घ) हिन्दू मंदिरों को नष्ट करने का सिलसिला आठवीं शताब्दी के प्रारंभ में शुरू हुआ जो लगभग 1000 वर्ष (1700 ईसवी) के बाद तक चलता रहा। दिल्ली के प्रत्येक मुस्लिम शासक (अथवा प्रान्तों के राज्यपाल) ने अधिकांश समय उत्तर–दक्षिण, पूरब–पश्चिम में हिन्दू राजाओं से युद्ध में ही बिताए और प्रत्येक मुस्लिम सुल्तान तथा उनके सेनापतियों ने मंदिरों तथा मूर्तियों को तोड़ने में ही आनन्द की अनुभूति की। उन्होंने बड़ी संख्या में हिन्दुओं का कत्ल किया। निष्कर्ष यह है कि प्रत्येक हिन्दू मंदिर कला की श्रेष्ठ कृति थी।

(ड.) मुस्लिम आक्रमणकारियों ने जिस क्रूरता से देवी–देवताओं, राक्षस, एवं अप्सराओं, राजाओं तथा रानियों, नर्तकियों तथा गायकों की प्रतिमाओं का भंजन किया वह सचमुच भयंकर है। मुस्लिम सुल्तान नैतिक रूप से इतने भ्रष्ट (विकृत) थे कि गैर–मुसलमान (काफिर) हिन्दुओं को इस्लाम की ओर आकृष्ट करने में अपने वैयक्तिक उदाहरण एवं प्रेरणा (उपदेश) द्वारा इस्लाम की ओर आकर्षित करने के बजाए उन्होंने तोड़े गए मंदिरों के स्थान पर मस्जिदें बना दीं और मूर्खतापूर्वक मिथ्याभिमान करने लगे कि उन्होंने हिन्दुओं की बुद्धि विवेक तथा संस्कृति पर विजय प्राप्त कर ली है। मैंने (रिज़वान सलीम) हिन्दू मंदिरों के पत्थर तथा स्तम्भों को अनेक मस्जिदों की बनावट में स्थापित हुए देखा है। इनमें जामा मस्जिद, और अहमदाबाद की अहमदशाह मस्जिद, जूनागढ़ (गुजरात) के ऊपरकोट

किले की मस्जिद, और विदिशा (भोपाल के निकट), अजमेर की प्रसिद्ध दरगााह के निकट अढ़ाईदिन का झोपड़ा और धार (इन्दौर के नज़दीक) विवादास्पद भोजशाला ''मस्जिद'' शामिल हैं।''

रिज़वान सलीम : व्हॉट दि इनवेडर्स रिअली डिड''–(द हिन्दुस्तान टाइम्स, दिल्ली 28.12.1997) से साभार।

भारत में इस लंबे इस्लामिक राज के दौरान लगातार हिन्दुओं का तलवार के ज़ोर पर धर्मपरिवर्तन होता रहा, साथ–साथ हिन्दुओं को खुली छूट दी गई कि वे इस्लाम स्वीकारें और जज़िया कर से मुक्त हो जाएं। 12 शताब्दी से निरंतर मदरसों की स्थापना होती रही। इस समस्त काल में शिक्षा देने वाले मदरसों में मुख्यतया विदेशी मुसलमान ही शिक्षा प्राप्त करते थे (इसकी कुछ जानकारी पिछले अध्यायों में दी जा चुकी है)। 13वीं शताब्दी में मौलाना ज़ियाउद्दीन बरनी ने अपने लिखित ''फतवे जहाँदारी'' में स्पष्ट किया था कि इन **हिन्दुस्तानी मुसलमानों (राजिल अथवा अजलफ)** को केवल नमाज पढ़ना, रोज़े रखना तथा मुसलमानों के कुछ अन्य रीति–रिवाज़ों की ही शिक्षा मिलनी चाहिए। यह प्रणाली 18वीं शताब्दी तक चलती रही। इसके विपरीत कुछ विदेशी मुसलमान जो मुख्यतया अरब, ईरान, मध्य एशिया से आए थे, **जिनको अशरफ (ऊँचे कुल का मुसलमान)** माना जाता था, केवल उन्हीं अशरफ कुल के मुसलमानों को इस्लामी तालीम प्राप्त करने का अधिकार था जिससे उन्हीं का वर्चस्व निरंतर सुल्तानों पर बना रहा तथा इन्हीं उलेमाओं के मतानुसार सुल्तानों और बादशाहों ने (अकबर को छोड़कर) शासन किया। मौलाना बरनी ने सुल्तान को लिखा था कि इन छोटे वर्ग के हिन्दुस्तानी मुसलमानों (राज़िल एवं अजलफ) को किसी भी सरकारी पद पर नियुक्त न किया जाए। इसका सुलतानों ने निष्ठापूर्वक पालन किया। (Reference Legacy of Muslim rule in India, P.50 - K.S.Lal)

सुल्तान गियासुद्दीन बलबन (1200–1287) के काल में कमाल मेहरा नामक एक हिन्दुस्तानी मुसलमान ने सुल्तान के समक्ष जाकर नौकरी देने की प्रार्थना की। सुल्तान बलबन यह जानकर कि वह राज़िल वर्ग का हिन्दुस्तानी मुसलमान है, आग बबूला हो उठा और आदेश जारी किया कि प्रत्येक सरकारी सेवक की जाति मालूम की जाए तथा जो भी छोटे वर्ग के पाए जाएं उन्हें फौरन निकाल दिया जाए।

समस्त मध्यकालीन युग में इन्हीं अशरफ कुल के उलेमाओं ने सुलतानों को अपने घेरे में रखा। कारण था कि इन्हीं उलेमाओं को इस्लाम का ज्ञानी माना जाता था तथा सुल्तानों को इनकी राय मानने के अलावा कोई विकल्प न रहता था। **मध्य काल में शिक्षा का मुख्य विषय था ''हनफी कानून'' जो आज भी देवबंद तथा देश के अन्य बडे मदरसों में मजहबी तालीम का एक प्रमुख विषय बना है।** अनेक विद्वानों व विचारकों का मत है कि आज के बदले युग में 'हिदाया'

पढ़ाने का कोई औचित्य नहीं। परन्तु यह सोचना गलत है क्योंकि विचारक न भूलें कि मदरसों से निकले तालिबानों ने अफगानिस्तान में अपनी सफलता के पश्चात् वही मध्यकालीन शरिया कानून लागू किया। इसके अंतर्गत सभी मुसलमान लड़कियों के स्कूलों/कॉलेजों में ताले लगा दिए गए। औरतों को बुरका पहनना अनिवार्य किया गया। समाज से सभी नए युग के साधन समाप्त कर दिए गए। काफिरों को पहचान चिह्न लगाना अनिवार्य किया गया। भाग्यवश तालिबानों के काल को अमेरिका के हस्तक्षेप ने निरस्त कर दिया। यह प्रयास तालीबान द्वारा पुनः शुरू कर दिया गया तथा पुनः सफलता मिलती जा रही है। अफगानिस्तान जैसा हाल ईरान में अयातुल्ला खुमैनी ने इस्लामिक क्रांति के तुरंत बाद प्रारंभ किया।

ईरान

ईरान की मुस्लिम प्रजा जो शाह पहलवी के राजकाल में नवीनतम जीवन प्रणाली के अंतर्गत रहते थे, अयातुल्ला खुमैनी द्वारा लाई क्रांति के बाद धीरे–धीरे उन्हें सातवीं शताब्दी वाली इस्लामी पद्धति में लाया जाना शुरू किया। विरोध करने वालों को मृत्यु दण्ड देना शुरू किया गया। क्रांति के 27 वर्ष बाद **अब ईरान में स्थिति यह है कि हज़ारों ईरानी महिलाओं को कट्टरपंथी इस्लामी लिबास अपनाने को विवश किया जा रहा है तथा सैंकड़ों को इसी अपराध के अंतर्गत देश की राजधानी तेहरान में गिरफ्तार किया जाने लगा है।** पुलिस की मोटरगाड़ियां तेहरान के बड़े बिक्री केन्द्रों पर इस कार्य के लिए मुस्तैदी से खड़ी रहती हैं। **(टाइम्स ऑफ इंडिया, दिनांक 28.4.2007)**

इस प्रकार ईरान के मुस्लिम देशवासियों की 27 वर्ष पहले की अपनाई गई जीवन प्रणाली को जिसके अंतर्गत वे स्वयं को स्वतंत्र महसूस करते थे, छीन कर वापिस 7वीं शताब्दी वाली कट्टर इस्लामी परम्परा में ले जाने के प्रयत्न तेजी से चलाए जा रहे हैं। यही हाल गत कुछ वर्षों में पाकिस्तान तथा बंगलादेश का हो गया है।

बंगलादेश

बंगलादेश का हाल हमारे देशवासी स्वयं देख रहे हैं। **श्रीमती इंदिरा गांधी ने पूर्वी पाकिस्तान में क्या यह सोच कर हस्तक्षेप किया था कि ''क्या वह पृथक कट्टर इस्लामी बंगलादेश बनेगा? क्या देश के किसी विचारक ने राय दी कि इस्लाम में प्रजातंत्र संभव नहीं ?** शेख मुजीबुर्रहमान का कैसा अंत हुआ (कत्ल किया गया) तथा आज केवल 38 वर्ष बाद बंगलादेश विश्व भर का प्रमुख कट्टरपंथी देश बन गया है तथा जिहाद फैलाने का प्रमुख स्रोत है। हमारे देशवासी क्यों नहीं जानते थे कि विश्व भर के समस्त मुस्लिम देश एक राष्ट्र (उम्मा) के सदस्य हैं तथा बंगलादेश बनवाना हमारे हित में न होगा। **बंगलादेश में स्वतंत्रता (1947 के बाद) 28 प्रतिशत हिन्दू थे जो आज**

घटकर 8 प्रतिशत रह गए हैं। क्या कोई हिन्दू नारी आज बंगलादेश में अपनी इज़्ज़त बचाकर रह सकती है? देशवासियों को जानना चाहिए यह बदलाव बंगलादेश में बड़ी संख्या में मदरसे स्थापित होने से प्रारंभ हुआ। **आज बंगलादेश में एक लाख से अधिक मदरसे चलाए जा रहे हैं जिसके फलस्वरूप बंगलादेश में पढ़े तालीबान भारत में बम विस्फाटों को अंजाम देने में शामिल हैं। निःसंदेह बंगलादेश एक कट्टर इस्लामी देश बन चुका है जिससे भारत को गंभीर खतरा है।**

पाकिस्तान

पाकिस्तान के तत्कालीन राष्ट्रपति जनरल परवेज़ मुशर्रफ ने 9/11 के अमेरिका में घटित कांड के पश्चात् एक निर्देश जारी किया जिसके अंतर्गत पाकिस्तान में मदरसों का पंजीकरण अनिवार्य करने तथा मस्जिद बनाने पर सरकार द्वारा निगरानी करने का विषय था। इस निर्देश ने पाकिस्तान के विभिन्न उलेमाओं और मौलानाओं में एक हलचल पैदा कर दी तथा उन्होंने इस पर घोर आपत्ति की। उन्होंने दलील दी कि इस्लाम में मदरसे हज़ारों वर्षों से चलाए जा रहे हैं और इन पर किसी प्रकार का नियंत्रण संभव नहीं। जनरल मुशर्रफ जो स्वयं कट्टर इस्लामी हैं, द्वारा ऐसा निर्देश देना, बिना कारण न था। मदरसों के बारे में सभी स्वीकार करते हैं कि अनेक पाकिस्तानी मदरसों में इस्लामी शिक्षा के साथ–साथ जिहादी आतंकवाद का पाठ पढ़ाया जाता है तथा तालिबानों के मस्तिष्क में विश्व को जीतने का जज़्बा पैदा किया जाता है। पाकिस्तानी खुफिया एजेंसी **आईएसआई के महानिदेशक जनरल हमीद गुल ने मदरसों में पढ़े इन तालिबानों का लाभ उठाकर एक कट्टर इस्लामी सेना तैयार कर डाली थी जिसने अफगानिस्तान के बड़े भाग पर कब्ज़ा किया।**

शाहिद ए चौधरी दिनांक 24.4.2007 के 'दैनिक जागरण' में लिखते हैं कि दो असरदार मदरसों ने पाकिस्तान में इस्लामी क्रांति शुरू करने का ऐलान कर दिया है। पाकिस्तानी सरकार असहाय मूक दर्शक से ज़्यादा कुछ प्रतीत नहीं हो रही। खादिमे–इस्लाम तालिबान (इस्लाम की सेवा करने वाले छात्र) नामक संगठन ने वीडियो–ऑडियो विक्रेताओं को एक पत्र के ज़रिए धमकी दी कि एक माह के भीतर इस गैर–इस्लामी धंधे को बंद कर दें। इस धमकी को हल्के से न लें, इसलिए पाकिस्तान के बाजारों में दिन में दो बार चालीस/पचास हथियारबंद नकाबपोश गश्त लगाते हैं और ऑडियो–वीडियो, सीडी/कैसेट बेच रहे दुकानदारों से कारोबार बंद करने के लिए कहते हैं। पुलिस इन युवकों को रोकने में असमर्थ है। यह जानना भी आवश्यक है कि इन तालिबान समर्थको ने मार्च, 2007 के शुरू में दाढ़ी न कटवाने का फरमान जारी किया था। 4 मार्च, 2007 को इस्लामाबाद के खार क्षेत्र में हेयर ड्रैसिंग की दो दुकानों पर बम भी फैंके गए। खौफ को फैलाने में बुर्का ओढ़े

मदरसा छात्राएं भी शामिल हैं।

उपरिवर्णित किस्म की हरकत उत्तर–पश्चिमी पाकिस्तान में तो आम बात थी, जहाँ तालिबानी राज चलता है। इस क्षेत्र में यदि कोई मदरसे के फरमानों और फतवों के खिलाफ जाने की हिम्मत करता है तो उसे या उसके प्रतिष्ठानों को बम से उड़ा दिया जाता है।

परन्तु आश्चर्य यह है कि अब इन फतवों ने पाकिस्तान की राजधानी इस्लामाबाद में भी पैर फैला दिए हैं। **इस्लामाबाद स्थित लाल मस्जिद के दो मदरसे – जामिया फरीदिया और जामिया हस्फा पाकिस्तान में जबरन शरियत कानून लागू करने के लिए सक्रिय हैं।** इस्लामिक क्रांति का ऐलान करते हुए इन मदरसों ने धमकी दी कि अगर सरकार ने शरीयत कानून लागू करने से उन्हें रोका तो इसके गंभीर परिणाम भुगतने होंगे।

'टाइम्स ऑफ इंडिया' दैनिक (दिनांक 20.4.2007) के अनुसार ''कट्टरवादियों के आगे पाकिस्तान सरकार ने हथियार डाले तथा कर्मचारियों को आदेश दिया कि वे लाल मस्जिद के उलेमाओं से संपर्क स्थापित करके यह मुद्दा सुलझाएं। लाल मस्जिद के मौलाना अब्दुल अज़ीज़ तथा मदरसे के मौलाना अब्दुल रशीद गाज़ी से भेंट की गई और लाल मस्जिद के अधिकारियों तथा जामिया हस्फा मदरसे की महिला छात्रों को आश्वासन दिया कि पाकिस्तान सरकार उनकी सब मांगे जिनमें शरिया कानून लगाना शामिल हैं, मानने को तैयार है।

इस प्रकार की मज़हबी शिक्षा मदरसों व मख्तबों द्वारा न केवल पाकिस्तान में बल्कि भारतवर्ष में भी प्रत्येक मुसलमान बच्चे को दी जा रही है। प्रश्न उठता है कि क्या इन मदरसों से पढ़े तालिबान अन्य देशवासियों के साथ सह–अस्तित्व स्वीकार कर सकते हैं। क्या ये मदरसों में पढ़े नागरिक देश को दारुल–इस्लाम बनाने के इच्छुक न होंगे तथा आज की स्थिति (दारुल हरब) को बदलने का निंरतर प्रयास न करते रहेंगे। क्या भारतवर्ष में शरीयत कानून लगाने की मांग न होगी। सच यह है कि यह मांग उठाई जा रही है।

देश में आंतरिक सुरक्षा को ध्यान में रखकर भारत के प्रधानमंत्री ने एक चार केन्द्रीय मंत्रियों का समूह बनाया जिसको आंतरिक सुरक्षा मज़बूत करने व संभावित खतरों की जानकारी देने का काम सौंपा। इस समूह के सदस्य थे, सरकार के तत्कालीन गृहमंत्री, रक्षामंत्री, अर्थमंत्री तथा विदेश मंत्री। फरवरी 2001 को इस समूह ने 135 पन्नों की एक रपट ''रिफॉरमिंग दि नेशनल सेक्युरिटी सिस्टम'' शीर्षक से सरकार को दी – जिसे सरकार द्वारा स्वीकार किया गया। यद्यपि इस रपट को सरकार ने सार्वजनिक न बनाया परन्तु फिर भी कुछ–कुछ भाग समाचार–पत्रों में छापे गए। माना जाता है कि देश के आंतरिक सुरक्षा के खतरों में से निम्नलिखित भी थे :–

''देश में पाकिस्तान, सउदी अरब, सूडान तथा अन्य मध्य एशियाई देशों के सहयोग से जिहादी आतंकवाद बढाने से संबंधित इकाइयां बनाई जा रही है। साथ–साथ सउदी अरब तथा दूसरे खाड़ी के देश पिछले कुछ वर्षों से बड़ी संख्या में आर्थिक सहायता भेजकर देश में मदरसे स्थापित करवा रहे हैं। इस रपट में स्पष्ट बताया गया कि मदरसों की सिलसिलेवार कड़ी देश के सीमावर्ती संवेदनशील क्षेत्रों में स्थापित हुई है जिससे उन क्षेत्रों के मुसलमानों को योजनाबद्ध कार्यक्रम के अनुसार इन्डॉक्ट्रिनेट कर कट्टरता सिखाई जा रही है। परिणाम है कि देश के भीतर समाज में आपसी सद्भाव को खतरा पैदा हो गया है। स्पष्ट है कि ऐसे मदरसे देश की आंतरिक सुरक्षा के लिए खतरनाक हैं। **साथ–साथ सरकार से कहा गया कि इस खतरे से निपटने के लिए तुरंत आवश्यकतानुसार कदम उठा कर इस समस्या से निपटा जाए।**

स्मरण होगा कि प.बंगाल के मुख्यमंत्री श्री बुद्धदेव भट्टाचार्य ने भी चेतावनी देकर सचेत किया था कि उनके प्रान्त में अनेक मदरसे गैर–कानूनी ढंग से स्थापित किए गए हैं तथा यह चिन्ता के विषय बनते जा रहे हैं। एक अनुमान के अनुसार प.बंगाल में गत कुछ वर्षों में 2116 मदरसे स्थापित किए जा चुके हैं। इसी प्रकार हरियाणा व राजस्थान के सीमावर्ती मेवात क्षेत्र के गाँव में पिछले 10 वर्षों के दौरान बेहिसाब मदरसे स्थापित किए गए हैं। **राजस्थान स्थित मेवात क्षेत्र के गोपालगढ़ गांव का मील मदरसा उस क्षेत्र में सबसे बड़ा है। भरतपुर के पहारी पुलिस स्टेशन के एस.एच.ओ. श्री मखन सिंह खाताना के अनुसार इस मदरसे में तीन हज़ार तालिबान मज़हबी तालिम हासिल कर रहे हैं।** यह भी माना जाता है कि इस मदरसे में विदेशी छात्र भी पढ़ते हैं तथा उत्तर प्रदेश के देवबंद तथा बरेली से आए मौलवी इस मदरसे में तालीम देते हैं। सन् 2001 में भरतपुर ज़िले के अधिकारी ने इस मदरसे में पढ़ने वालों की संख्या और उनके जन्मस्थान की जानकारी प्राप्त करने के निर्देश दिए। मदरसे के अधिकारियों ने पूरी जानकारी नहीं दी। क्षेत्र के निवासियों का मानना है कि यदि कुछ छिपाने को न था तो पूरी जानकारी देने में संकोच कैसा ? **ज़िले के अधिकारियों को यह सूचना मिली कि इस मदरसे में दूसरे प्रान्तों से लड़कियों को लाया जाता है तथा उन्हें मज़हबी बनाकर उनकी शादी क्षेत्र के स्थानीय निवासियों से कराई जाती है।**

स्पष्ट है कि देश के मदरसों पर अधिकारियों की नज़र है। यद्यपि हमारे देश के मदरसों में जानकारियों के आधार पर स्पष्ट है कि इन मदरसों में किसी प्रकार की सैनिक शिक्षा नहीं दी जाती। परन्तु यह भी संभव है कि मदरसों का स्थान समय पड़ने पर आतंकवादियों को शरण देने में प्रयोग किया जाता हो। ऐसी संभावना को कैसे नकारा जा सकता है। आखिर आतंकवादी गतिविधियों को चलाने वाले किसी न किसी सुरक्षित स्थान पर अवश्य पनाह लेते हैं।

टाइम्स ऑफ इंडिया, नई दिल्ली, दिनांक 20 फरवरी 2002 में छपे लेख ''मदरसाज़ मल्टीप्लाई ऑन गुजरात बॉर्डर्स'' के अनुसार कुछ स्थानों पर जिहादी संगठनों को सहयोग देने में उलेमा व मदरसों के तालिबान पकड़े भी गए। दिनांक 10 मई 2006 को ''इंडियन एक्सप्रेस'' में छपी सूचना के अनुसार पश्चिमी उत्तर प्रदेश में टांडा के मदरसे में पढ़ाने वाला मोहम्मद ज़ुबेर नामक व्यक्ति 7 मार्च 2006 को वाराणसी के संकटमोचन मंदिर को बम से उड़ाने के अपराध में वारदात अंजाम होने के बाद बच कर तो भागा परन्तु कश्मीर में पुलिस द्वारा मार डाला गया। पुलिस का दावा है कि मोहम्मद ज़ुबेर हरकत उल जिहाद–ए–इस्लामी 'हुजी' का नेता था। ज़ुबेर तथा एक दूसरे मौलाना वलीउल्ला फूलपुर (इलाहाबाद के निकट) का इमाम था तथा दोनों ने मिलकार यह साजिश रची थी। **ये दोनों कुछ वर्ष पहले देवबंद मदरसे में एक साथ पढ़ते थे।**

इस विषय में मदरसों के अधिकारियों का मानना है कि यह संभव है कि कुछ मदरसों में पढ़े तालिबान आतंकवादी गतिविधियों में भाग लेते हों जैसे प्रतिबंधित 'सिमी' संगठन, परन्तु उनका यह भी मानना है कि ये इक्का–दुक्का मिसाले हैं तथा इनके लिए अधिकारियों ने कोई अनुमति नहीं दी है। **मदरसों में पढ़े अनेक तालिबान उस शिक्षा के कारण किसी प्रकार की नौकरी के लिए काबिल नहीं होते और ऐसे निठल्ले जवान युवकों को आतंकवादी गतिविधियां चलाने वालों के लिए उन्हें पैसे का लोभ देकर सरलता से इस्तेमाल किया जा सकता है। ऐसे युवक सरलता से देश में उपलब्ध हैं।**

अनेक मुस्लिम नेताओं का कहना है कि हिन्दुस्तान के मदरसे केवल मज़हबी तालीम देते हैं तथा हमारे मदरसे पाकिस्तान के मदरसों की भाँति नहीं हैं जिनमें आक्रमक इस्लामी तालीम भी दी जाती है। उनका कहना है कि एक सच्चा मुसलमान आतंकवादी हो ही नहीं सकता। हबीबुर्रहमापन कासमी – दारुल–उलूम देवबंद : एक तहरीक पृ. 5–6 (**मौलाना ठीक ही फरमाते हैं – मदरसे तो केवल कुरआन पर आधारित जिहादी मानसिकता पैदा करते हैं**, वे आतंकवादी नहीं बनाते। वे तो अल्लाह के सिपाही हैं – लेखक)।

कुछ मुस्लिम नेताओं और उलेमाओं का यह भी मानना है कि हिन्दुस्तान में स्थापित मदरसों पर आक्रमण एक सोची–समझी अमेरिका एवं इज़राइल का इस्लाम विरुद्ध'' षड्यंत्र है जिसमें देश की सरकार व कट्टर हिन्दू संगठन शामिल हैं तथा अपने अमेरिका के आकाओं के इशारे पर ऐसा कर रहे हैं। (दीनी मदारिस को रजिस्ट्रेशन करने की तज़वीज़ नाकाबिल एक कबूल – 'कौमी आवाज़' 2 जुलाई 2002)

कुछ अन्य मुस्लिम बुद्धिजीवियों का यह भी मानना है ''क्योंकि इस्लाम ऐसी शक्ति लेकर सामने आ डटा है जो अमेरिका की सुपरपावर होने के दावे को चुनौती

दे सकता है, इसी कारण एक सोची–समझी साजिश के अनुसार दुष्प्रचार कि मदरसे 'डेंस ऑफ टेरर' अर्थात् आतंकवाद के अड्डे हैं, कहकर इस्लाम को बदनाम किया जा रहा है। एच.अब्दुल रकीब : 'दीनी मदारीस की मुखालफत और हमारी जिम्मेदारी–दावत, 28.1.2003)

कुछ अन्य मुस्लिम विद्वानों का यह भी मानना है कि अमेरिका समस्त विश्व के प्राकृतिक साधनों को हड़पना चाहता है परन्तु मदरसे अमेरिका के इस नापाक इरादे में बाधा हैं। मदरसे तो गरीबों की सहायता तथा आपस में समानता लाने में लगे हैं। हिन्दुस्तान के मदरसों के विरुद्ध दुष्प्रचार इस कारण किया जा रहा है जिससे देश में इस्लाम समाप्त किया जा सके। कारण यह कि **मदरसे जो मुस्लिम मज़हब को सुरक्षित रखते हैं और यदि मदरसे नहीं रहते तो परिणाम होगा कि देश के मुसलमानों को हिन्दू धर्म हड़प जाएगा, जिसे रोका नहीं जा सकेगा। यदि मदरसों के विरुद्ध आन्दोलन निरंतर चलता रहा तो मुसलमानों को चेतावनी दी जाती है कि उनका वही अंजाम होगा जो मुसलमानों का कुछ शताब्दी पहले स्पेन में हुआ था।**

उपरिवर्णित स्थिति को भलीभांति समझते हुए हमारे देश के मदरसों के प्रमुख उलेमाओं पर मदरसों के विरुद्ध इस प्रकार के विश्वव्यापी अभियान से निपटने की जिम्मेदारी आई है तथा वे उसके उपाय ढूंढने में जुटे हैं। इसका सरल उपाय है कि हिन्दुओं को वास्तविकता न जानने दी जाए। उनके साथ सद्भाव बढ़ाया जाए : साथ–साथ सभी दूसरे मतावलम्बियों से भी मिलजुल कर रहा जाए जिससे वे सब यह सोचने को बाध्य हों कि मदरसे जिहादी मानसिकता कैसे पैदा कर सकते हैं ?

कट्टरपंथी मुल्ला–मौलवियों का यह दावा सर्वथा निराधार है कि शरीया कानून रसूल हज़रत मोहम्मद के आदेशों पर आधारित है तथा इसमें किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं किया जा सकता। संसार में ऐसे 57 देश हैं जिनमें मुस्लिम शासन हैं। इनमें से केवल 2–3 को छोड़कर सभी देशों द्वारा शरीयत कानूनों में संशोधन किया जा चुका है। तुर्की जैसे कट्टरपंथी मुस्लिम देश में सन् 1918 में राष्ट्रपति कमाल अतातुर्क ने बहुपत्नीप्रथा को मुस्लिम महिलाओं का उत्पीड़न करने वाली प्रथा बताकर पाबंदी लगा दी थी। अनेक मुस्लिम देशों ने चोरी के अपराधों में हाथ काट देने जैसे कानून पर रोक लगाई। (यह बताना आवश्यक है कि केवल प्रजातांत्रिक राज्यों में जहाँ मुसलमान अल्पसंख्यक हैं शरीया कानून में किसी प्रकार के बदलाव लाने के विरुद्ध जोर–ज़ोर से विरोध प्रकट करते हैं जबकि इस्लामी देशों में शरीया कानून को आसानी से बदला जाता है।)

गत दो–तीन दशकों से सउदी सरकार द्वारा दी जाने वाली आर्थिक राशि वास्तव में विश्व में इस्लाम को बढ़ावा देने के उद्देश्य से एक सोची समझी नीति है। **''इनसाइड इस्लाम'' के लेखक रेज़ा एफ सफा का मानना है कि**

सउदी सरकार ने इस कार्य के लिए 87 बिलियन डॉलर (87,000,000,000 डॉलर) वहाबी कट्टर इस्लामी पद्धति को अमेरिका, अफ्रीका, दक्षिण पूर्व एशिया तथा यूरोप के अनेक देशों में दृढ़ करने के लिए दी। सउदी अरब द्वारा दी गई धनराशि का प्रयोग गैर इस्लामी देशों में जैसे यूरोप, उत्तरी व दक्षिणी अमेरिका, आस्ट्रेलिया तथा एशिया में 1500 आलीशान मस्जिदें, 202 महाविद्यालयों, 210 इस्लामिक सेंटर और 2000 से अधिक मदरसे स्थापित करने में लगाए। जहाँ तक भारत का संबंध है इस देश में विदेशी मुद्रा मुसलमान बिना रोक–टोक मदरसे स्थापित करने के लिए मंगाते रहे हैं।

सउदी अरब द्वारा हज़ारों मदरसे पाकिस्तान, बंगलादेश तथा भारत में चलाए जा रहे हैं। इनकी संख्या निरंतर बढ़ाई जा रही है। सन् 1989 में तालिबान की जीत के बाद तालिबानी विश्वास करने लगे 'हमने रूसियों को हराया है, अब हम किसी देश को भी हरा सकने में सक्षम हैं।'' प्रश्न यह उठता है कि ये तालिबान हैं कौन? उत्तर स्पष्ट है कि तालिबानों का स्रोत विभिन्न देशों में चल रहे मदरसे हैं। यही कारण है कि मदरसों को चलाने वाले उलेमा किसी भी देश की सरकारों द्वारा मदरसों में किसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं चाहते जिससे वे मन माफिक शिक्षा दे सकें। शिक्षा माध्यम एक ऐसा तरीका है जिससे मानसिकता बनती है। जिहादी मानसिकता बनाने में ये मदरसे अहम भूमिका निभाते हैं। मदरसों में पढ़ने वाले कोमल आयु के बच्चों को जिहाद, दारूल–इस्लाम, दारूल–हरब की जानकारी दे दी जाती है। यह उन मौलानाओं पर निर्भर होता है कि वे किस प्रकार की मानसिकता इन कोमल आयु के बच्चों में पैदा करें। वही बड़े होकर इस्लाम के प्रति निष्ठा रखते हुए इस्लामी पद्धति अपनाते हैं, तथा जिहाद के लिए उतावले हो जाते हैं। विभिन्न देशों की सरकारें जिहादियों से लड़ने में व्यस्त हैं। परन्तु एक जिहादी के मरने पर कई गुने जिहादी मैदान में उतर जाते हैं। **मदरसों में दी जाने वाली शिक्षा पर नज़र रखना ही एक मात्र उपाय है।**

◆◆◆

अध्याय-१३

मदरसों में प्रस्तावित सरकारी सुधार – संभावनाएं

देश की केन्द्रीय सरकार ने मदरसों के आधुनिकीकरण के लिए एक केन्द्रीय मदरसा बोर्ड बनाने की सलाह दी। दिनांक 3 दिसम्बर 2006 को इस्लामी बुद्धिजीवियों ने एक सेमिनार किया जिसमें इस प्रश्न पर अनेक उलेमाओं ने विचार विमर्श किया। मदरसों में आधुनिक शिक्षा की शुरूआत और केन्द्रीय मदरसा बोर्ड की ज़रूरत विषय पर प्रस्तावित **इस सम्मेलन में भारत के मानव संसाधन विकास मंत्री श्री अर्जुन सिंह मुख्य अतिथि थे।**

मदरसों में मौजूदा आवश्यकताओं के अनुसार आधुनिक शिक्षा की पढ़ाई के मद्देनज़र केन्द्रीय मदरसा बोर्ड के गठन के प्रयास पर मुस्लिम बुद्धिजीवियों ने सवाल उठा दिए। उन्हें आशंका है कि इसके ज़रिए मदरसों में दी जाने वाली मज़हबी तालीम (शिक्षा) में सरकारी हस्तक्षेप हो सकता है। हालांकि, सरकार ने इस तरह की सभी आशंकाओं को खारिज कर दिया। साथ–साथ मानव संसाधन विकास मंत्री अर्जुन सिंह ने मदरसों में दहशतगर्दी की शिक्षा की बात को ही सिरे से खारिज करते हुए उन्हें क्लीन चिट भी दे दी। **राष्ट्रीय अल्पसंख्यक शैक्षिक संस्थान आयोग (एनसीएमईआई) की ओर से मदरसों में आधुनिक शिक्षा और केन्द्रीय मदरसा बोर्ड के गठन की बाबत 4 दिसम्बर 2006 को आयोजित राष्ट्रीय सम्मेलन में मुस्लिम बुद्धिजीवियों ने सरकार को कटघरे में खड़ा कर दिया।** गुजरात से आए अब्दुल अहद तारापुरी ने कहा कि सरकार ने 60 साल में मुसलमानों के लिए कुछ नहीं किया, उस बीच अनेक सालों तक कांग्रेस की सरकारें थीं। उन्होंने अपनी पीड़ा यूं बयां की ––

''तू इधर–उधर की बात न कर,
यह बता कि काफिला क्यूं लूटा,
मुझे रहजनों से गिला नहीं,
तेरी रहबरी का सवाल है''।

उन्होंने कहा कि सरकार साफ करे कि मदरसा बोर्ड बनाने के पीछे उसकी मंशा क्या है ? सरकार को जामिया व दारुल उलूम को छेड़ने के बजाए उन लाखों बच्चों पर गौर करना चाहिए, जिन्हें अब तक स्कूल नहीं नसीब हुआ।

देवबंद दारूल उलूम से संबंधित अंजर शाह कश्मीरी ने आधुनिक

शिक्षा दिए जाने की पैरवी तो की, लेकिन उन्होंने सरकार से यह वायदा चाहा कि मदरसा बोर्ड के जरिए वह मज़हबी तालीम में कोई दखल नहीं देगी और सरकार मुसलमानों की शिक्षा को लेकर फ्रिकमंद है तो उसे मदरसों में पढ़ाने वाले शिक्षकों की तनख्वाह पर गौर करना चाहिए, जिन्होंने 26 साल पहले 58 रुपये में शुरू करके 2600 रुपये महीने पर नौकरी की। आयोग के इस प्रयास पर जमायते उलमाए हिंद के मौलाना महमूद मदनी ने भी 'दैनिक जागरण' से एक बातचीत में कहा कि, **''सरकार को मदरसों की फिक्र नहीं करनी चाहिए।** यदि वह वाकई मुस्लिम बच्चों की शिक्षा को लेकर फिक्रमंद है, तो उसे उनके लिए स्कूल, कॉलेज और प्रोफेशनल शिक्षा संस्थान खोलने चाहिए। हम भी उनकी मदद करेंगे।''

सम्मेलन में एनसीएमईआई के अध्यक्ष जस्टिस एम.एस.ए. सद्दीकी ने स्पष्ट किया कि राष्ट्रीय मदरसा बोर्ड में किसी मदरसे का रजिस्ट्रेशन या संबद्धता ज़रूरी नहीं होगा, साथ ही बोर्ड मदरसों की दीनी तालीम देने में कोई दखल न देगा, वह स्वतंत्र होगा कि क्या उसकी मंशा सरकार से मदद लेने की है या नहीं। **अलबत्ता, सरकार उसे विदेशों से आर्थिक मदद लेने और साथ–साथ आयकर आदि में छूट देकर उसकी मदद कर सकती है। (सउदी अरब द्वारा इतनी अधिक आर्थिक सहायता मिलती है, इसी कारण मदरसे चलाने के लिए सरकारी सहायता की आवश्यकता नहीं –लेखक)** उन्होंने यह कहा अगली सदी इल्म (ज्ञान) की है और तालीम के मैदान में मुसलमान 700 साल पीछे हैं, लिहाज़ा मदरसों में इस्लामी उलूम के साथ विज्ञान और तकनीकी पढ़ाई समय की ज़रूरत है। **उन्होंने इसके पीछे तर्क दिया, ''सहारा लेना ही पड़ता है दरिया का, क्योंकि मैं कतरा हूँ तन्हा बह नहीं सकता''। (क्या उलेमा मदरसों की पढ़ाई में वाकयी बदलाव लाना चाहते हैं जिससे उनका 700 साल का पिछड़ापन दूर हो सके, मुसलमानों का पिछड़ापन तो एक विश्वव्यापी समस्या है जिससे मुस्लिम जगत में उलेमाओं का वर्चस्व बना रहता है– लेखक)**

मानव संसाधन विकास मंत्री अर्जुन सिंह ने कहा कि मदरसा बोर्ड के लिए जो राय बनेगी, सरकार उस पर अमल के बारे में ज़रूर सोचेगी। उन्होंने कहा, ''मैं नहीं समझता कि देश के किसी मदरसे में दहशतगर्दी की शिक्षा दी जाती हो, वहाँ तो सिर्फ 4 प्रतिशत बच्चे (मुस्लिम बच्चे) ही शिक्षा पाते हैं। उन्होंने कहा कि मुस्लिम बच्चों को 11 वीं योजना में अच्छी तालीम मिल सके, इसलिए यह सम्मेलन अहम है। मानव संसाधन विकास राज्य मंत्री एम.ए.फातिमी ने भी स्पष्ट किया, ''मदरसा बोर्ड के ज़रिए सरकार दीनी तालिम में कोई दखल नहीं देना चाहती, बल्कि आधुनिक शिक्षा के ज़रिए उसका विस्तार करना चाहती है।'' (– साभार 'दैनिक जागरण)

ऑल इंडिया मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड (एआईएमपीएलबी) ने रविवार 3.12.2006 को संकेत दिए कि वह केन्द्रीय मदरसा बोर्ड गठित करने का विरोध करने के अपने फैसले पर दुबारा विचार कर सकता है, बशर्ते सरकार इस उद्देश्य के लिए संसद में रखे जाने विधेयक का मसौदा और विवरण देती है। राष्ट्रीय अल्पसंख्यक शैक्षणिक सस्थान द्वारा बुलाई गई एक बैठक के बाद एआईएमपीएलबी के वरिष्ठ सदस्य ने कहा कि इस मोड़ पर हम इस विचार का समर्थन नहीं कर सकते। नाम न जाहिर करने की शर्त पर इस बोर्ड के सदस्य ने कहा कि रविवार की बैठक में केवल मौखिक प्रस्ताव हमारे समक्ष रखे गए हैं। इसमें कुछ भी लिखित स्वरूप में नहीं था। इससे पहले बैठक में आयोग के अध्यक्ष एम.एस.ए.सद्दिकी ने कहा कि मदरसा बोर्ड को मान्यता देना स्वैच्छिक होना चाहिए और यह संसद के एक अधिनियम के तहत गठित किया जाना चाहिए तथा राज्यों में मदरसों पर कोई नियंत्रण नहीं होना चाहिए। उल्लेखनीय है कि मदरसा बोर्ड गठित करने के प्रस्ताव पर बहुत से मुस्लिम संगठनों ने एतराज जताया –

उपरिवर्णित बोर्डों की मीटिंग से स्पष्ट है कि कोई भी मुस्लिम बुद्धिजीवी अपने मदरसों में सरकार द्वारा हस्तक्षेप नहीं चाहते। इसका विस्तृत कारण जानना बहुत आवश्यक है क्योंकि मदरसों में दी गई शिक्षा में उलेमा तनिक भी बदलाव नहीं करना चाहते। **स्पष्ट है कि मुस्लिम बच्चों को इस्लामी शिक्षा केवल सातवीं शताब्दी वाली ही मिलती रहनी चाहिए। उनकी वही मानसिकता बनी रहनी चाहिए।** यदि सरकार मदरसों में दी जाने वाली शिक्षा को बिना छेड़े, अन्य, विशेषतया उनके लिए स्कूल तथा कॉलेज बनवाए तो उन्हें स्वीकार होगा। पाठक भलीभाँति जानते हैं कि हमारे देश में प्राथमिक शिक्षा निःशुल्क दी जाती है, साथ–साथ बच्चों को दिन का भोजन तथा वस्त्र तथा किताबें भी दी जाती हैं। इस शिक्षा में किसी जाति या संप्रदाय के लिए न तो कोई विशेष अवसर है और न किसी प्रकार का भेदभाव। **आश्चर्य की बात है कि उलेमा मुस्लिम बच्चों को इन शिक्षण संस्थानों में भेजने से कतराते हैं तथा वे तरह–तरह के काल्पनिक कारण ढूंढ निकालते हैं।**

दिल्ली से प्रकाशित 'दैनिक जागरण' (दि. 22.4.2007) के अनुसार अल्पसंख्यक आयोग के अध्यक्ष जस्टिस एम.एस.ए.सद्दीकी ने केन्द्रीय मानव संसाधन विकास मंत्री अर्जुन सिंह को हाल ही में सौंपी गई रिपोर्ट में **संसद द्वारा कानून बनाकर मदरसा बोर्ड के गठन की सिफारिश की है।**

अल्पसंख्यकों के बीच शिक्षा की दयनीय (तथाकथित–लेखक) स्थिति के मद्देनजर अल्पसंख्यक आयोग मदरसा शिक्षा के मानकीकरण व पाठ्यक्रम में बदलाव के जरिए उसे मुख्यधारा में जोड़े जाने के पक्ष में है। आयोग के अध्यक्ष जस्टिस सद्दीकी का मानना है कि मदरसा बोर्ड के गठन के बाद इस काम में तेज़ी

लाई जा सकेगी। **लिहाज़ा, आयोग ने कानून के ज़रिए एक प्रभावी बोर्ड के गठन की सिफारिश की है।** मदरसा बोर्ड को लेकर मुस्लिम विद्वानों (मुल्लाओं) में बरकारार आशंकाओं को खारिज करते हुए यह साफ किया गया कि मदरसों में आधुनिक शिक्षा की तत्काल जरूरत है। इसे मदरसों के बुनियादी ढाँचे व उनके उद्देश्यों में बदलाव की कोशिश नहीं समझा जाना चाहिए।

पाकिस्तान में मदरसे :–

अमेरिका में 9/11 की घटना के बाद पाकिस्तान के तत्कालीन राष्ट्रपति परवेज़ मुर्शरफ ने जनवरी 2002 को राष्ट्र को संबोधित अपने भाषण में कहा कि वे पाकिस्तान के मदरसों पर नियंत्रण करेंगे। इस पर पाकिस्तान के मौलानाओं ने घोर आपत्ति की तथा तर्क दिया कि मदरसे तो सिर्फ इस्लाम मज़हब की तालीम देने के लिए हैं तथा प्रारंभिक काल से चलाए जा रहे हैं। वे सरकार द्वारा किए गए हस्तक्षेप का विरोध करेंगे तथा इन मदरसों को पाकिस्तान सरकार के चंगुल में नहीं आने देंगे। सरकार के सभी प्रयत्न विफल हुए और अब 6–7 साल बाद इन मदरसों के तालीबानों द्वारा मालकन्द तथा स्वात घाटी में हथियारों द्वारा चलाया जा रहा जिहाद सबके सामने है। पाकिस्तान की सेना इन तालीबानों से युद्ध कर रही है तथा पुस्तक लिखने तक परिणाम स्पष्ट नहीं है।

1. अर्जुमंद आरा के विचार

अर्जुमंद आरा दिल्ली विश्वविद्यालय के कला संकाय में उर्दू पढ़ाती हैं। उनका एक लेख "Redefining Urdu Politics in India" नामक पुस्तक में जिसके संपादक अथर फारूखी हैं, ''मदरसाज़ एण्ड दि मेकिंग ऑफ मुस्लिम आइडेंटिटी'' शीर्षक से छपा है। लेखिका लिखती हैं :–

''देश का गृहमंत्रालय खुफिया एजेंसियों से मदरसों में पढ़ाई जाने वाली शिक्षा पर मिली सूचना के आधार पर नजर रखने पर बल देता है। इसके विपरीत मानव संसाधन विकास मंत्रालय का मानना है कि मदरसे तो साधारण शिक्षा के केन्द्र हैं जिनका योगदान देश में शिक्षा देना है।

लेखिका का मानना है कि भारत में, सरकारी आँकड़ों के अनुसार 5 लाख मदरसे चलाए जा रहे हैं जिनमें पांच करोड़ बच्चे पढ़ते हैं, इनमें मख्तबों की संख्या शामिल नहीं है।''

स्मरण हो इस्लामी विद्वान् शाहवलीउल्ला (1703–1762 ई.) के काल में यह पहला अवसर था जब छोटे वर्ग के मुसलमानों को मदरसे में पढ़ने के लिए प्रोत्साहन मिलने लगा। छोटे कुल के मुसलमान (राज़िल या अजलफ) जो अधिकांश अनपढ़ थे, मदरसों में दी जाने वाली शिक्षा मिलने से उनके आत्मविश्वास बढ़ाने में अभूतपूर्व सहायता मिली; तथा साथ–साथ उनके जीवनस्तर में भी सुधार आया। फलस्वरूप

मदरसों में दी जाने वाली शिक्षा में उनकी आस्था बढती गई। धीरे–धीरे मदरसों की शिक्षा में मज़हबी झुकाव को भी बढ़ाया जाने लगा, **विशेषकर हदीस की पढ़ाई ने मुसलमानों को कट्टर मज़हबी बनाने में सहायता की।** मुगल साम्राज्य के बलहीन हो जाने पर लगभग उसी काल में (18वीं शताब्दी के अंत में) धीरे–धीरे ऊँचे कुल के (अशरफ) मुसलमानों का समाज पर दबदबा भी कम होने लगा। ऊँचे कुल के (अशरफ) मुसमलानों ने हिन्दुस्तानी मुसलमानों पर अपना दबदबा जो मध्यकाल में मुस्लिम शासन के दौरान था, कायम रखने के मद्देनज़र नए–नए हथकंडे ढूंढने व अपनाने शुरू किए जिससे इन अशरफ मुसलमानों का हिन्दुस्तानी मुसलमानों पर दबादबा बरकरार बना रहे। इसके लिए उन्हें मज़हब का सहारा लेना सबसे अच्छा उपाय लगा। दूसरा कारण था कि इन हिन्दुस्तानी मुसलमानों को पाश्चात्य सभ्यता से भी दूर रखना आवश्यक समझा गया, ताकि ये मुसलमान कहीं अशरफ मुसलमानों की बराबरी न कर पाएं, फलस्वरूप मुस्लिम समाज में कहीं पूर्ण बदलाव न आ जाए। 19वीं शताब्दी से वहाबी व देवबंदियों ने राजनैतिक–मज़हबी मिलेजुले तौर–तरीके अपनाने शुरू किए जिससे हिन्दुस्थान में इस्लाम का वर्चस्व बना रहे। इसके लिए सबसे सरल रास्ता था, ''मुसलमानों की एक अलग मज़हबी पहचान बनाए रखना इसलिए आवश्यक हुआ एक ऐसी शिक्षा प्रणाली को आरंभ करना जिससे मज़हबी लोग अपने राजनैतिक मंसूबों को आगे बढ़ा पाएं। ऐसा प्रतीत होता है कि मदरसे इन्हीं मंसूबों के अंतर्गत इतनी बड़ी संख्या में स्थापित किए गए हैं। मदरसों में पढ़ाए जाने वाले पाठ्यक्रम का वर्णन पिछले अध्यायों में किया जा चुका है। **यद्यपि मुस्लिम मां–बाप अपने बच्चों को मदरसों में उनका जीवन स्तर ऊपर उठाने के मकसद से पढ़ने भेजते हैं परन्तु उलेमा व मौलाना द्वारा उनको इस्लाम की आक्रामक विचारधारा में रंग दिया जाता है।** मदरसों में पढ़ने के दौरान किसी भी आधुनिक साधन जैसे टी.वी., पत्रिकाओं, नए–नए खेलों व समाचार–पत्रों से उन्हें पूर्णतया वंचित रखा जाता है। उनकी दुनिया केवल मदरसे की चार–दीवारों तक ही सीमित रखी जाती है। इस विषय में विश्वविख्यात मुस्लिम विद्वान नदवा उलूम लखनऊ के रेक्टर सैयद अबुल हसन अली नदवी के विचारों की जानकारी दी जा चुकी है। इन मदरसों की चार–दीवारों में बंद रखकर पढ़ने वाले तालिबानों को देश में दी जाने वाली अन्य शिक्षा प्रणाली की जिसके पढ़ने से वास्तव में उनका जीवन–स्तर बेहतर बन सके, जानकारी तक नहीं मिलने दी जाती। इन तालिबानों के मां–बाप को केवल आसपास के मौलवियों की राय के आधार पर चलना पड़ता है। इस प्रकार मदरसों की शिक्षा प्रणाली तथा मदरसों की संख्या में निरंतर बढ़ोतरी ने मुस्लिम जगत की एक अलग मज़हबी पहचान बनाने का कार्य किया है। वास्तविकता यह है कि मदरसा शिक्षा प्रणाली इस्लामी जगत का सबसे प्रभावशाली हथियार बना दिया गया है।

गरीब घरों के लड़के मदरसों से शिक्षा प्राप्त करने के बाद छोटी–छोटी मज़हबी नौकरियां जैसे मस्जिद में अज़ान देना या छोटे मदरसों व मख्तबों में मदारिस (अध्यापक) की नौकरी कर लेते हैं। यही प्रथा निरंतर चलाई जा रही है तथा मदरसों की संख्या बढ़ाई जा रही है।

अर्जुमंद आरा लिखती हैं कि साधारणतया भारत में स्वतंत्रता मिलने के बाद तथा देश में प्रजातांत्रिक पद्धति अपनाने पर, मदरसा शिक्षा प्रणाली को दरकिनार करना था, परन्तु उलेमाओं ने ऐसा नहीं होने दिया। साथ–साथ देश की सरकारों ने भी मदरसों की ओर बेरुखी दिखाई।

अर्जुमंद आरा एक सीधा प्रश्न करती हैं कि जब देश में इतनी बड़ी संख्या में मदरसों से निकले तालिबान मौजूद हैं तथा इन सबको नौकरी नहीं दी जा सकती तो इतनी बड़ी संख्या में मदरसे स्थापित करने के पीछे आखिरकार असली मकसद क्या है ?

अर्जुमंद आरा द्वारा उठाया गया सवाल गंभीरता से लेना चाहिए। आखिर इतनी बड़ी संख्या में मदरसे क्यों स्थापित किए जा रहे हैं?

2. ज़हीर अली के विचार

मदरसों में सुधार लाने के संबंध में ज़हीर अली, जो एक राजनीतिक प्रवक्ता हैं, 'टाइम्स ऑफ इंडिया' (दिनांक 9.2.2007) के संपादकीय कॉलम में लिखते हैं कि भारत के मुसलमानों में गरीबी होने के साथ–साथ उनमें मुल्लाओं का ज़ोर निरंतर बना रहता है। ये मुल्ला मां–बाप पर जोर डालते हैं कि वे अपने बच्चों को केवल इस्लामी मदरसे में पढ़ने भेजें ताकि उनके बच्चों को निःशुल्क शिक्षा, तथा साथ–साथ खाने–पीने व रहने का प्रबंध होता रहे।

जहीर अली का मानना है कि निम्नलिखित कारणों से मदरसों के प्रस्तावित सुधारों में कोई लाभ न होगा।

1. मदरसा प्रणाली में सुधार लाने की बात से अनेक मुल्ला, मौलाना, उलेमा इत्यादि तरह–तरह के आरोप मढ़ने शुरू करेंगे। मुख्यतया सुधार लाने की सलाह उनके मज़हबी मामलों में सीधा–सीधा हस्तक्षेप मानी जाएगी।
2. वोट बैंक राजनीति के मद्देनज़र कोई भी राजनीतिक दल इस प्रस्ताव को स्वीकृति देने से कतराएगा।
3. यदि सरकार मदरसों के पाठ्यक्रम में फेरबदल करने में सफल भी हो जाए : यह कैसे निश्चित हो पाएगा कि यह बदलाव सच्ची भावनाओं से मुल्लाओं द्वारा छात्रों तक कार्यान्वित किए जाएंगें, आखिरकार शिक्षा तो उन्हीं को देनी है।
4. मदरसों के पाठ्यक्रम में बदलाव लाना चाहिए, केवल कह भर देने से इस्लाम का नज़रिया व तफसीर को जो मदरसों में छात्रों को मज़हबी आवश्यकता

कहकर पेश किया जाता है, ठीक करने अथवा बदलने की आवश्यकता पर तनिक भी चर्चा नहीं होती। मदरसों में प्रस्तावित बदलाव की सिफारिश से अभिप्राय मात्र नए विषय, जैसे विज्ञान की शिक्षा जोड़ने तक ही सीमित है।

मदरसों की वास्तव में समस्या उसमें पढ़ाया जाने वाला इस्लाम का सुधारविरोधी पक्ष तथा सैनिकीय व्याख्या है। मदरसों में कुरआन में वर्णित आयतों के सही मायने अरबी भाषा में नहीं पढ़ाए जाते। मदरसों में कुरआन को बिना जाने व समझे केवल तोते की भाँति रटाया जाता है। वास्तविकता यह है कि मुल्ला कुरआन में वर्णित संदेश तालिबानों को शब्दों के बिना मायने समझाए केवल अपनी तफसीर (टिप्पणियों) से देते हैं। आश्चर्य यह है कि मदरसों में मौलाना अबुल कलाम आज़ाद द्वारा लिखित कुरआन पर ''तफसीर; तरजुमा–उल–कुरआन'' और सैयद अहमद खां का इस्लाम पर भाष्य 'अल–खुतबत–उल अहमदिया'' को देश के मदरसों में नहीं पढ़ाया जाता। इसका कारण यह है कि ये दोनों पुस्तकें इस्लाम का आदर्श प्रगतिशील व व्यापक दर्शन प्रस्तुत करती हैं।

हदीस का पढ़ाना भारतवर्ष में मदरसों के पाठ्यक्रम का प्रमुख विषय है। स्मरण हो कि यह प्रथा 18वीं शताब्दी में मुगल शासन डगमगाने के समय **शाहवली उल्ला** ने ज़ोर देकर देश के इतिहास में पहली बार शुरू की थी। इसी पद्धति को उसके बेटे शाह अब्दुल अजीज तथा फिर अन्य उत्तराधिकारियों ने देश में निरंतर अपनाया। देवबंद (उत्तर प्रदेश) का विश्वविख्यात मदरसा उसी कड़ी का आज रूप है – लेखक

लेखक ज़हीर अली के अनुसार हदीस इस्लामी साहित्य का बड़ा संवेदनशील भाग है। उनका मानना है कि कुरआन की तो समस्त मुस्लिम जगत् में बराबर मान्यता है परन्तु इसके विपरीत हदीस समस्त मुस्लिम जगत में सामान्य नहीं है। यही हाल शरियत कानून का भी है, जिसको कुरआन आधारित कानून व इस्लाम का अभिन्न अंग बताकर मदरसों में पढ़ाया जाता हैं।

मदरसों के पाठ्यक्रम में बदलाव लाने की विशेष आवश्यकता है जिससे पढ़ाए जाने वाला इस्लामी साहित्य, जैसे कुरआन, में से केवल मानवीय अहिंसक तथा जनतांत्रिक पहलुओं के पढ़ाने पर बल देकर तालिबानों के समक्ष रखना चाहिए। इस्लाम की दूसरी अहम आवश्यकता है कि इसकी पुरानी *इजतिहाद* (सामूहिक बातचीत व सलाह मशवरा) की पद्धति को न केवल पुनः अपनाया जाए बल्कि उस पद्धति को प्राप्त करने के लिए प्रभावशाली तरीके अपनाकर उनका कार्यान्वयन किया जाए।

यह सब कहने के बावजूद प्रमुख मुद्दा यह है कि आखिर मदरसों में दी जाने वाली तालीम में बदलाव लाएगा कौन ? आज स्थिति यह है कि भारत स्थित मदरसों के संरक्षक यानि सउदी अरब के वहाबी (कट्टर मुसलमान) तथा अन्य जिनका

निजी तौर पर धन देने के पीछे भारत में **मदरसे स्थापित करने का अकेला मकसद है ''केवल कट्टरपंथी इस्लाम का भारत में पुनरुत्थान।''** यदि मदरसों में बदलाव लाया जाता है तो इन कट्टरपंथी देशों से व निजी तौर पर दी जाने वाली सहायता मिलना बंद हो जाएगा। परिणाम यह होगा कि ऐसी स्थिति आ जाने पर मदरसों को चलाने की जिम्मेदारी स्वयं भारतीय मुसलमानों पर आ जाएगी। जहीर अली का सुझाव है कि देश में स्थित वक्फ के अंतर्गत बड़ी–बड़ी जायदादें जो फिलहाल बुरी स्थिति में है तथा उनके रखरखाव में अनेक कमियां हैं, अल्पसंख्यकों का मंत्रालय उनके कार्यकलाप को सुधारे **तथा उनसे प्राप्त आय को केवल मुसलमानों के लिए शिक्षा संस्थानों पर खर्च किया जाए।**

ख्वाजा इखरम के विचार :

ख्वाज़ा इखरम जवाहर लाल नेहरु विश्वविद्यालय में भारतीय भाषाओं के विभाग में सहायक प्रोफेसर हैं। उनका लेख अंग्रेजी के दैनिक समाचार पत्र 'द पॉयनियर' दिनांक 19.08.2006 में छपा। उनके विचार निम्नलिखित हैं :–

1. आज भारत के मुसलमान दो दिशाओं में जाने वाले पारस्परिक विरोधी नुक्कड़ पर खड़े हैं। वे यह तय करने में असहाय दिखते हैं कि क्या वे अपने राजनैतिक व मज़हबी नेताओं (उलेमाओं) का हाथ पकड़ें रखें अन्यथा प्रगतिशील दिशा अपनाएं जिससे वे केवल वोट बैंक ही न बने रहें।

भारत के मुसलमानों के समक्ष यह एक विशाल चुनौती है तथा उन्हें तय करना चाहिए कि क्या वे भारत की मूल धारा में रम कर भारतीय बनेंगे? निःसन्देह भारतीय मुसलमानों में अनेकानेक अतिशिक्षित लोग भी हैं जिन्हें देश के मुस्लिम समाज का नेतृत्व करना चाहिए। परन्तु खेद की बात यह है कि मुस्लिम समाज पर उलेमाओं का ज़बरदस्त आधिपत्य होने के कारण ऐसे शिक्षित लोगों की एक नहीं चलती।

समय–समय पर जब कभी इन मज़हबी नेताओं (उलेमाओं) के समक्ष कोई चुनौती आती है तो वे तुरंत **'इस्लाम खतरे में है'** का सहारा लेकर उसको तटस्थ कर लेते हैं। उल्लेखनीय है कि मुस्लिम समाज का नेतृत्व आज भी मध्यकालीन युग का ही नज़रिया रखता है और यह पाकिस्तान की रूपरेखा के अनुकूल है।

भारत में चल रहे जिहादी आंतकवाद में 50 प्रतिशत से अधिक मुसलमान तो भारतीय ही हैं। बाकी पाकिस्तानी व बंगलादेशी हैं। पाकिस्तान की खुफिया एजेंसी आई.एस.आई. हिन्दुस्थान के विभिन्न भागों में राजनैतिक, आर्थिक स्थिरता तथा देश को समृद्धि की ओर बढ़ कर एक शक्ति की तरह उभरने के बीच क्रियाशील रहती है, जिससे यह देश शक्तिशाली बनने से रोका जा सके। आई.एस.आई. का ध्येय तो शायद हमारे देश को पिछली शताब्दियों में धकेल कर वहाबी देवंबंदी विचारधारा

के अंतर्गत देश के मुसलमानों को उसी विचारधरा में रमा कर उनकी भारतीय पहचान से अलग करना है।

उनका सुझाव है कि मस्जिदें केवल इबादत की जगह होनी चाहिए तथा इन्हें राजनीति से अलग रखने की आवश्यकता है।

ख्वाजा इखरम का यह भी मानना हैं कि अंततः हिन्दुस्तानी मुसलमान न तो अरबी मुसलमान बन सकते हैं और न वे कोई अन्य विदेशी मुस्लिम परस्त पहचान बना सकते हैं। हिन्दुस्थानी मुसलमानों की पहचान तो केवल हिन्दुस्थानी ही बनी रहेगी। यह कितना दुर्भाग्यपूर्ण है कि विभिन्न मज़हबी संस्थाओं द्वारा जो भी कार्यकलाप अपनाए जाते हैं, वे सब देश के मुसलमानों को कूपमण्डूकता एवं एक संकुचित विचारधारा के अंतर्गत बनाए रखते हैं जिससे हानि उन्हीं की होती है। आवश्यकता तो यह है कि वे अपने परिवारों को शिक्षित बनाएं तथा दकियानूसी विचारधारा को त्यागें। मुस्लिम महिलाओं तथा नई पीढ़ी के मुस्लिम युवकों को अपने पैरों में पड़ी बेड़ियों से मुक्त कराना चाहिए।

मुसलमानों को समय के अनुरूप चलकर एक प्रगतिशील व आधुनिक विचारधारा अपनानी चाहिए, घेट्टो में रहने के कारण बनी मानसिकता की जंजीरो को तोड़कर ऊपर उठना चाहिए, तथा देश की मुख्यधारा में सम्मिलित होकर समाहित हो जाना चाहिए। उन्हें अपनी दबी हुई सामर्थ्य शक्ति को उभारना चाहिए। देश के **मुसलमान आज जिस दोराहे पर खड़े हैं, उससे हट कर देश की मूल धारा में रमकर व प्रगतिशील रास्ता अपनाकर उन्हें देश को गौरवान्वित करने में लग जाना चाहिए और उसी में उनका स्वयं का कल्याण है।**

जिहाद ने ऐसी विषैली स्थिति पैदा कर दी है कि विश्व भर के प्रजातांत्रिक देशों में रहनेवाले प्रत्येक मुसलमान को अब शक की नज़र से देखा जाने लगा है। जिहाद की सफलता का एकमात्र कारण यह है कि प्रगतिशील मुसलमान खुलकर आगे बढ़कर तथा डटकर इन मदरसों में चलाए जाने वाले कार्यकलाप को चुनौती देने में अभी तक असमर्थ रहे हैं। ऐसा भी माना जाता है कि वे स्वयं भी भय की स्थिति में रहते हैं तथा डरते हैं कि उनका मुंह खोलना उन्हीं की जान न ले ले। कौन इसकी शुरूआत करे यह एक गंभीर प्रश्न है? केवल ***इजतिहाद*** की मूल इस्लामी प्रणाली को अपना कर उस पर कार्य करना ही एक प्रमुख उपाय है। परन्तु क्या उलेमा शताब्दियों से बंधक बनाए गए इस्लामी मज़हब को आसानी से अपने चंगुल से बाहर आने देंगे? यह समझ लें कि मदरसों की बढ़ती संख्या ही उनकी शक्ति का प्रमुख स्रोत है।

स्मरण रहे कि चाहे वह ओसामा बिन लादेन हो, मुल्ला उमर हो या फिर अलकायदा के अन्य प्रमुख नेता, या फिर अन्य सभी जिहादी संगठनों के बड़े–बड़े मौलाना, ये सभी मदरसों में दी जाने वाली वहाबी

/देवबंदी तालीम प्राप्त तालीबान हैं तथा सभी जिहादी मानसिकता पैदा करने वाले मदरसों की देन हैं। ये सभी इस्लाम के विद्वान् हैं। यद्यपि संगठन अलग–अलग हैं परंतु ये सभी एक–दूसरे के पूरक हैं।

यह भी जानना आवश्यक है कि मदरसे चाहे संसार के किसी भी देश में हों, यानि पाकिस्तान, अफगानिस्तान, भारत, बंगलादेश, सउदी अरब तथा अन्य देशों में दी जाने वाली तालीम एक–सी होती है। स्पष्ट है कि वे सभी एक जैसी मानसिकता पैदा करते हैं। भारत के उलेमाओं द्वारा बुलंद आवाज़ में घोषणा करना कि भारत के मदरसे जिहादी पैदा नहीं करते, सरासर इस्लामी मान्यताओं के विरुद्ध है, जिस पर विश्वास नहीं किया जाना चाहिए। भारत के उलेमाओं द्वारा ऐसा तर्क देना स्वयं अपने आप में जिहाद का ही एक अहम रूप है। स्मरण हो कि दिल्ली स्थित **शाह वली उल्ला** (18 वीं शताब्दी) द्वारा स्थापित मदरसा रहीमियाँ में पढ़े सईद अहमद तथा सैंकड़ों अन्य मौलवियों, मुल्लाओं ने 2400 कि.मी. पैदल दुर्गम मार्गों से चलकर उत्तर–पश्चिमी सीमावार्ती भागों में 19वीं शताब्दी में तलवारों से लड़कर महाराजा रणजीत सिंह की फौज के विरुद्ध जिहाद किया था।

यह भी स्मरण रखना चाहिए कि विश्वविख्यात् दारुल उलूम देवबंद (उत्तर प्रदेश) के संस्थापक मौलाना नानौतवी स्वयं उसी मदरसे के प्रसिद्ध विद्वान् थे। पाकिस्तान में साठ प्रतिशत से अधिक मदरसे देवबंदी प्रणाली के हैं, जिनके पढ़े तालीबान आज विश्व के सभी देशों में जिहाद कर रहे हैं। पाकिस्तान स्वतः भी इस कट्टरपंथी जिहाद के चंगुल में फँसा हुआ है तथा यह इस्लामी मदरसों से पढ़े विद्वान् (तालीबान) स्वात घाटी में शरिया कानून सफलता से स्थापित करने के पश्चात् राजधानी इस्लामाबाद की ओर बढ़ते जा रहे हैं। अफगानिस्तान में चलाया गया जिहाद भी इन्हीं के द्वारा था, जिसकी जानकारी दी जा चुकी है। ऐसी स्थिति में क्या यह संभव है कि केवल भारत के मदरसे जिहादी मानसिकता पैदा नहीं करते जबकि भारत में गठित अनेक विस्फोटों में उन्हीं का हाथ पाया गया। ऐसा लगता है कि हिन्दुस्थान में फिलहाल परिस्थिति खुल्लमखुल्ला जिहाद करने की नहीं है, इसी कारण खुफिया एजेंसियों द्वारा दी गई सूचना के आधार पर कह सकते हैं कि देश में सैंकड़ों स्लीपर सैल कोने–कोने में तैयार हैं। ये सभी मदरसों में पढ़े हैं तथा जिन्हें कभी भी सक्रिय किया जा सकता हैं। उलेमाओं के यही तो हथियार हैं जो इशारा मिलते ही फिदायिन बन कर अपनी जान न्यौछावर कर सकते हैं। अंग्रेज़ी दैनिक समाचार–पत्र 'द पॉयनियर' में दिनांक 3.4.2009 को अमेरिका के अफगानिस्तान स्थित कमाण्डर जरनल पेट्रियोट्स ने अमेरिका की सिनेट आर्म सर्विसेस कमेटी के समक्ष बयान देते हुए कहा कि पाकिस्तान के कुछ नेताओं का मानना है कि वहाँ के जिहादी ग्रुप भारत के विरुद्ध लड़ने के लिए एक अहम शक्ति है। पुस्तक के अध्याय 5 में बता चुके हैं कि मध्य एशिया स्थित खाड़ी के देशों द्वारा उत्पादित कच्चे

तेल की कीमतों में यकायक उछाल आने से इन देशों, विशेषकर सउदी अरब की तिजोरियां डॉलरों से छलकने लगी थीं तथा सउदी अरब से सभी अन्य मुस्लिम देशों, जिन्होंने शरिया कानून लागू करने का आश्वासन दिया उन्हें बेहिसाब पैसा दिया जाने लगा। फलस्वरूप यकायक बड़ी संख्या में मदरसे स्थापित किए जाने लगे। यही विचार चार्ल्स ऐलिन अपनी पुस्तक 'गॉडस् टेरोरिस्ट' में लिखते हैं कि सन् 1973 की अरब–इस्राइल लड़ाई के बाद तेल निर्यात करने वाले मुस्लिम देशों के संगठन (ओ.पी.ई.सी.) द्वारा यकायक तेल की कमतों में बढ़ोतरी की गईं। नतीजतन सउदी अरब के पास अथाह संपत्ति आई जिससे वहाबी अधिकारियों ने विभिन्न मुल्कों में वहाबी मानसिकता बढ़ाने वाले पर्चे बाँटे तथा बड़ी संख्या में मदरसे तथा मस्जिदें स्थापित करवाए। इसने उदारता से एशिया के सुन्नी देशों को अधिकाधिक पैसा दिया। (पृष्ठ 258–259) चार्ल्स ऐलिन का मानना है कि जब तक विश्व के विभिन्न देश सउदी अरब से तेल खरीदते रहेंगे, वहाबी इस्लाम का वर्चस्व लगातार बढ़ता रहेगा (पृ. 295)। एक अन्य लेखक **रज़ा एफ.शफा द्वारा लिखित पुस्तक 'इनसाइड इस्लाम' के अनुसार** सउदी अरब ने सन् 1973 के बाद 87 बिलियन अमेरिकी डॉलर मुस्लिम देशों को वहाबी इस्लाम की मान्यताएं बढ़ाने के लिए दिए, जिससे मस्जिदें तथा मदरसे स्थापित किए जा सकें। सउदी अरब द्वारा दिखाई गई यह दरियादिली केवल मुसलमानों में मज़हबी कट्टरता बढ़ाने व इस्लाम का वर्चस्व बढ़ाने के लिए दी गई। यह कट्टर इस्लामी विचारधारा हर प्रकार से प्रजातांत्रिक देशों की विचारधाराओं तथा मान्यताओं जैसे स्वतंत्रता, सहअस्तित्व इत्यादि के विपरीत थी। परिणाम सब के सामने है।

हिन्दुस्थान के मुसलमानों के समक्ष एक विचित्र स्थिति है कि क्या वे बाकी कौमों के विपरीत आधुनिकता को नकारें अथवा प्रगतिशील हो जाएं या फिर अपने मुल्लाओं के कहने पर चलें जिन्हें देश के मुसलमानों की आर्थिक हालत की तनिक भी चिंता नहीं है।

देश के मुसलमानों के समक्ष एक चुनौती यह भी है कि क्या वे मूल रूप से देश की मूल धारा में समावेश कर लें। देश के मुसलमानों में से अनेक विद्वान्, शिक्षित हैं जिन्हें वास्तव में मुस्लिम समाज का नेतृत्व संभालना चाहिए परंतु खेद यह है कि मज़हब के ठेकेदार उनके प्रयासों को विफल कर देते हैं।

अनेक बार जब भी इस चुनौती को विद्वानों ने अपने हाथ में लेना चाहा तभी मज़हबी नेताओं ने मध्यकालीन तौर तरीके अपनाने शुरू किए। (आज देश में पांच लाख से अधिक मदरसे बताए जाते हैं और यह उसी मानसिकता की ओर संकेत करता है) मुसलमानों को स्वयं मस्जिद को केवल इबादत का स्थान बनाना चाहिए तथा राजनीति से इसे नहीं जोड़ना चाहिए।

स्पष्ट है कि जब तक मुस्लिम समाज इन कट्टर मज़हबियों के चंगुल से अपने

आपको आज़ाद नहीं करता तब तक कोई तबदीली संभव नहीं। इसी परिप्रेक्ष्य में हमें इन मदरसों की स्थापना और इनकी बेहिसाब बढ़ती संख्या को समझना चाहिए कि कहीं ये सब बढ़ते हुए मदरसे जिहाद की नर्सरियां तो नहीं ?

हमारी सीमा पर स्थिति धीरे–धीरे बिगड़ेगी। ऐसे में हमें मोहम्मद इकबाल की ये पंक्तियां याद करनी चाहिए :

वतन की फ़िक्र कर नादाँ! मुसीबत आने वाली है।
तेरी बर्बादियों के मश्वरे हैं, आस्मानों में ।।
न समझोगे तो मिट जाओगे ए हिन्दोस्ताँ वालों।
तुम्हारी दास्ताँ तक भी न होगी, दास्तानों में।।

◆◆◆

यहूदियों के साथ मदीना की संधि 623 ई.

मुख्य प्रावधान निम्नलिखित थे :–

'अल्लाह के नाम में, जो कृपालु है, जो दयालु है ! पैगम्बर मोहम्मद का चार्टर, ईमान लाने वालों की ओर से और ईमान के लिए जो कोई अन्य भी उनके साथ शामिल हो और उनके साथ प्रयासरत हो। शरणार्थी रक्तपात की कीमत परस्पर चुकता करेंगे और अपने बंदियों को सम्मानपूर्वक छुड़ाएंगे।

मदीना की विभिन्न जनजातियों (विस्तृत नामावली) के ईमान लाने वाले ऐसा ही करेंगे। जो कोई भी विद्रोही है या शत्रुता और राजद्रोह फैलाने की कोशिश करता है, ऐसा प्रत्येक व्यक्ति उसके विरुद्ध है, ऐसा माना जाएगा, भले ही वह पुत्र ही क्यों न हो। ईमान न लाने वाले की हत्या के बदले में किसी ईमान लाने वाले को मारा नहीं जाएगा; साथ ही किसी ईमान न लाने वाले को एक ईमान लाने वाले के विरुद्ध सहारा नहीं दिया जाएगा। यहूदियों में से जो कोई भी हमारे पीछे चलेगा, उसे सहायता और मदद प्राप्त होगी, उन्हें चोट नहीं पहुँचाई जाएगी, और न ही उनके विरुद्ध शत्रु को सहायता दी जाएगी। कोई ईमान न लाने वाला मक्का के लोगों की शारीरिक या उनकी संपत्ति के बचाव की मंजूरी न देगा, और न ही ईमान लाने वालों और उनके बीच मध्यस्थता करेगा। जो कोई भी ईमान लाने वाले को धोखे से मारेगा तो मुसलमान उसके विरुद्ध एकजुट हो जाएंगे।

''दोनों पक्षों के शत्रु होने पर यहूदी लोग मुसमलानों के साथ मिल कर योगदान देंगे। मदीना की अनेक जनजातियों के साथ मिलकर यहूदी वंश ईमान लाने वालों के साथ एकजुट हैं। यहूदी लोग अपने मज़हब को मानेंगे और मुसलमान अपने को। जैसा यहूदियों के साथ वैसा उनके समर्थकों के साथ। मोहम्मद की अनुमति के बिना कोई भी युद्ध आरंभ नहीं करेगा; किन्तु इससे किसी को वैध बदला लेने में रुकावट नहीं होगी। यहूदी लोग अपना खर्च वहन करेंगे, मुसलमान अपना; किन्तु आक्रमण होने पर प्रत्येक अन्य की सहायता करेगा। मदीना पवित्र होगा और इस संधि में शामिल सबके लिए अनुल्लंघनीय होगा।

रक्षित आगन्तुक वैसे ही माने जाएंगे जैसे उनके रक्षक हैं; किन्तु

किसी भी स्त्री का उसके रिश्तेदार की सहमति के बिना स्वागत नहीं किया जाएगा। विवाद और झगड़े अल्लाह और उसके पैगम्बर को निर्णयार्थ प्रस्तुत किए जाएंगे। कोई भी मक्का के लोगों या उनके मित्रों से मेल–मिलाप नहीं करेगा; क्योंकि वस्तुतः वचनबद्ध पक्षकार प्रत्येक उसके विरुद्ध जो मदीना के लिए खतरा बनेगा, एक साथ बंधे हैं। युद्ध और शांति उभयनिष्ठ बनाए जाएंगे। वह जो आगे बढ़ेगा सुरक्षित होगा; और वह जो घर में बैठेगा सुरक्षित होगा;–उसको छोड़कर जो उल्लंघन करेगा और गलती करेगा और वस्तुतः अल्लाह नेक (सदाचारी) और देवोपम का रक्षक है; और मोहम्मद उसका पैगम्बर है।''

◆◆◆

अल–हुदयबिया की संधि 628 ई.

पैगम्बर मोहम्मद और कुरैश के बीच

सन् 628 ई. पैगम्बर मोहम्मद के मन में मक्का जाकर हज यात्रा की इच्छा उठी। वे अपने 1500 साथियों के साथ धुल कादा के पवित्र महीने (फरवरी 628 ई) में मक्का के लिए रवाना हुए। जब वह मक्का के निकट पहुँचे तो वहाँ के निवासियों ने मक्का में घुसने की इजाज़त नहीं दी। पैगम्बर को अल–हुदयबिया स्थान पर अपने साथियों के साथ रुकना पड़ा तथा अपने दूत ओथमान नामक व्यक्ति को मक्का निवासियों से मिलने भेजा। मक्का पहुँच कर पैगम्बर के आने का मकसद स्पष्ट किया। मक्का निवासियों ने ओथमान को तो हज करने की इजाज़त दी, परन्तु पैगम्बर मोहम्मद को इस वर्ष मक्का में प्रवेश करने की इजाज़त न मिली। बातचीत के बाद यह तय हुआ कि मक्का निवासियों के साथ एक संधि की जाए जिसके लिए मक्का के कुरैश समुदाय के सुहैल नामक व्यक्ति को शांति स्थापित करने की संधि पारित करने का अधिकार दिया। फलस्वरूप 10 वर्ष की शांति का प्रावधान तय हुआ जिसका वर्णन निम्नलिखित है तथा इसे अल–हुदयबिया की संधि के नाम से जाना जाता है।

पैगम्बर मोहम्मद ने अपने दामाद अली से इस प्रकार लिखवाना शुरू किया।

और इस प्रकार उसने पैग्मंवार (मोहम्मद) शुरु किया :–

'अल्लाह के नाम में, परम कृपालु और दयालु' – रुकिए! सुहैल ने यूँ कहा 'जहाँ अल्लाह है, उसे हम जानते हैं; किन्तु नया नाम, हम इसे नहीं जानते। जैसा, हमने सदा कहा है, कहिए, हे अल्लाह तेरे नाम में! पैगम्बर मोहम्मद ने मान लिया। उन्होंने कहा – 'लिखिए'

'हे अल्लाह ! तेरे नाम में – ये शांति की शर्तें हैं – अल्लाह के पैगम्बर मोहम्मद और .... के मध्य' 'फिर रुकिए'! सुहैल ने हस्तक्षेप किया ' यदि तुम वहीं हो तो जो तुम कहते हो, तो मैंने तुम्हारे विरुद्ध शस्त्र न उठाए होते। रीति–रिवाज़ के अनुसार, अपना नाम और अपने पिता का नाम, लिखिए'। मोहम्मद ने शान्त रहकर इसे माना तथा कहा 'तो फिर लिखिए' – ''अब्दुल्लाह के पुत्र मोहम्मद और अमर के पुत्र सुहैल के बीच। दस वर्षों तक युद्ध रुका रहेगा। जो कोई भी मोहम्मद के साथ आना चाहेगा या उसके साथ संधि करना चाहेगा, ऐसा करने को स्वतंत्र होगा। यदि कोई अपने संरक्षक की अनुमति के बिना मोहम्मद के

साथ मिलना चाहेगा, उसे उसके संरक्षक के पास वापिस भेज दिया जाएगा; किन्तु यदि मोहम्मद के कोई अनुयायी कुरैशों में मिलना चाहेंगे तो उन्हें लौटाया नहीं जाएगा। शहर में प्रवेश किए बिना मोहम्मद इस वर्ष चले जाएंगे। अगले वर्ष, मोहम्मद मक्का आ सकेंगे, वह और उसके अनुयायी तीन दिनों के लिए, जिस दौरान कुरैश चले जाएंगे और शहर उनके हवाले कर देंगे। किन्तु वे इसमें किसी शस्त्र को लेकर प्रवेश नहीं कर सकेंगे, यात्रियों के सिवाए अर्थात् प्रत्येक के पास एक म्यान में रखी तलवार। इस संधि के साक्षी हैं – अबू बक्र आदि।

◆◆◆